साहित्य अमृत

फाल्गुन-चैत्र, संवत्-२०८० ❖ मार्च २०२४ **मासिक**

वर्ष-२९ ❖ अंक-८ ❖ पृष्ठ ८४ | यू.जी.सी.-केयर लिस्ट में उल्लिखित | RNI No. 62112/95 | ISSN 2455-1171

संस्थापक संपादक

पं. विद्यानिवास मिश्र

निवर्तमान संपादक

डॉ. लक्ष्मीमल्ल सिंघवी

श्री त्रिलोकी नाथ चतुर्वेदी

संस्थापक संपादक (प्रबंध)

श्री श्यामसुंदर

प्रबंध संपादक

पीयूष कुमार

संपादक

लक्ष्मी शंकर वाजपेयी

संयुक्त संपादक

डॉ. हेमंत कुकरेती

उप संपादक

उर्वशी अग्रवाल 'उर्वी'

कार्यालय

४/१९, आसफ अली रोड, नई दिल्ली-०२

फोन : ०११-२३२८९७७७

०८४४८६१२२६९

इ-मेल : sahityaamrit@gmail.com

शुल्क

एक अंक—₹ ३०

वार्षिक (व्यक्तियों के लिए)—₹ ३००

वार्षिक (संस्थाओं/पुस्तकालयों के लिए)—₹ ४००

विदेश में

एक अंक—चार यू.एस. डॉलर (US$4)

वार्षिक—पैंतालीस यू.एस. डॉलर (US$45)

साहित्य अमृत के बैंक खाते का विवरण

बैंक ऑफ इंडिया

खाता सं. : **600120110001052**

IFSC : **BKID0006001**

प्रकाशक, मुद्रक तथा स्वत्वाधिकारी पीयूष कुमार द्वारा ४/१९, आसफ अली रोड, नई दिल्ली-२ से प्रकाशित एवं न्यू प्रिंट इंडिया प्रा.लि., ८/४-बी, साहिबाबाद इंडस्ट्रियल एरिया, साइट-IV, गाजियाबाद-२०१०१० द्वारा मुद्रित।

इस अंक में

✍ **संपादकीय**

साहित्य और सिनेमा की दूरी… ४

✍ **प्रतिस्मृति**

हमके ओढ़ा द चदरिया हो, चलने की बेरिया/ *उषाकिरण खान* ६

✍ **कहानी**

प्यार और जिंदगी/ *अमरनाथ अग्रवाल* १०

काकी/ *रचना मीना* १६

कालचक्र/ *एम.डी. मिश्रा 'आनंद'* २२

किराएदार माँ-बाप/ *प्रियंका पाठक* ४०

गोपनीय मिशन/ *सुरेश बाबू मिश्रा* ५०

यमराज की व्यथा/ *प्रदीप सिंह गुसाईं* ७५

✍ **लघुकथा**

वक्त अपनों के लिए/ *डोली शाह* २६

पाँच लघुकथाएँ/ *रामनिवास 'मानव'* २८

क्या बुराई है/ *डोली शाह* ५४

कल्पनाओं की दुनिया/ *डोली शाह* ६९

✍ **आलेख**

दक्षिण अयोध्या में 'भद्रादि रामन्ना' के प्रभु राम/ *पद्मावती* १२

तब समझ पाता हूँ मेरी माँ के राम/ *राजशेखर व्यास* २०

तुलसी-पथ की प्रवर्तक : रत्नावली/ *नित्यानंद श्रीवास्तव* ३०

शिवानी : लोकप्रिय सर्जना का पुनर्पाठ/ *वेदप्रकाश अमिताभ* ४४

प्रकृति-संरक्षण में साहित्य की भूमिका/ भावना शेखर ५२

साझी संस्कृति की विरासत और जम्मू-कश्मीर का साहित्य/ *बबिता सिंह* ७०

✍ **कविता**

गीत-गजल/ *बालस्वरूप राही* ९

नारी विमर्श के दोहे/ *सुबोध श्रीवास्तव* ११

रंगों का त्योहार/ *गोविंद भारद्वाज* १९

प्राण-प्रतिष्ठा हर्ष / *दिनेश भारद्वाज* २१

देख लेते एक बार/ *बी.एल. गौड़* २७

फागुन गीत/ *शकुंतला अग्रवाल शकुन* ३३

पिचकारी मन की भरो/ *प्रीति चौधरी 'प्रीत'* ३७

व्यथा बोझ से व्याकुल पतझर / *विनय मिश्र* ४३

भारतवासी/ *शरद नारायण खरे* ४६

नीति के दोहे/ *हरदान हर्ष* ६४

दोहे-नवगीत/ *योगेंद्र वर्मा 'व्योम'* ६५

भाप बनता पसीना/ *राजीव कुमार 'त्रिगर्ती'* ७४

✍ **राम झरोखे बैठ के**

पेड़ की पीड़ा/ *गोपाल चतुर्वेदी* ३४

✍ **लोक-साहित्य**

गद्दी जनजाति के लोकनाट्य/ *भरत सिंह* ३८

✍ **व्यंग्य**

नंदू रंगलाल की होली, चिंतन के रंगीन रंगताल में/ *आलोक सक्सेना* ४८

✍ **साहित्य का भारतीय परिपार्श्व**

रीत/ *मधुकर धर्मापुरीकर* ५५

✍ **यात्रा-वृत्तांत**

इंडोनेशिया की यात्रा/ *शेफालिका सिन्हा* ५८

✍ **ललित-निबंध**

ठंडा तेल/ *हरिशंकर राढ़ी* ६२

✍ **साहित्य का विश्व परिपार्श्व**

आधी रात का स्वप्न/ *विलियम शेक्सपियर* ६६

✍ **बाल-संसार**

जंगल वाली लड़की/ *बद्री प्रसाद वर्मा 'अनजान'* ४७

रंग-बिरंगी होली/ *मंजरी शुक्ला* ६०

नया सवेरा आएगा/ *कमलेंद्र कुमार श्रीवास्तव* ७८

✍ वर्ग-पहेली ७९

✍ पाठकों की प्रतिक्रियाएँ ८०

✍ साहित्यिक गतिविधियाँ ८१

साहित्य अमृत में प्रकाशित लेखों में व्यक्त विचार एवं दृष्टिकोण संबंधित लेखक के हैं। संपादक अथवा प्रकाशक का उनसे सहमत होना आवश्यक नहीं है।

संपादकीय

साहित्य और सिनेमा की दूरी···

अमेरिका का एक नगर, यहाँ हर सप्ताह एक दिन एक 'वरिष्ठ नागरिक केंद्र' में प्रवासी भारतीय एवं भारतवंशी लोग जुटते हैं, कुछ सूचनाएँ, कुछ चर्चाएँ, किसी विशिष्ट व्यक्ति (प्राय: भारत से आए) का व्याख्यान, योगाभ्यास आदि तथा सहभोज इसी का एक अनिवार्य हिस्सा है। एक गीत जिसे सब सामूहिक प्रार्थना के रूप में बड़ी श्रद्धा से सुनते हैं—

हम न सोचें हमें क्या मिला है
हम ये सोचें किया क्या है अर्पण
फूल खुशियों के बाँटें सभी को
सबका जीवन ही बन जाए मधुवन
अपनी करुणा का जल तू बहा के
कर दे पावन हरेक मन का कोना!
इतनी शक्ति हमें देना दाता
मन का विश्वास कमजोर हो ना!!

यह एक फिल्मी गीत है, किंतु यह हर सप्ताह इस आयोजन का अनिवार्य अंग बनता है। पूरा गीत है ही इतना प्रेरक और हृदयस्पर्शी। आयोजन में शामिल व्यक्तियों में शायद ही किसी को फिल्म का नाम याद हो अथवा गीतकार का नाम ज्ञात हो, लेकिन यह गीत उन सबके लिए एक उत्कृष्ट प्रार्थना है।

यही गीत सैकड़ों विद्यालयों में प्रार्थना के रूप में गाया जाता है। अमरीका या कनाडा में अन्य प्रकार के साप्ताहिक या पाक्षिक आयोजनों में इसी तरह कोई-न-कोई प्रेरक फिल्मी गीत आयोजन का हिस्सा बनता है—चाहे वह 'हमको मन की शक्ति देना, मन विजय करें' या 'तू प्यार का सागर है' या अन्य कोई गीत हो। एक और गीत को याद करें—

ऐ मालिक तेरे बंदे हम
ऐसे हों हमारे करम
नेकी पर चलें
और बदी से टलें
ताकि हँसते हुए,
निकले दम··· !

यह फिल्मी गीत भी अपने प्रेरक संदेश के कारण देशभर के सैकड़ों विद्यालयों में प्रार्थना के रूप में गाया जाता रहा है। इसी तरह के कुछ अन्य फिल्मी गीत भी विद्यालयों की सामूहिक प्रार्थना के रूप में गाए जाते रहे हैं।

आइए, कुछ देर के लिए राजपथ, जो अब 'कर्तव्यपथ' बन गया है, गणतंत्र दिवस समारोह को याद करें। सुबह से ही लाउडस्पीकर पर देशभक्ति के गीत गूँजने लगते हैं। इन देशभक्ति-गीतों में एक-दो अपवादों को छोड़कर प्राय: फिल्मी गीत ही होते हैं—

हमने सदियों में ये आजादी की नेमत पाई है
सैकड़ों कुर्बानियाँ देकर ये दौलत पाई है
मुसकराकर खाई हैं सीनों पे अपने गोलियाँ
कितने वीरानों से गुजरे हैं तो जन्नत पाई है···

एक-एक शब्द रोमांच से भर देता है।

इसी प्रकार—

- *कर चले हम फिदा जानो तन साथियो···*
- *हम लाए हैं तूफान से कश्ती निकाल के···*
- *आओ बच्चो तुम्हें दिखाएँ झाँकी हिंदुस्तान की···*
- *जहाँ डाल-डाल पर सोने की चिड़ियाँ करती हैं बसेरा, वो भारत देश है मेरा।*

सूची बहुत लंबी है। इन्हीं गीतों से पूरे वातावरण में देशभक्ति की सुगंध फैल जाती है। शहीदों का स्मरण हो आता है। स्वाधीनता संग्राम में किए गए बलिदान आँखों में झाँकने लगते हैं। युवा पीढ़ी के लिए ऐसे देशभक्तिपूर्ण गीत अत्यंत प्रेरक बन जाते हैं।

ठीक यही दृश्य लालकिले में आयोजित स्वाधीनता समारोह के शुभारंभ से पहले नजर आता है। थलसेना, वायुसेना और नौसेना के अनेक समारोहों में भी फिल्मी देशभक्ति गीत ही समारोह में देशप्रेम का रंग घोलते हैं।

देशभक्ति गीतों से भक्तिगीतों की ओर चलें तो प्रतिदिन करोड़ों भारतीयों के दिन का शुभारंभ भक्तिगीतों से होता है। इन भक्तिगीतों में भी बहुत बड़ा हिस्सा फिल्मी भजनों का होता है—

- *मन तड़पत हरि दर्शन को आज···*
- *बड़ी देर भई नंदलाला···*
- *हे रोम-रोम में बसने वाले राम···*
- *तुम्हीं हो माता, पिता तुम्हीं हो···*

भक्तिगीतों की भी बहुत लंबी सूची है। जीवन का कोई भी क्षेत्र हो, कोई भी अवसर हो, फिल्मी गीत हमारे साथ-साथ चलते हैं। क्या आपने ऐसी कोई भी बारात देखी है, जहाँ फिल्मी गीत पूरे जुलूस में साथ-साथ न चलते हों। किसी भी नगर के, किसी भी मोहल्ले में लाउडस्पीकर पर फिल्मी गीतों का बजना ही विवाह या अन्य किसी शुभ आयोजन का सूचक हुआ करता है। कोई भी जन्मदिन बिना 'बार-बार दिन ये आए बार-बार दिल ये गाए, तू जिये हजारों साल···' गीत के पूरा हो सकता है!

हमारे जीवन में फिल्मी गीतों का कितना गहरा प्रभाव है, इसका एक मार्मिक उदाहरण देखने योग्य है। किसी कस्बे का एक व्यक्ति घोर निराशा की स्थिति में आत्महत्या के इरादे से रेल की पटरी पर जाकर लेट गया। कुछ ही देर में दूर कहीं बज रहे रेडियो या ट्रांजिस्टर से प्रसारित हो रहे गीत की पंक्तियाँ उसके कानों में पड़ीं—

गाड़ी का नाम, न कर बदनाम
पटरी पर रख के सर को
हिम्मत न हार, कर इंतजार,
आ लौट जाएँ घर को
वो रात जा रही है,
वो सुबह आ रही है!
गाड़ी बुला रही है!!

इन पंक्तियों ने उस व्यक्ति को पुकारा और वह पटरी से उठ खड़ा हुआ। रेलगाड़ी आई, वह रेलगाड़ी को गुजरता देखता रहा, फिर घर लौट गया। बड़ी मुश्किलों से उसने इस गीत के रचनाकार का नाम पता किया

और गीताकार को पत्र लिखकर अपनी जान बचाने के लिए उसका आभार व्यक्त किया। माना कि यह फिल्मी गीत था, किंतु कविता में इतना प्रभाव था कि उसने आत्महत्या का विचार त्याग दिया। गंभीरता से विचार करें तो फिल्मी गीतों ने करोड़ों लोगों का न केवल मनोरंजन किया है, वरन् उनकी जिंदगी को भी किसी-न-किसी रूप में प्रभावित किया है। फिर भी यह विचारणीय है कि फिल्मी गीतकारों के प्रति साहित्य-जगत् में, विशेषकर हिंदी में, उपेक्षा का ही भाव रहा। श्रेष्ठ-से-श्रेष्ठ फिल्मी गीत को कभी साहित्यिक कविता के समकक्ष नहीं माना गया। यही कारण है कि कवियों ने भी सिनेमा से दूरी बनाकर रखी। प्राय: फिल्म निर्माताओं ने उन्हें अपनी फिल्मों में लिखने के लिए मनाया। कुछ ही गीतकार ऐसे हैं, जो फिल्म-जगत् में रुके अन्यथा नीरजजी जैसे गीतकार अनेक सफल तथा लोकप्रिय गीत लिखने के बावजूद फिल्मी दुनिया को छोड़ आए। यह भी विचारणीय है कि ऐसे दो-चार नहीं, अनेक गीत हैं, जो कविता के हर अपेक्षित मानदंड पर खरे उतरते हैं और उन्हें साहित्य की कसौटी पर परखा जा सकता है। पं. नरेंद्र शर्मा के इस गीत को देखिए—

ज्योति कलश छलके
घर आँगन वन उपवन-उपवन
करती ज्योति अमृत का सिंचन
मंगल घट ढलके··

पूरा गीत किसी पाठ्यक्रम में शामिल हो सकता है। कितने ही गीत हैं, जो हारे-थके मन को आशा, उत्साह का संदेश देते हैं।

ऐसे अनेक गीत हैं, जो हिम्मत और हौसला देते हैं। इसी प्रकार कितने ही गीत एक सार्थक जीवन जीने की प्रेरणा देते हैं, हमें एक बेहतर मनुष्य बनने की राह दिखाते हैं—

किसी की मुसकराहटों पे हो निसार
किसी के वास्ते हो तेरे दिल में प्यार
जीना इसी का नाम है·· !

× × ×

मधुबन खुशबू देता है
सागर सावन देता है
जीना उसका जीना है
जो औरों को जीवन देता है

कितने ही गीतों में अनूठी उपमाएँ, अनूठे बिंब, अनूठी कहन मिलती है। इस विराट् संसार में मनुष्य के जीवन का यह चित्र कितना प्रभावशाली बन पड़ा है—

घायल मन का घायल पंछी
उड़ने को बेकरार
पंख हैं कोमल, आस है धुँधली
जाना है सागर पार·· !

कितने ही गीत हैं, जो दर्शन और अध्यात्म को अपने भीतर पिरोए हुए हैं—

सूरज को धरती तरसे, धरती को चंद्रमा
पानी में सीप जैसे प्यासी हर आत्मा
बूँद छुपी किस बादल में, कोई जाने ना
ताल मिले नदी के जल में, नदी मिले सागर में
सागर मिले कौन से जल में, कोई जाने ना।

कितने ही गीत हैं, जो समाज के शोषित, पीड़ित, वंचित इनसानों को दु:ख-दर्द को अभिव्यक्त करते हैं; मनुष्य-मनुष्य के बीच की खाई को पाटने का संदेश देते हैं—

नए जगत् में हुआ पुराना
ऊँच-नीच का किस्सा
सबको मिले मेहनत के मुताबिक
अपना-अपना हिस्सा··

शायद ही कोई ऐसा रिश्ता हो, जिस पर कोई-न-कोई गीत न रचा गया हो। माँ पर कितने ही मार्मिक गीत हैं, तो भाई-बहन, बेटा-बेटी, पति-पत्नी, पिता या दोस्त···सभी पर गीत मिलेंगे—

ऐ माँ तेरी सूरत से अलग
भगवान की सूरत क्या होगी··

× × ×

फूलों का, तारों का, सबका कहना है
एक हजारों में मेरी बहना है।

'बेटी बचाओ' का नारा तो इधर के वर्षों का है, किंतु सिनेमा में बेटी पर कितने ही प्यारे-प्यारे गीत वर्षों से लिखे जा रहे हैं—

जूही की कली मेरी लाड़ली
नाजों से पली मेरी लाड़ली·· ।

प्रेम गीत तो हजारों की संख्या में हैं और उनमें कुछ श्रेष्ठ साहित्यिक गीत भी हैं। यहाँ यह भी उल्लेखनीय है कि फिल्मों में गीत, फिल्म की कहानी के अनुसार तथा फिल्म की सिचुएशन तथा पात्र के अनुसार लिखे जाते हैं। शैलेंद्र जैसे कुछ गीतकारों पर लेखकों ने गंभीरता से अध्ययन करके उनके साहित्यिक योगदान को स्थापित करने का प्रयास किया है, अन्यथा फिल्मी गीतों को साहित्यिक विमर्श से हमेशा दूर ही रखा गया है। यह भी कड़वी सच्चाई है कि फिल्मी गीत लिखने के 'अपराध' में गोपालदास नीरज जैसे गीतकार को साहित्य से बहिष्कृत किया गया। दूसरी भाषाओं में ऐसा नहीं है। ज्ञानपीठ से सम्मानित तेलुगु कवि श्री सी. नारायण रेड्डी का तेलुगु फिल्मों में फिल्मी गीत लिखने का कीर्तिमान है। अन्य भाषाओं में भी ऐसे अनेक कवि मिलेंगे, जिन्होंने अपनी-अपनी भाषाओं में फिल्मी गीत लिखे हैं।

हिंदी में पंडित नरेंद्र शर्मा, भरत व्यास, इंदीवर, गोपालदास नीरज, अभिलाष, योगेश आदि ने अनेक श्रेष्ठ गीत रचे हैं, किंतु उनके गीतों को साहित्य-जगत् में यथोचित सम्मान नहीं मिला। गत वर्ष साहित्य अकादेमी द्वारा शिमला में आयोजित 'साहित्य उत्सव' में फिल्मी गीतों पर एक सत्र का आयोजन अच्छी पहल थी। सिनेमा सबसे सशक्त माध्यम है। उसमें साहित्य से अधिकाधिक संबंध लाभकारी होगा। फिल्मी पत्रिका 'माधुरी' के संपादक स्मृतिशेष अरविंद कुमार ने साहित्यिक कृतियों पर फिल्म निर्माण के लिए अभियान चलाया था। उसी का परिणाम था कि 'कोहबर की शर्त' उपन्यास पर बनी फिल्म ने सफलता के सारे कीर्तिमान ध्वस्त किए थे।

इस वर्ष फिल्म गीतकार गुलजार को ज्ञानपीठ सम्मान मिला है। सोशल मीडिया पर फिल्मी गीतों के प्रति उसी धारणा के तहत नकारात्मक प्रतिक्रियाएँ भी सामने आई हैं। गुलजार के बहाने से सिनेमा और साहित्य के आपसी संबंधी पर सार्थक विमर्श हो सके तो बहुत लाभकारी होगा। कलाओं के अंतर्संबंध निश्चय ही उन्हें समृद्ध करते हैं। वर्जनाओं की आवश्यक जंजीरों का टूटना ही सुखद होगा।

(लक्ष्मी शंकर वाजपेयी)

हमके ओढ़ा द चदरिया हो, चलने की बेरिया

● उषाकिरण खान

हिंदी साहित्य की सुप्रसिद्ध लेखिका। रचना-संसार : 'विवश विक्रमादित्य', 'दूबधान', 'कासवान', 'गिली पांक', 'जनम अवधि', 'घर से घर तक', 'दस प्रतिनिधि कहानियाँ', 'प्रतिनिधि कहानियाँ' (कथा-संग्रह); 'फागुन के बाद', 'सीमांत कथा', 'रत्नारे नयन', 'पानी पर लकीर', 'सिरजनहार', 'अगन हिंडोला' (उपन्यास); 'कहाँ गए मेरे उगना', 'हीरा डोम' (नाटक); 'डैडी बदल गए', 'नानी की कहानी', 'सात भाई और चंपा', 'चिड़िया चुग गई खेत' (बाल-नाटक); 'संस्कृति के कालपात्र', 'एक बम हजार गम' (नुक्कड़ नाटक); 'उड़ाकू जनमेजय' (बाल उपन्यास); 'वीर कुँवरसिंह' (चित्रकथा)। मैथिली में 'काचहीबाँस' (लघुकथा-संग्रह), 'हसीना मंजिल', 'अनुत्तरित प्रश्न', 'दूर्वाक्षत', 'भामती', 'पोखैर रजोखैर' (उपन्यास), 'जाहि सह पहिने' (कविता), 'फागुन', 'एक्सैर ठार', 'भुसकौल वाला' (नाटक), 'घंटी से बनहल राजू', 'बिरहो अबी घेल' (बाल-नाटक)। पुरस्कार-सम्मान—पद्मश्री, साहित्य अकादमी अवॉर्ड, हिंदी-सेवी सम्मान, महादेवी वर्मा सम्मान, दिनकर राष्ट्रीय पुरस्कार, पं. विद्यानिवास सम्मान, कुसुमांजलि सम्मान एवं अन्य सम्मान। स्मृतिशेष : ११ फरवरी, २०२४।

'ह-हह' की बोली बोलकर बैलों को खड़ा कर दिया कोकाई ने। हल की नास पहले ही सीधी कर ली थी। बैल मूर्ति की तरह खड़े हो गए। कोकाई ने सिर पर से गमछा उतारा, पसीने से लथपथ अपना चेहरा पोंछा, घनी मूँछें सँवारीं, फिर बैलों की पीठ सहलाने लगा—"बड़ी गरमी है न! तुम्हारे मुँह से फेन निकलने लगा। अच्छा बेटे, अब घर ही चलते हैं। आराम से नमना ढेर सारा पानी, नाँद पर खाना खली-भूसा, कल तक करते रहना पागुर।"

बैलों ने अपने कान हिलाए। मालिक का हाथ बदन पर आह्लादित कर रहा था। कोने के धूर पर खड़े कोकाई ने देखा, पूरा खेत जुत चुका है। वाह, क्या सम पर सारे सीत खड़े हैं! एक जगह भी बेउरेब नहीं। कोकाई का कमाल है। बड़े मालिक हरदम कहा करते थे, 'खेत जोतना कोकाई जानता है, बीज डालना कोई इससे सीखे। जब धान का पौधा बित्ता भर का होता है, तब खेत की लुनाई देखते ही बनती है। क्या स्वाभाविक कलाकार है कोकाई!' उनके कहने से उत्साह बढ़ता इसका। ओह, क्या थे बड़े मालिक। सुना था कि कोकाई का पिता इसे माँ के पेट में छोडकर ऊपर चला गया था। माँ को चाचा-चाची ने सँभाल लिया। कोकाई चाचा की गोद में पलकर बड़ा हुआ। जब पाँच साल का था तब बैल ने आँख में सींग मार दिया। बड़े मालिक पटना तक ले जाकर इलाज कराते रहे, आँखें ठीक नहीं हुईं। ताजिंदगी एक आँख के सहारे काम करता रहा। अब क्या, कट गई इतनी, आगे भी कट जाएगी। जमीन का यह टुकड़ा मालिक ने स्वेच्छा से लिख दिया था। पुराने सेवक का बाल-बच्चा था कोकाई, न लिखते जमीन तो सीलिंग में जाती। जो भी हो, यह जी उठा एकबारगी।

गाँव के लोग पहले पूरब धन कमाने जाया करते थे, अब पश्चिम जाने लगे। कोकाई अपने युवाकाल में एक बार संगी-साथियों के साथ चौमासा करने, कुछ धन कमाने पूरब गया था; पर उसे रास नहीं आया। वहाँ पाट धोने के क्रम में तलुओं में कोई धारदार वस्तु गड़ गई। दवा लेने और ठीक होने में काफी दिन लग गए। कोई कमाई भी नहीं हुई, उलटे स्वास्थ्य की हानि हुई। डेढ़ मन का बोरा अकेले पीठ पर उठाकर चल देनेवाला कोकाई दो अढ़ैया भी उठा नहीं पाता। उसने कान उमेठे अपने—न, कभी ढाका-बंगाल कमाने नहीं जाएँगे। बाद के दिनों में जब बेटे पश्चिम जाने लगे तब बड़ा दबाव डाला—बाउ, पश्चिम की बात ही कुछ और है। बड़ा साफ काम है। क्या करोगे चौमासा में घर में रहकर? वहाँ धान रोपनी करना। देश देखोगे। नहीं रे, मुझे नहीं सहता पूरब-पच्छिम। हम कहीं नहीं जाएँगे और ये क्या बोलता है कि क्या करोगे? काम का कोई टोटा पड़ा है? ढेर काम है। चौमासा पर घर-छवाई का काम है। अकेले कारीगर हम हैं। तुम लोग सब गाँव छोडकर चले जाते हो, रह जाती हैं सिर्फ झोटिया पंच लोग। उन्हीं लोगों को खढ़ का पुल्ला फेंकना पड़ता है छप्पर पर। 'काम नहीं है' बोलता है। देर तक बड़-बड़ करता रहता कोकाई। बेटे सोचते, सच ही तो कहता है बाउ, इसे काम की क्या कमी है? बहुत तेज बारिश हुई और रोपनी खत्म हो गई हो तो टेरुआ लेकर सुतली कातने बैठता कोकाई। सुतली कती होती तो गोवर्धन-पूजन के वक्त गाय-बैलों के लिए रस्सी बनाने में देर नहीं होती। बरसात में ही कोकाई सुतली का जाबी बना लेता, जो धान दउनी के वक्त बैलों के मुँह पर जाली की तरह बाँधना होता। इन दिनों कुछ लोग कोकाई से बनवाने भी लगे थे।

कोकाई कोई मेहनताना नहीं लेता। बनवानेवाला अपना पाट दे जाते, यह बना देता। अलबत्ता कोई अपने घर बैठाकर सुतली कतवाता और जाबी रस्सी बनवाता तो मजूरी देनी पड़ती। काम के लिए समय ही नहीं बचता और ये मूरख, लहेंगड़े कहते हैं कि चौमासा में घर पर रहकर क्या करोगे?

अरे, घर पर रहकर देखो कि क्या किया जाता है! हर साल बाढ़ में खेत-खलिहान डूब जाते हैं। गाय-बैल के लिए घास क्या अकेली औरत बेलसंडीवाली काटेगी? अब अलौंत ब्याई गायों को हरे चारे के बिना चंगा कैसे रखा जा सकता है? बहुओं को घास काटने भेजें? वे भी तो बच्चेवाली हैं। कोकाई यह सब सोच-विचारकर गाँव नहीं छोड़ता। ऐसा ही है यह। उस बार की सर्वग्रासी बाढ़ में जब गाँव छोडऩे की बारी आई तब कोकाई ने नावों पर ढोर-डंगर और औरत-बच्चों को ढोया था दिन भर तटबंध तक। अब भी वह दृश्य याद कर सिहर उठता है कोकाई। प्रलय था, प्रलय! गाँव के सारे नवयुवक और अधेड़ परदेस गए थे, मात्र स्त्रियाँ, वृद्ध और बच्चे थे। कौन समझदार व्यक्ति एकदम से गाँव छोडकर चला जाएगा?

ये नई पौध दूसरे की बगिया महकाने जाती है, अपनी भूमि को छोड़ दिया। जमीन को सुला दिया है।

अचानक ठंडी हवा का झोंका आया। कोकाई को अच्छा लगा। उसने आकाश की ओर निहारा। घने काले मेघ घिर आए हैं। वाह, रोहिणी के आते ही मेघ! बड़ा अच्छा संकेत है। आज जल बरसा तो साल भर बरसेगा। फसल अच्छी होगी, साधुओं के भंडारे का इंतजाम हो जाएगा। कोकाई अपने बाहुबल की कमाई से भंडारा देना चाहता है। कबिरहा है न! खुदमुख्तार है। देखा, दोनों बेटे दौड़े आ रहे हैं। मेघ की छाया से धरती सँवला गई थी। कैसे जान-बेजान दौड़े आ रहे हैं छोकरे।

"बाउ, हो बाउ!"

"क्या है रे?"

"बाउ, घर चलो, आँधी-तूफान का रंग है।"

"चल, बैलों का मुन्ही छिटका, खोल दे। हल खेत में पार दे। जल्दी कर!" लडके उधर दौड़े। कोकाई को हँसी आई—आँधी तो नहीं आएगी, बारिश होगी। आँधी के वक्त आकाश का रंग भूरा हो जाता है, यह तो काला कुच-कुच हो गया है। अनुभव का थोड़ा है बेटवा सब। खुद सँभलेगा, अभी तो हम हैं न आकाश बने हुए। सोचता है कोकाई।

"अरे हो कोकाई! खेत से भागो, झोंपड़ी में आओ। पहिला मेघ है, ठनका-उनका गिरेगा तो तुम ही···।" मनीजरा अपने मचान के नीचे से आवाज दे रहा था।

"आते हैं, आते हैं; बहुत गरमी थी जरा ठंढाने दो।" सचमुच ठनका काले रंग पर गिरता है। भैंस, हाथी लोग छुपा लेते हैं। उसके बाद बचा कोकाई, पक्के रंग का। कई बार चाचीजी मजाक करती हैं—"रे कोकाई, तू मेघ-बुन्नी में खेत में न जाया कर, काला पाथर जैसा है, बिजलौटा गिर जाएगा।"

"अरे, खोल न रे; बैलों को निकाल, घर हम भी चलते हैं। ई रोहिणी की बूँद देह को हलका ही करेगी।" टोकरी-गैंती समेटकर छोटे बेटे को बढ़ाते हुए कोकाई रपेटता है बड़े बेटे को। बहुत गुम थी हवा, बड़ा आतप था भारी। धरती की गरमी रोहिणी मैया हरने आ रही थी।

अम्मा को जाने कौन जानलेवा बीमारी ने ग्रसित कर लिया था, निज कोकाई के गौने के दिन चल बसी! इसे तो टुग्गर बना ही गई, बेलसंडीवाली ने सास का सुख ही न देखा। बेलसंडीवाली पहले से टुग्गर थी। उसके माँ-बाप हैजा टुनकी से चल बसे थे। मामा-मामी के घर पली थी वो। कोकाई कम-से-कम माँ के साए का सुख तो भोग सका था। माँ का बेटा होने के नाते इसके पल्ले गृहस्थी का गहरा ज्ञान आया। यह कायदे का खेतिहर और मितव्ययी गृहस्थ हो गया। कबिरहा होने के कारण ऊपर से स्वयं फक्कड़ और अंदर से बहता निर्मल सोता रहा। बेलसंडीवाली ने एक के बाद एक दो बेटे जने, बेटी नहीं। बिना किसी दवा-दारू के दो बच्चों के बाद तीसरा पैदा ही न हुआ। कोकाई को एक बेटी की चाह थी, जो पूरी न हो सकी। उसने गाँव भर की छोटी बच्चियों के लिए कई बार रंगीन क्लिप और फुँदने खरीदकर अपनी साध पूरी की।

नियम-कानून को माननेवाला कोकाई हर साल अपना बैल बदल लेता। नई खेती पर नया बैल खरीदता। पुराना बैल बेचकर जो पैसे हाथ में आते, उसमें और लगाकर नया बैल खरीद लेता। तीन साल पहले जो बैल इसने हाट पर चढ़ाया था, उसका खरीदार इलाके में शिकायत करता पाया गया कि कोकाई ने बेकार बैल उसे थमा दिया है। वह खेती के काम का नहीं, वह उसे बेच देगा। कोकाई ने इस कान से सुना उस कान से उड़ा दिया। अगहन में जब गोसाईं साहब गाँव आए तो यह भी चढ़ावा लेकर साहेब बंदगी करने पहुँचा। गुरु ने पहुँचते ही आड़े हाथों लिया।

"कोकाई, तूने बैल कसाई को बेचा सुना है, पराच्छित करना पड़ेगा।" उन्होंने फरमान जारी किया।

"नहीं गोसाईं साहेब, नहीं! हम नेवला गाँव के किसान के हाथ बैल बेचकर आए थे।"

"गलत बात, तेरा बैल कसाई ले जा रहा था, दस मुंड देखा है। बोलो, कौन-कौन देखा है?"

सचमुच कुछ लोग उछल खड़े हुए कि उन्होंने देखा है। कोकाई हक्का-बक्का रह गया। उसने कहा कि वह उस किसान को ढूँढ़ लाएगा, जिसने बैल खरीदा; पर सुनवाई न हुई। सजा सुना दी गई। सजा को कोई कबिरहा नकार ही नहीं सकता। गोसाईं साहब की दी हुई सजा जो थी।

"इस बार फसल नहीं हुई गोसाईं साहेब, सजा जरूर दीजिए।" वह गिड़गिड़ाया

"सजा जब फसल अच्छी हो, तभी पूरी करना। समय सीमा है साहेब के पास जाने तक की। चादर मैली लेकर जाओगे?" पैरों पर गिरे कोकाई से साहेब ने कहा था।

आकाश का यह काला रंग, रोहिणी नक्षत्र की बूँदें आशा की संचार करती हैं। अपनी एक रोशन और एक निस्तेज आँखों से आकाश की ओर निहारा। खुशी से खिले चेहरे के स्वामी के पोपले मुख में एकमात्र

दाँत, बिजली की अभूतपूर्व कौंध और एक गड़गड़ाहट। फेंकना-बुधना, मनीजरा कान में उँगली डाल धरती की ओर मुँह झुकाकर बकने लगा, "सहोर-सहोर।"

पूँछ उठाकर भागते बैलों की जोड़ी थम गई। बारिश की मोटी-मोटी बूँदें भिगोने लगीं धरती को। बैल चलते हुए आकर अपने हलवाहे के पास खड़े हो गए। फेंकना-बुधना और मनीजरा दौड़कर पास आ गए। कोकाई गिरा पड़ा था झुलसे हुए पेड़ की तरह। उसके पैरों के पास एक बड़ा गढ़ा हो गया था। कोकाई की खुली आँखें आकाश निहार रही थीं, शरीर का रंग काला न रहकर भूरा हो गया था। वह निस्पंद, निस्पृह धरती पर लेटा हुआ था।

"बाउ, बाउ, कोकाई का···" के आर्त स्वर से उसमें कोई हलचल नहीं हुई। अपने-अपने मचान और खेतों से दौड़े हुए ग्रामीण आए।

वयोवृद्ध यदु ने कहा, "ठनका यहीं गिरा है, कोकाई चपेट में आ गया। देखते क्या हो? खाट लाओ, आँगन ले चलो। आधे घंटे की बारिश ने मौसम बदल दिया था। उमस भर गई थी।"

कोकाई के संस्कार के बाद बेटों ने, जैसा कि अकसर होता है, उधार लेकर भंडारे का आयोजन किया। भंडारा चूँकि साधुओं का था, सो शुद्ध घी का हलुआ-पूड़ी, बुँदिया-दही का प्रसाद रहा। संस्कार के वक्त ही साधु के प्रतिनिधि ने बड़े बेटे फेंकना से कहा, "तुम कोकाई को अग्नि कैसे दोगे? साँकठ जो हो, पहले कंठी धारण करो; साधु को पैठ होगा, वरना···"

रोता हुआ अबूझ-सा फेंकना कंठी धारण कर बैठ गया। बारहवीं का भोज समाप्त हुआ। गले में गमछा डालकर फेंकना-बुधना साधुओं के सामने खड़ा हुआ।

"साहेब, हम ऋण से उऋण हुए कि नहीं?" कान उऋण सुनने के लिए बेताब थे।

साधु घी की खुशबू में सराबोर थे; कीर्तनिया झाल-मृदंग बजाकर गा रहे थे—'मैली चादर ओढ़ के कैसे द्वार तिहारे जाऊँ।'

"नहीं रे फेंकना, तेरी ऋण-मुक्ति कहाँ हुई? गोसाईं साहेब ने दो साल पहले पचहत्तर मुंड साधु का भोज-दंड दिया था। नहीं पूरा कर पाया बेचारा। यह तो तुम्हें ही पूरा करना पड़ेगा। उऋण होना है तो यह सब करना पड़ेगा।"

"पचहत्तर मुंड साधु! क्या कहते हैं? हम ऐसे ही लुट गए, अब कौन देगा ऋण भी हमको?" रोने लगा फेंकना।

"क्या? तो बाप का पाप कैसे कटित होगा?"

"आप लोग अन्याय कर रहे हैं। कबीरदास सभी रूढ़ियों के खिलाफ थे। उनका नाम लेकर रूढ़िवाद की पराकाष्ठा पर चले गए हैं।" गाँव के एक मैट्रिक पास युवक ने आगे आकर कहा।

"तुमसे कौन पूछता है? यह फेंकना के उऋण होने की बात है, उसे बरगलाकर पाप के भागी बनने पर मजबूर न करो।"

"बड़का पढ़ुआ बने हो!" लेकिन प्रतिकार करने को भी बहुत सारे लड़के इकट्ठे हो गए। अच्छा हंगामा मच गया। फेंकना ने मेट साधु के पैर पकड़ लिये। बुधना रो-रोकर हलाकान हो गया। बेलसंडीवाली को गश पर गश आने लगे।

"ऐ प्राणी, अपनी माँ को बुलाओ। हम उसी से पूछेंगे, अपने आदमी को परलोक में किस स्थान पर रखना चाहती है?" उनकी निर्भय गर्जना ने फेंकना के अंदर साहस का संचार किया। वह ग्रामीणों की ओर मुड़ा, अपने आँसू पोंछे और हाथ जोड़कर खड़ा हो गया।

"कहिए चाचाजी, भैयाजी लोग! हम गरीबों की मदद कैसे करेंगे आप?"

"कहने की बात है, जाते हैं साहुजी के पास। सब सामान लिखा देते हैं, तुरंत काम होगा।" एक खुर्राट ग्रामीण ने कहा। साहुजी दौड़े हुए सामान गिरा गए। हलवाई बैठ गए। बारहवीं से लेकर तेरहवीं तक सत्तर मुंड साधुओं का जीमने लगा। यह अतिरिक्त मुंड प्रायश्चित्त का था।

पूँछ उठाकर भागते बैलों की जोड़ी थम गई। बारिश की मोटी-मोटी बूँदें भिगोने लगीं धरती को। बैल चलते हुए आकर अपने हलवाहे के पास खड़े हो गए। फेंकना-बुधना और मनीजरा दौड़कर पास आ गए। कोकाई गिरा पड़ा था झुलसे हुए पेड़ की तरह। उसके पैरों के पास एक बड़ा गढ़ा हो गया था। कोकाई की खुली आँखें आकाश निहार रही थीं, शरीर का रंग काला न रहकर भूरा हो गया था।

कीर्तनिया अलाप ले रहे थे—'हमके ओढ़ा द चदरिया हो चलने की बेरिया।'

"बबुआ फेंकन, इस लिस्ट पर दसखत कर दो, मेरे पास रहेगा। कमाकर देते रहना दोनों भाई। पढ़ लो ठीक से।" साहुजी ने कहा।

फेंकन ने टो-टा कर पढ़ लिया—'दो पैसा सैकड़ा सूद।' भरी आँखों से सकल समाज की ओर देखता रहा, फिर दस्तखत कर दिए।

"आह, बाप का काम संपन्न हुआ। दंड भी पूरा किया। वाह बेटा!" खुर्राट ग्रामीण ने कहा। धीरे-धीरे अतिथि जाने लगे। फेंकना भारी कदमों से गश खाती माँ के पास आ खड़ा हुआ। धीमे से बैठा। माँ ने उसकी ओर कातर निगाहों से देखा।

"माँ, कल भोरे गाँव से निकलना है, होश करो। बुधना खेत सँभालेगा, तुम पीठ पर रहना। बाउ के काम का कर्ज जब तक नहीं उतारेंगे, उनके ऊपर चादर कैसे ओढ़ाएँगे? बाउ यहीं कहीं रहेगा, पैठ नहीं होगा।" बेटे से लिपटकर जी भर रो चुकी बेलसंडीवाली फिर कभी होश नहीं खो सकी।

बनारस में डबल शिफ्ट रिक्शा चलाता फेंकन हलाकान होकर कबीर चौरा चौक पर सो जाता है कुत्ते की नींद और जागता है बिल्ली की नींद। कीर्तन के उदास स्वर हवा में तैरते रहते हैं—'हमके ओढ़ा द चदरिया हो···'

रिक्शे पर पैडल जोर से मारने लगता है फेंकन—कर्ज की कई किस्तें बाकी हैं।

गीत-गजल

● बालस्वरूप राही

गीत-१

मैं मानूँगा नहीं कि बगिया में बहार आई, जब तक
खिले नहीं मुरझाए पत्ते, बनकर फूल नहीं महके

आखिर क्यों होता है ऐसा
फूल महकता चंदन जैसा
कभी माँगता अगर सुरक्षा
पत्ते करते हैं बस वैसा

बगिया भी तो ऐसी ही है, ऐसे ही इस के माली
मुरझाते पत्तों की पीड़ा किस ने कब देखी सह के

जैसे महके फूल चमन में
ऐसी महक कहाँ निर्धन में
उच्च वर्ग कब उन की सुनता
चाहे चर्चा हो जन-जन में

कहने को तो आज रसोई चमक रही उनकी लेकिन
सिंक पाई रोटियाँ तभी जब वे खुद चूल्हे-से दहके

कब तक बस फूलों के मेले
भोगेंगे वरदान अकेले
इतना भी देखो कितने
पत्ते हरे जान पर खेले

बस फूलों की नहीं पत्तियों की भी होगी पूछ चमन में
आखिर कब दर्शन हो पाएँगे ऐसी पुरनूर सुबह के

गीत-२

अपहारों की भीड़-भाड़ है, त्योहारों का मेला है
आखिर वह क्या करे जिंदगी में जो निपट अकेला है

लोग नहाते गंगाजल में
स्वर्ग मिले जीते-जी पल में
करे किंतु क्या वह बेचारा
धँसा हुआ है जो दलदल में

कैसे कब सुख के स्वागत में फूल बिछाए महक भरे
सुख का स्वागत करे किस तरह जिस ने बस दु:ख झेला है

आस मिले तो बने आस्था
दूब खिले तो बने रास्ता
कैसे जिएँ भला वे जिन का
नारों से कुछ नहीं वास्ता

कौन सुनेगा उसकी कविता जो गाता यशगान नहीं
सब कह देंगे छोड़ो इस को यह पगला अलबेला है

मंत्र बन गए हैं अब नारे
कैसे कोई हाथ पसारे
जो भीड़ों से कटे हुए हैं
भटक रहे हैं मारे-मारे

जिधर देखिए हंगामा है, सड़कों पर चलना मुश्किल
आगे बढ़ पाना मुश्किल है, खुद को महज धकेला है

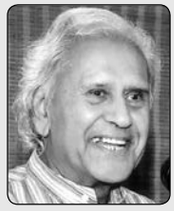

सुपरिचित बहुमुखी साहित्यकार। गीत, ग़ज़ल, मुक्तछंद लगभग सभी विधाओं में निष्णात। हिंदी के प्रथम ऑपेरा 'राग-बिराग' के रचनाकार। केंद्रीय हिंदी संस्थान के सुब्रह्मण्यम भारती पुरस्कार सहित अनेक प्रतिष्ठित पुरस्कारों से सम्मानित।

गजल

उस का कोई कहीं नहीं सानी
जिसने सच बोलने की जिद ठानी

लोग तो भाग-दौड़ करते हैं
भा गई चाल हम को मस्तानी

हम को जन्नत सरीखी लगती है
जिस जगह चल पड़े गजलख्वानी

हुस्न का हाथ हम न छोड़ेंगे
हम ने ये जिद शुरू से है ठानी

कोई कितनी ही दे नसीहत, पर—
हम तो करते रहेंगे मनमानी

हम इबादत नहीं, इबारत हैं
और वो भी बड़ी ही लासानी

हम ने मुश्किल गले लगा ली है
ताकती रह गई है आसानी

हम ने हँसकर अँगूठा दिखलाया
मुट्ठी हालात ने अगर तानी

और भी हो गई धरा सुंदर
ओढ़ ली जब से ये चूनर धानी

हम तो राही मजे से चलते हैं
अपनी मंजिल है जानी-पहचानी

साअ
डी-१३ए/१८, मॉडल टॉउन-२,
दिल्ली-११०००९
दूरभाष : ९९५८४७९४३२

प्यार और जिंदगी

● **अमरनाथ अग्रवाल**

मेरी पत्नी की हृदयगति रुकने से मृत्यु हो गई थी। दाह-संस्कार के लिए उसका शव गंगा नदी के तट पर ले गए। साथ में बेटा और निकटतम रिश्तेदार थे। बेटा दाह-संस्कार की प्रारंभिक तैयारियाँ पूरी कराने में जुट गया। मैं गंगा तट के किनारे एक ईंट के ऊपर बैठा हुआ उदासीन नजरों से अपनी पत्नी को निहार रहा था।

बावन वर्षीय दांपत्य-सुख देकर आज मुझे बिलखता छोड़कर परम धाम जा रही थी। एक दिन चुहलबाजी में उसने कहा था, 'देखो जी! सच्ची बात सुन लो। जाना तो पहले मुझे ही है। मुझे विधवा-मौत पसंद नहीं। और हाँ, यह भी सुन लो, मुझे गंगा किनारे ही जलाना। बड़ी साध है मेरी। अंतिम समय में गंगा मैया की गोद मिले।

'एक बात और। सुन रहे हो न तुम? आपको सिंगार-पटका अच्छा नहीं लगता था तो मैं सधवा होते हुए भी माँग में सिंदूर नहीं भरती थी। किसके लिए सिंदूर भरा जाए?

'मेरी माँग के सिंदूर तो आप ही थे। लेकिन मैं चाहती हूँ कि मेरे मरने के बाद मेरी माँग में ढेर सारा लाल सिंदूर अपने हाथों से जरूर भरना, ताकि जिंदगी भर की कसक मिट जाए। मुझे बहुत अच्छा लगता है माँग में भरा हुआ सिंदूर। दूर से ही पता चल जाता है कि कोई नसीबों वाली सधवा जा रही है।'

आज उसकी सारी बातें सही साबित हो रही हैं। मैं अंदर तक टूटा हुआ था। बिखरा-छितरा मन लिये। डबडबाई आँखों से उसकी माँग में गहरे लाल सिंदूर को निहारे जा रहा था। चेहरे पर असीम शांति थी। होंठों पर वही चिर-परिचित मुसकान। मानो मुझसे कह रही हो कि आपने मेरी सारी इच्छाएँ पूरी कर दी हैं। अब मैं तृप्त होकर जा रही हूँ। बस अपना ध्यान रखना।

चिता पूरी तरह सज चुकी थी। बेटे ने मुझे आवाज दी। मैंने उसके अंतिम दर्शन किए। उसकी आजीवन सेवा के लिए मैंने उसके चरण छूकर आभार व्यक्त किया। फिर जल्दी से लकड़ी का एक बोटा उठाकर उसके सीने पर सावधानी से रख दिया। बेटे ने मुखाग्नि दी। धीरे-धीरे शरीर पंचतत्त्व में विलीन होने लगा। हम सभी उसके शव का पूरी तरह दाहित होने का इंतजार करते रहे।

अचानक एक और अरथी दाह-संस्कार हेतु हमारे ही बगल में लाकर उतारी गई। उसके साथ आए परिजन प्रारंभिक तैयारियों में जुट गए। मैंने अरथी लाने वाले एक युवक से जिज्ञासावश पूछा कि "बेटे! आप कहाँ से आए हैं? यह मृतक शरीर किसका है?" युवक ने बताया कि हम बुलंदशहर से आए हैं और ये मेरी बुआजी हैं। इन्होंने शादी नहीं की थी, अत: इनके सारे अंतिम संस्कार मैं ही करूँगा। इन्होंने मुझे पुत्रवत् प्यार दिया था हमेशा।

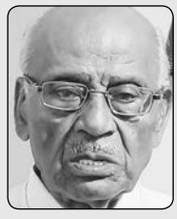

जाने-माने लेखक। अब तक कालजयी, जटायु (खंड काव्य), चुटकी (द्विपदी हास्य-व्यंग्य-संग्रह), आसपास बिखरी हुई जिंदगी, जीवन के रंग (कहानी-संग्रह), खरी-खोटी (व्यंग्य-संग्रह), चरणों में (भजन-संग्रह), काव्य-रत्न (समीक्षाएँ एवं परिचय), दोहा गाथा प्रकाशित। छोटे-बड़े दर्जनों सम्मान प्राप्त।

बुलंदशहर नाम सुनकर मैं कुछ चैतन्य हुआ। मैंने उसी युवक से फिर पूछा कि आपके पिताजी और दादाजी का नाम क्या है? उसने दादाजी का नाम श्याम सुंदर और पिता का नाम रमेशचंद्र बताया। श्याम सुंदर नाम सुनते ही मेरी उत्सुकता और बढ़ गई। मैंने फिर उस मृतक महिला का नाम पूछा, तो उसने पुष्पा बताया। बुलंदशहर, श्याम सुंदर और पुष्पा—ये तीनों संज्ञाएँ मेरे कानों मे जोर-जोर से गूँजने लगीं। मैं उछलकर खड़ा हो गया। मेरी आँखों के आगे मेरा अतीत घूमने लगा।

जब मैं अपनी नौकरी की पहली पोस्टिंग पर बुलंदशहर में तैनात था तो मेरे किराए के मकान से सटा श्री श्याम सुंदरजी का मकान था। उनकी एक पुत्री थी पुष्पा और एक बेटा रमेश। पुष्पा बड़ी शोख और चंचल लड़की थी। हँसती थी तो उसके दोनों गालों के डिंपल अपनी ओर खींचने लगते थे। दोनों गालों पर एक-एक तिल था, गहरा काला। तब वह बारहवीं में पढ़ती थी। धीरे-धीरे हम दोनों में प्यार हो गया। हम दोनों चोरी-छुपे रोज मिलते। बिना मिले चैन ही नहीं पड़ता था। उसके घरवालों को कुछ भी जानकारी नहीं थी हम दोनों के प्यार के बारे में। श्री श्याम सुंदरजी कपड़े की दुकान चलाते थे। मुझे आज भी याद है कि वह दुकान भूड़-चौराहे के एक किनारे पर बनी थी। मेरा उस दुकान पर अकसर आना-जाना लगा रहता था। हमारा प्यार परवान चढ़ने लगा और हम दोनों ने आपस में शादी करने का वचन भर लिया। वह धार्मिक और सामाजिक सरोकारों की ज्यादा पाबंद थी। उन दिनों प्रेम विवाह करना सामाजिक अपराध समझा जाता था। वह घरवालों की सहमति से ही विवाह करना चाहती थी। लेकिन उसकी इंटर की पढ़ाई बीच में रुकावट डाले हुए थी। दोनों ने मिलकर यह तय किया कि पहले बोर्ड की परीक्षा हो जाए, तब ही शादी की बात शुरू की जाए।

अचानक मेरा तबादला लखनऊ हो गया। मुझे विदा करते समय

वह मुझसे लिपटकर रोने लगी। फिर सुबकते हुए बोली, 'देखो! अपना वचन याद रखना। मैं शादी करूँगी तो आपसे ही। अगर किसी भी कारणवश ईश्वर को यह रिश्ता मंजूर नहीं हो सका तो आजन्म कुँआरी ही रहूँगी। अगर घरवालों ने ज्यादा दवाब डाला तो कुएँ में कूदकर जान दे दूँगी, लेकिन किसी और से शादी नहीं करूँगी। चाहे कुछ भी हो जाए।"

मैंने उसे आश्वस्त किया और लखनऊ चला आया। चलते समय मैंने उसे दफ्तर का पता बता दिया। उन दिनों टेलीफोन सेवा अत्यंत दयनीय स्थिति में थी। मोबाइल तो ईजाद ही नहीं हुआ था। कुछ दिन बाद दफ्तर के पते पर उसका प्रेम-पत्र मिला। मैंने भी जवानी के जोश में उसे एक लंबा-चौड़ा इश्किया-पत्र लिखकर उसके पिता की दुकान के पते पर पोस्ट कर दिया। फिर तो जो होना चाहिए था, वही हुआ।

पुष्पा के पिता बड़े गुस्सैल थे। वह पत्र उन्होंने खोलकर अवश्य पढ़ा होगा। फिर घर आकर पुष्पा को भद्दी गालियाँ देते हुए उसकी जमकर पिटाई भी की होगी। स्कूल से नाम कटवा दिया गया होगा। घर से बाहर आना-जाना बिल्कुल बंद। उसकी शीघ्र ही शादी करने का प्रयास किया गया होगा। लेकिन पुष्पा की जिद पर अड़ी होने और आत्महत्या करने की धमकी के कारण वह आजन्म कुँआरी रही होगी। मैंने भी लखनऊ आने के बाद अनेक बार उससे संपर्क करने की कोशिश की, लेकिन कभी मुलाकात नहीं हो सकी। मैं भी अपने मन में यह सोचकर शांत हो गया कि शायद परिस्थितियों से मजबूर होकर उसने शादी करके घर बसा लिया होगा।

लेकिन आज वही पुष्पा अपनी अंतिम-यात्रा पर जाने से पहले चार कंधों पर सवार होकर मुझसे मिलने श्मशान घाट आई। शायद मुझे याद दिलाने कि देखो! मैंने अपना वचन निभाया है। मैं आज भी, अपनी आखिरी सांस तक तुम्हारे इंतजार में वैसी ही कुँआरी बनी बैठी हूँ। और एक आप है, अपना वचन तोड़कर शादी रचा बैठे? किसी ने सच कहा है कि मर्द बड़े बेवफा होते हैं।

अचानक मुझे अहसास हुआ कि वह शायद मुझे अपने पास बुला रही है। मैं हड़बड़ाकर अतीत की धुंध से बाहर निकला और पुष्पा को चिता पर जाकर देखा। मुख पर झुर्रियों के बीच अब भी वे दोनों डिंपल मुझे आमंत्रण देते से लगे। दोनों गालों पर वही गहरे काले तिल। मैंने उसके चरण छूकर उससे क्षमा-याचना की। मैं आज स्वयं को कितना अभागा महसूस कर रहा था। एक तरफ मेरा प्यार जल रहा था, तो दूसरी तरफ मेरी जिंदगी। मुझे पत्नी का शोक और प्रेमिका के साथ अनजाने में हुई बेवफाई की शर्म जिंदा ही जलाए जा रही थी।

४०१-ए, उदय-१,
बंगला बाजार, लखनऊ (उ.प्र.)
दूरभाष : ८७०७४८२५९४

दोहे

नारी विमर्श के दोहे

• सुबोध श्रीवास्तव

नन्ही सीखों से बड़ा, भला कौन सा ज्ञान।
माँ की बोली में बसे, गीता, वेद-पुरान॥

गोकुल जैसा दिन खिले, काशी जैसी शाम।
जीवन को पुलकित करे, माँ इक तेरा नाम॥

दुनिया पर भगवान की, बरसी कृपा अपार।
घर-घर माँ के रूप में, बाँट रहा वह प्यार॥

बेटे को दिखला रहे, सपनों की बारात।
बेटी को समझो कभी, पूछो मन की बात॥

नारी के उत्थान का, किया बहुत ही शोर।
साबित भी करते रहे, पुरुषों से कमजोर॥

भेदभाव अब भी यहाँ, निपटा कहाँ समूल।
कितनों के घर बेटियाँ, हँसकर हुईं कुबूल॥

घर में दूजा आचरण, बाहर है कुछ और।
नारी के सम्मान पर, करें कहाँ से गौर॥

देवी तो कहते रहे, समझा लेकिन वस्तु।
नारी के उत्थान को, कहें कहाँ से अस्तु॥

गुनहगार फाँसी चढ़े, दाग बदनुमा साफ।
देर हुई, आखिर मिला, बेटी को इनसाफ॥

भाषण तक सीमित रहा, नारी का सम्मान।
कदम-कदम पर रोज वह, झेल रही अपमान॥

भारत की ये बेटियाँ, बढ़ा रही हैं शान।
भेदभाव अब छोड़कर उनको भी दें मान॥

'मॉडर्न विला', १०/५१८, खलासी लाइंस,
कानपुर-२०८०००१ (उ.प्र.)
दूरभाष : ९१४०६३८४७४

दक्षिण अयोध्या में 'भद्राद्रि रामन्ना' के प्रभु राम

• पद्मावती

भद्राचलम—दक्षिण अयोध्या—तेलंगाना राज्य के कोत्तागुडेम जिले में बसे इस शहर का इतिहास हमारी पौराणिकता से जुड़ा है। वाल्मीकि रामायण के अनुसार यह प्रदेश प्रभु राम की चरण-रज पाकर धन्यता को प्राप्त कर चुका है, लेकिन आज आपका ध्यान एक विलक्षण बिंदु पर आकर्षित किया जा रहा है और वह है, इस भद्राचलम की धरा पर हुए एक चमत्कार पर, 'राम भक्ति का चमत्कार'। जिस प्रकार ईश्वर का साक्षात्कार कराने वाले गुरु का स्थान ईश्वर से भी ऊँचा माना जाता है, उसी प्रकार भगवान् की कीर्ति को जगत् प्रसिद्धि देने वाला 'भक्त' भी उतना ही पूजनीय हो जाता है। महाबली हनुमान इसके प्रत्यक्ष उदाहरण हैं। इसी कारण कहा जाता है कि भक्ति स्वयं में साध्य है। इस अनंत सृष्टि के नियंता नियामक भगवान् को अगर कोई अपने वश में कर सकता है तो वह है, केवल और केवल 'भक्ति'। यह एक सार्वकालिक सत्य है। इसी सत्य के आधीन होकर ही भगवान् शबरी के झूठे फल खाते हैं, सुदामा के पाँव पखारते हैं, राजभोग त्यजकर विदुर का रूखा-सूखा ग्रहण करते हैं और कलियुग में तो नाम मात्र के स्मरण से मोक्ष दे देते हैं, अभय दान दे देते हैं। भक्ति में असीम शक्ति होती है। 'राम से बड़ा राम का नाम'। यह भक्ति की शक्ति नहीं तो और क्या है, जब भगवान् श्रीराम को अपने अनन्य भक्त रामदास की रक्षा हेतु 'परित्राणाय साधुनाम्' के मंत्र को साकार करने के लिए, उसे कारागार से छुड़ाने के लिए मुसलमान नवाब के सामने साक्षात् प्रकट होना पड़ा। यहाँ भद्राचलम में एक बार फिर भक्त ने भगवान् को अपनी भक्ति की शक्ति से प्रकट करवा दिया। आश्चर्य! लेकिन यह सत्य है। यह कथा पौराणिक काल की नहीं, केवल कुछ शताब्दियों पूर्व की गाथा है। यह चमत्कार हुआ दक्षिण की पावन नगरी भद्राचलम में, सत्रहवीं शताब्दी में।

रामदास, जिनको इस प्रदेश में 'भद्राद्रि रामन्ना' कहा जाता है, उनका असली नाम 'कंचर्ला गोपन्ना' था। कहते हैं कि कबीर एक बार दक्षिण की यात्रा पर आए थे और इनकी रामभक्ति से अत्यंत प्रभावित होकर उन्होंने इनका नामकरण 'रामदास' कर दिया था। १६२० में जनमे रामदास मूलत: नेलकोंडापली गाँव के निवासी थे, जो भद्राचलम के निकट का गाँव है। प्रभु राम की भक्ति इन्हें विरासत में अपने परिवार से मिली थी। अल्पायु में अनाथ हुए गोपन्ना राम भजनों को गा-गाकर भिक्षाटन से अपना पेट पालते थे। इनकी वाणी में जादू था और माँ सरस्वती की इनपर अपार अनुकंपा थी। संगीत इनकी वाणी से निर्झर झरने की तरह बहता था। प्रभु राम की लीलाओं का रसमय गायन ही इनका जीवनाधार था। इनका जीवन राम-भरोसे चल रहा था। लौकिक जगत् की चिंता छोड़ वे हर क्षण रामरस में डूबे रहते।

सुपरचित लेखिका एवं आचार्य। शिक्षक सम्मान, हिंदी साहित्य रत्न सम्मान, विशेष हिंदी प्रचारक सम्मान २०२१, नारी गौरव सम्मान सहित कई सम्मानों से सम्मानित। संप्रति आसन महाविद्यालय, चेन्नई में हिंदी भाषा साहित्य का अध्यापन।

इस कारण इनके मामा को इनकी चिंता बहुत सताती थी। वे तत्कालीन नवाब के दरबार में ऊँचे पद पर थे। उन्होंने रामदास के जीवन को सुधारने का निर्णय लिया और गोलकोंडा के सुलतान अब्दुल हसन तानीशाह से अपने भानजे रामदास की सहायता करने की गुहार लगाई, जिसके परिणामस्वरूप १६७२ में रामदास अपने मामा अक्कन्ना और मादन्ना की अभिशंसा पर 'पालवंचा परगणा' के तहसीलदार नियुक्त कर दिए थे, जिसके आधीन भद्राचलम शहर भी आता था। रामदास इस प्रदेश की महिमा से भली-भाँति परिचित थे।

एक किंवदंती के अनुसार जब वे भद्राचलम आए तो वहाँ जीर्ण-शीर्ण अवस्था में भगवान् राम के मंदिर को देखकर इनका हृदय विदीर्ण हो गया। राममंदिर की ऐसी दु:स्थिति वे सह न पाए। जर्जर अवस्था में पड़े राममंदिर के पुनरुद्धार का इन्होंने तत्क्षण संकल्प ले लिया। मंदिर के पुनरुत्थान के लिए अपार धनराशि की आवश्यकता थी। राज खजाने के कोषाध्यक्ष होने के कारण 'कर-वसूली' की धनराशि इनके संरक्षण में ही रखी जाती थी। मंदिर निर्माण की इनकी अभीप्सा दिन-ब-दिन बलवती हो रही थी। अंतत: इन्होंने निर्णय ले ही लिया। कुछ धनराशि जनता जनार्दन से दान रूप में प्राप्त की और बाकी कर-वसूली की राशि से राममंदिर का जीर्णोद्धार कर डाला। एक किंवदंती है कि मंदिर में रामलला की मूर्तियों की प्रतिष्ठा की पूर्व संध्या को इन्हें प्रातिभज्ञान से स्फुरण हुआ कि भगवान् का सुदर्शन चक्र गोदावरी के जल में निमग्न है। उसे बाहर निकालना है। और जब अगले दिन सुदर्शन चक्र को नदी से निकाला गया तो सब आश्चर्यचकित रह गए। योजनानुसार मंदिर का जीर्णोद्धार हुआ, राम दरबार प्रतिष्ठित हो गया। रामदास अति प्रसन्न थे। उनके ईष्ट भव्य

मंदिर में विराजमान तो हो गए थे, पर अब भी एक कमी थी, जो खटक रही थी। अयोध्या के राजा राम और महारानी जनकनंदिनी बिना आभूषणों के भला कैसे सुशोभित हो सकती थीं? न···न···। रामदास को यह उचित न लगा। प्रश्न आया आभूषणों का। धनराशि समाप्त हो चुकी थी। कोई विकल्प न था। तो हारकर रामदास ने कर-वसूली की राशि से आभूषण बनवा डाले और सोचा, दान की राशि से खजाने का धन वापस चुका दिया जाएगा। इस पूरे उपक्रम में राज खजाने से छह लाख स्वर्ण मुद्राओं का व्यय किया गया।

सुलतान तक खबर पहुँची। उसकी आज्ञा के बिना कोषाध्यक्ष का इतना दुस्साहस? राज खजाने का ऐसा दुरुपयोग? वह आग-बबूला हो गया। तत्काल दरबार में रामदास को सुनवाई के लिए बुलाया गया। जाँच-पड़ताल हुई। रामदास पर धोखाधड़ी का अभियोग लगा। रामदास ने अपने बचाव में अनुनय-विनय किया, शीघ्र ही दान की राशि से धन चुका

रामदास द्वारा बनवाए गए आभूषण

देने का आश्वासन भी दिया। पर सुलतान ने एक न सुनी। दंड संहिता के तहत रामदास को बारह वर्ष कठोर कारावास और इस अवधि के उपरांत तत्क्षण धन न चुकाने पर फाँसी की सजा सुना दी गई। रामदास को मोटी-मोटी जंजीरों में जकड़ लिया गया। उस समय हैदराबाद तानीशाह की हुकूमत में था, इसीलिए रामदास को हैदराबाद के गोलकोंडा किले की काल कोठरी में कैद कर दिया गया।

अब यातनाओं का दौर आरंभ हुआ। हर दिन रामदास को कोड़ों से मारा जाता। कई-कई दिन भूखा रखा जाता। शरीर अस्थि-पंजर बन गया था। रक्त रंजित खाल पर हंटरों की काली-काली धारियाँ पड़ गई थीं। प्राण सूख गए, पर अँधेरों से रामनाम न मिटा। हर चोट पर रामनाम गूँजता। रामदास के कई भजनों की सर्जना इसी कारागार में हुई। इनका रोम-रोम राममय बन चुका था। रामनाम के अतिरिक्त जिह्वा पर कोई और शब्द न आता। राम को ही अपना जीवन समर्पित करने वाले इस भक्त को अकल्पनीय यातना नरक देखना पड़ा। लेकिन एकांतवास ने इनकी भक्ति में और शक्ति ला दी। निशि-दिवस अश्रुपूरित नयनों से अपने प्रभु को मनाते, माँ सीता से भी याचना करते कि प्रभु को इनकी दशा से अवगत कराए, राम के अनन्य दास महाबली हनुमान से गुहार लगाते। इनकी वाणी से जेल की दीवारें गुँजायमान हो जातीं। अपनी ही जंजीरों से किले की दीवारों पर अपने प्रभु राम के चित्र बनाते, अपनी निर्दोषता साबित करते।

इस चारदीवारी में उनकी पुकार सुनने वाला केवल वही तो था। अँधेरी कोठरी में अगर कही प्रकाश था तो वह था रामनाम की ऊष्मा का प्रकाश। बारह वर्ष—बारह वर्ष नारकीय यातनाएँ सहीं। कोड़ों की चोट पर जलती सलाखों को छुआया जाता, गरम पानी डाला जाता। शरीर छलनी

गोलकोंडा किले की दीवारों पर रामदास द्वारा खुदे चित्र

हो गया था। कोडे की मार पड़ती, रक्त की एक बूँद नीचे गिरती और मुँह से निकल उठता, "इक्ष्वाकु कुलतिलक, कब तक चुप्पी लगाए रहोगे, कब तारोगे मुझे? अगर तुम न तारोगे तो कौन रक्षा करेगा मेरी यहाँ?"

इक्षवाकु कुलतिलका इक नैना पलुकवा ··रामचंद्रा··,
नन्नू रक्षिंप कुन्ननू रक्षकुलु एवरिंका रामचंद्रा

—(रामदास कीर्तनलु- तेलुगु)

आत्मा में राम को रमाए रामदास मुसकराते हुए पीड़ाओं को सहते। लेकिन जब चोट सहिष्णुता की सीमा लाँघ जाती तो आत्मा कराह उठती और अपने प्रभु को उलाहना दे डालती। (इन सब घटनाओं का ब्योरेवार वर्णन इनके भजनों में मिल जाता है। इनके संकीर्तनों में इनके जीवन की हर एक घटना का सूक्ष्म वृत्तांत चित्रित है।)

अपने प्रभु को मनाते, मनुहार करते और कभी-कभी पीड़ा न सह पाने के कारण उलाहना उग्र भी हो जाता। अपने किए अपराध का लेखा-जोखा प्रभु के सिर डालकर उन्हें दुर्वचन भी कह डालते। एक उदाहरण देखिए—

सीतम्मा कु चेयिस्ती चिंताकु पतकमु, रामचंद्रा
आ पतकमुनुकु पट्टे पदी वेल वरहालु रामचंद्रा।
नी तंड्री दशरथ महाराजु पम्पेना रामचंद्रा
लेक नी मामा जनक महाराजु पम्पेना रामचंद्रा।
एवरब्बा सोम्मु अनि कुलुकुचु तिरिगेवु रामचंद्रा)॥

(रामदास कीर्तनलु-तेलुगु)

अर्थात्—

'माँ सीता के माणिक हार में लगी, दस हजार स्वर्ण मुद्राएँ
लक्ष्मन के रत्न हार में लगी, दस हजार स्वर्ण मुद्राएँ
और रत्न जड़ित स्वर्ण मुकुटों में लगी, दस हजार मुद्राएँ
यह राजभोग आपको आया कहाँ से?
क्या आपके पिता दशरथ महाराज ने भेजा था?
या आपके श्वसुर जनक महाराज ने भेजा था?
किसके अब्बा की संपत्ति है, जो पहनकर इतरा रहे हो रामचंद्र?

बारह वर्ष के कारागार की अवधि का समापन निकट आ गया। आज आखिरी रात थी। कल का सूरज रामदास के लिए न था, कल सूर्योदय से पहले रामदास को फाँसी पर लटकाए जाना था। सब तैयारियाँ हो रही थीं। वे अपनी अंतिम यात्रा के लिए तैयार थे। कल उनका उनके प्रभु से मिलन होना था। लेकिन उस रात्रि में एक चमत्कार हुआ। अब्दुल हसन तानीशा के स्वप्न में अनुजद्वय आए और मंदिर निर्माण और आभूषणों में व्यय

की गई राज खजाने की राशि छह लाख स्वर्ण मुद्राएँ लौटाकर तानीशाह से रामदास को रिहा कर देने का अनुरोध किया। सुलतान की तंद्रा टूटी, सामने स्वर्ण मुद्राओं की पोटलियाँ पड़ी थीं। गिनती करवाई गई। पूरी छह लाख स्वर्ण मुद्राएँ, न एक अधिक न एक कम। उन स्वर्ण मुद्राओं पर राम लक्ष्मण और सीता की प्रतिमाएँ अंकित थी।

रामदास का कर्जा चुक गया। सुलतान दंग रह गए। अगली सुबह रामदास को रिहा कर दिया गया। सुलतान अब्दुल हसन ने रामदास के बनाए मंदिर के आस-पास की कई एकड़ भूमि मंदिर के रख-रखाव के लिए दान में दे दी। अपने राजकोष से असली मोतियों को मंदिर में राम-

रामदास की रिहाई में चुकाई गईं स्वर्ण मुद्राएँ

सीता के विवाहोत्सव में भेंट करने की परंपरा का सूत्रपात किया। यह घटना शताब्दियों पूर्व घटी है। उसके बाद इस परंपरा ने कई सुलतानों, मुगल शासकों, निजामों और विदेशी आततायियों के झंझावातों को सहा, लेकिन परंपरा अक्षुण्ण रही। आज भी हर वर्ष रामनवमी पर भद्राचलम के मंदिर में भगवान् सीता-राम के विवाह के लिए प्रदेश मुख्यमंत्री का राजकोष असली मोतियों को भेंट स्वरूप प्रदान करता है।

भद्राचलम मंदिर की संरचना दक्षिण भारत की द्रविड़ स्थापत्य कला का उत्कृष्ट उदाहरण माना जा सकता है, जहाँ शिखर, बाहरी और आभ्यांतरिक दीवारों पर रामायण के दृश्यों को प्रतिबिंबित करती जटिल नक्काशीदार प्रस्तर मूर्तियों का उत्कीर्णन तत्कालीन मूर्तिकला व शिल्पकला की भव्यता का परिचय देती है। विशाल विस्तीर्ण प्रांगण। चारों दिशाओं में चार द्वार। मध्य द्वार वैकुंठ द्वार कहा जाता है, जिस पर राजगोपुरम् विन्यस्त है, जहाँ पहुँचने के लिए पचास सीढ़ियाँ पार करनी पड़ती हैं।

प्रभु राम सीता का भव्य विवाहोत्सव, भद्राचलम

गर्भगृह में प्रभु राम की पद्मासन में विराजित विलक्षण चतुर्भुजी स्वयंभू प्रतिमा दर्शन देती है, जिसका आधार हमारे पुराणों में वर्णित एक रोचक दंतकथा है। रामायण काल में जब प्रभु राम दंडकारण्य में अपनी अर्धांगिनी सीता और अनुज लक्ष्मण के साथ निवास कर रहे थे, तब प्रभु की अनुकंपा से एक शिला को मानव रूप मिल गया था, जो मेरू पर्वत का पुत्र 'भद्रा' था। रामनाम का तारक मंत्र उसे देवर्षि नारद से प्राप्त हुआ था। कई सहस्र वर्ष शिला रूप में उसने कठोर तपस्या कर भगवान् के दर्शन प्राप्त किए थे और प्रभु राम ने उसकी तपस्या से प्रसन्न होकर उसे वचन भी दिया था कि लंका विजय पश्चात् वे आकर पुनः उसे कृतार्थ करेंगे। लेकिन प्रभु ऐसा कर न सके। रामावतार की परिणति हो गई। प्रभु दरस का

मूल प्रतिमा चतुर्भुजी

अभिलाषी भद्रा एक बार फिर निशि-दिन घोर तपस्या में डूब गया। उसकी देह से प्रज्वलित तपोग्नि से सप्त लोक काँप गए। दसों दिशाएँ थरथराने लगीं। पंच-भूत स्तंभित हो गए। सृष्टि हाहाकार करने लगी। देवों ने उसकी तपस्या भंग करने के सभी हथकंडे आजमा लिये, पर उसके निकट भी न जा पाए। अंततः हारकर वे सब भगवान् विष्णु की शरण में गए। तब भगवान् श्रीहरि क्षीर सागर में शयन कर रहे थे। उन्हें भद्रा की तपस्या से अवगत कराया गया। श्रीहरि सचेत हुए, अपनी भूल पर पश्चात्ताप हुआ। रामावतार और वचन भंग···घोर अपराध? तत्क्षण अविलंब चतुर्भुज विष्णु ने वायु वेग से भूलोक की ओर गमन किया। पीछे-पीछे शंख और सुदर्शन चक्र भी दौड़ने लगे। महालक्ष्मी भी उनका अनुगमन करती दौड़ने लगीं। शेषनाग भी उठकर कारण जाने बिना अपने प्रभु के पीछे दौड़ने लगे। गरुड़ भी वायु वेग से प्रभु के साथ चले जा रहे थे।

भद्रा के सम्मुख आकर भगवान् ने बाण-तूणीर धारण कर लिये। उसे रामावतार में दर्शन देने का वचन जो था। ऊपरी दो हाथों में शंख चक्र विराजमान हो गए। महालक्ष्मी सीता के रूप में आकर प्रभु की जंघा पर बैठ गईं और शेषनाग लक्ष्मण के रूप में धनुष-बाण लेकर मूर्तिमान हो गए। प्रभु भूल गए कि रामावतार में वे नर रूप में थे, नारायण नहीं। भद्रा की आँख खुली। सामने अपने आराध्य को देखकर वह विभोर हो गया। प्रभु के चरण-कमलों में शीश रखकर उसने प्रभु से वरदान माँगा कि प्रभु, इसी चतुर्भुज रामावतार में यहीं उसके शीश पर निवास करें। प्रभु के पास कोई विकल्प न था। भक्त के सामने प्रभु निरीह जो हो जाते हैं। और अब वचन भी निभाना था। उन्होंने उसे आशीर्वाद दिया। भद्रा ने पुनः अपना शिला रूप धारण कर लिया और प्रभु सीता, लक्ष्मण सहित अमूर्त से मूर्त प्रतिमा में रूपांतरित हो उस शिला पर प्रतिष्ठित हो गए। तभी से इस पठार का नाम 'भद्राद्री' पड़ गया और कालांतर में भद्राचलम के नाम से विख्यात हो गया। आज भी मूल मंदिर में विराजमान प्रभु राम की प्रतिमा चतुर्भुजी है और मंदिर को तीन भागों में विभाजित माना जाता है। प्रथम भाग भद्रा का शीर्ष है, जहाँ एक विशाल शिला के दर्शन होते हैं, जिस पर चंदन का तिलक लगाए जाने की परंपरा है, ताकि भक्तजनों को भद्रा के शीश का दर्शन सुलभ कराया जा सके।

मध्य भाग भद्रा के हृदय की प्रतीति देता है, जहाँ मूल गर्भगृह है और अंतिम यानी तीसरा भाग भद्रा के चरण हैं, जहाँ राजगोपुर बना हुआ है। मूल मंदिर के सामने स्वर्णजड़ित ध्वज-स्तंभ निर्मित किया गया है, जिस के ऊर्ध्व भाग में शिखर पर श्रीहरि के वाहन गरुड़ विराजे हैं, वहीं राजगोपुरम के ऊपरी तल के विमान वातायन में सहस्रकोणी अष्टमुखी

सुदर्शन चक्र उत्कीर्ण किया गया है। यह वही सुदर्शन चक्र है, जो रामदास को गोदावरी नदी की धारा में प्राप्त हुआ था। प्रांगण में और भी कई देवी-देवताओं के उपालय हैं, जिनमें अभय वरद हस्त हनुमान, योगमुद्राधारी लक्ष्मी, नरसिंह भगवान्, भगवती लक्ष्मी की मूर्तियों का नित्य पूजा-अर्चना आराधना का विधान है।

प्रांगण के बाहरी मार्ग में एक विशाल मंडप बना हुआ है, जहाँ हर वर्ष रामनवमी को प्रभु राम और जानकी के विवाहोत्सव का भव्य आयोजन किया जाता है। इसी मंडप के पास एक आश्रम है, जो कभी कई संतों का निवास स्थल हुआ करता था। दक्षिण दिशा के विशाल प्रकोष्ठ में भोजनालय भी बना हुआ है, जहाँ नित्य असंख्य भक्तों को भोजन कराने की व्यवस्था की जाती है।

भोजनालय के निकट ही एक संग्रहालय में भगवान् के गहने, जो भक्त रामदास ने बनवाए थे, उनकी रिहाई के अभिलेख, व्यय की रसीदें और प्रभु राम द्वारा लौटाई गई स्वर्णमुद्राएँ यथासंभव संरक्षित की गई हैं। तीर्थयात्री इन वस्तुओं का दर्शन कर सकते हैं। कोई कुछ भी कहे, हाथ कंगन को आरसी क्या? श्रद्धा का आधार विश्वास होता है। भक्ति अनुसंधान का क्षेत्र नहीं है। यहाँ विश्वास कर लेने के बाद ही ज्ञान के चक्षु खुलते हैं। तथ्य अनायास स्पष्ट होने लगता है। यह तो अपनी-अपनी श्रद्धा पर निर्भर करता है।

भद्राचलम से ३५ कि.मी. की दूरी पर है 'पर्णशाला' गाँव। वाल्मीकि रामायण के अनुसार यह वही जगह है, जहाँ दंडकारण्य के दौरान प्रभु राम ने कुटी बनाकर निवास किया था। यह वही स्थान है, जहाँ रावण ने ब्राह्मण वेश धारण कर छल से भगवती सीता का अपहरण कर लिया था और अपने विनाश के बीज बो दिए थे। पावन गोदावरी के तट पर बसा यह वह पवित्र स्थल है, जहाँ का कण-कण प्रभु महिमा से गुंजायमान होता रहता है। वेदों के अनुसार गोदावरी नदी भारत की सप्त पुण्य नदियों में से एक मानी गई है। वाल्मीकी रामायण के अरण्य कांड में प्रसंग आता है कि दंडकारण्य में दस वर्ष बिताने के बाद प्रभु श्रीराम ने मुनि अगस्त्य के निर्देश पर इस पावन स्थल पंचवटी (पाँच वट वृक्षों के समूह) में अपना आश्रम बनाकर निवास किया था। यहीं उनका परिचय न्यग्रोध वृक्ष पर निवास कर रहे जटायु से होता है। सज्जनों की रक्षा और दुर्जनों के त्राण हेतु लिए रामावतार में प्रभु कई राक्षसों का संहार इसी स्थल पर करते हैं।

पर्यटकों को यहाँ प्रभु की छोटी सी कुटिया में रामायण की चित्र दीर्घा के दर्शन हो जाते हैं। निकट ही है 'सीता ताल', जहाँ मान्यता है कि माँ सीता ने अरण्यवास दौरान स्नान किया था। ताल में लाल और पीले वर्ण के पत्थर देखने को मिल जाएँगे। कहते हैं, इन्हीं पत्थरों को रगड़कर माँ सीता अपने मुख पर कुंकुम और हल्दी का लेप किया करती थीं। शिलाओं पर भगवती सीता के वस्त्रों के निशान अंकित हैं। गोदावरी के ठीक विपरीत दिशा के तट पर एक शिलाखंड पर रावण के पुष्पक विमान के निशान आज भी स्पष्ट देखे जा सकते हैं। इनको 'रथमु कोंडलु' (रथ पर्वत) कहा जाता है। कहते हैं, यह शिलाखंड शापित है। इस पर दूब भी नहीं उगती है।

रामायण का स्मरण कराता यह स्थल पर्यटकों को विशेष रूप से आकर्षित करता है। यह पंचवटी प्रभु राम की तपोभूमि है, ऋषियों की यज्ञभूमि है, असुरों के संहार की भूमि है। इस स्थल का दर्शन भक्तों को रामरस में आद्यांत आप्लावित कर देता है। भद्राचलम से यहाँ तक पहुँचने के लिए या तो सड़क मार्ग का उपयोग किया जा सकता है या जल मार्ग का। पर गोदावरी में नौका विहार का आनंद मनो-मस्तिष्क को तरोताजा कर चेतना में ऊर्जा भर देता है।

संस्कृति, दर्शन और अध्यात्म की त्रिवेणी को अपनी जड़ों में गहराइयों से सहेजता इस स्थल का इतिहास हमारी सांस्कृतिक विरासत का अनुपम प्रतीक तो है ही, साथ ही साथ मानव मन की आत्मगत चेतना को ऊर्ध्व क्षितिज में प्रतिष्ठित करने के लिए भक्ति के आदर्श को संदर्भित करता हुआ उसे शाश्वत अर्थ प्रदान करता है। भद्राचलम की सांस्कृतिक यवनिका हिंदू आचार-विचार और परंपराओं के रेशों से बुनी हुई है, जिसका आधार है वाल्मीकि रामायण। आइए, हैदराबाद से लगभग तीन सौ किमी. दूर कल-कल बहती गोदावरी के तट पर प्राकृतिक सौंदर्य से आच्छादित इस तीर्थस्थल के दर्शनार्थ, जिसको श्रीविष्णु के १०८ दिव्य क्षेत्रों में गिना जाता है। जय श्रीराम… !

सा अ

आसन महाविद्यालय
चेन्नई-६००१०० (तमिलनाडु)
दूरभाष : ९०८०२३२६०६

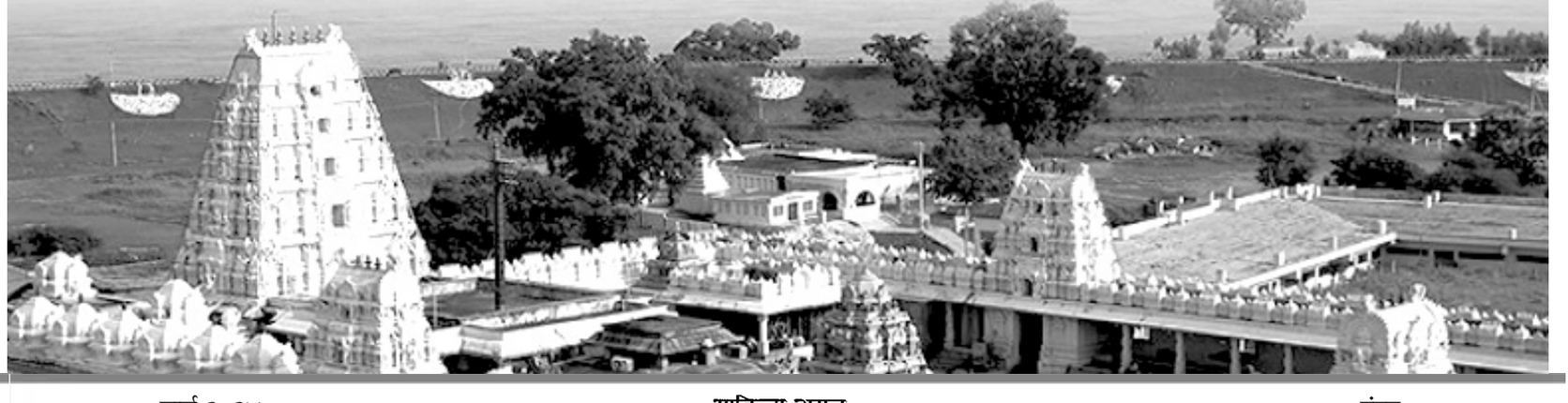

काकी

● रचना मीना

एक तालाब और एक भूली-बिसरी छोटी सी तलाई वाला गाँव था मेरा। कलौंसी मिट्टी पर पसरा हुआ। उसी मिट्टी से बनकर उठे हुए कच्चे घरों के समूह यहाँ-वहाँ अपनी पीठ जोड़े उस गाँव का अलग ही स्वरूप बनाते थे। वहीं घर था 'काकी' का।

काकी का नाम क्या था, मुझे स्मरण नहीं, किंतु उसकी मर्मस्पर्शी व्यथा-कथा, हृदय की सघन पीड़ा से मेरा प्रथम परिचय था, यह मुझे स्मरण है।

काकी का यही परिचय हो, ऐसा नहीं है। उसकी जीवंतता, हँसी-मसखरी करने का उसका स्वभाव, निर्जीव क्षणों में भी जीवन भरता था। बालपन में मुझे लगता था, वह हँसने-गुदगुदाने, चिढ़ाने-खिजाने के लिए ही बनी है। कभी-कभी उसके इस स्वभाव से डर मैं किसी कोने में उसके आते ही दुबक जाती, किंतु उसकी आँखें मुझे खोज लेती थीं। उन आँखों में कुछ ऐसा भाव था, जिससे मेरा बालमन अनभिज्ञ था और भयभीत भी। कुछ देर चिढ़ाकर, छकाकर फिर वह बहुत लाड़-प्यार करती और वात्सल्य से भरा हाथ माथे पर फेरती। इस घटनाक्रम की जब-जब हम गाँव जाते, सदैव पुनरावृत्ति होती। उसका व्यक्तित्व मेरे लिए अजब पहेली था।

मेरे पिता गाँव में अपनी पीढ़ी के सभी संबंधियों में बड़े थे, सो अधिकांशत: जो भी पुरुष मिलने आते, उन्हें हम काका बुलाते और उनकी पत्नियों को काकी। वे सभी एक लंबा घूँघट काढ़े आतीं और मेरे पिता की उपस्थिति में घूँघट की ओट से ही फुसफुसाकर कुशल-क्षेम पूछती थीं। यही कारण रहा होगा कि उनमें से अधिकांश के मुखमंडल के दर्शन कभी हुए ही नहीं। हाँ, ओढ़नी व लहँगे में सिर से पाँव तक लिपटी कद-काठी और चाल-ढाल से वह कौन है, यह पहचान में हम बच्चे कुछ सीमा तक सिद्धहस्त हो चुके थे।

परंतु यह मेरी काकी, घूँघट-परदे के इन सांसारिक बंधनों से मानो बहुत ऊपर उठ चुकी थी। अचंभा तो यह था कि गाँव भर में कोई भी उसे इन सामाजिक वर्जनाओं को तोड़ने का दोषी नहीं मानता था। कौन जेठ लगता है, कौन देवर, कौन सास है तो कौन जेठानी, इन सभी बातों से उसे जैसे सब ने मुक्ति दे रखी थी। वह मनमौजी जब दिल करता तब ही ओढ़नी को आँखों पर खींचती और जब-तब, जिसके आगे चाहे, चिलम के लिए हाथ बढ़ा देती। चौपाल पर बैठे किसी जेठ-देवर के हाथ से सुलगाई हुई बीड़ी छीन ले जाना उसके लिए सहज बात थी।

कभी-कभी मैं उससे कहती, "काकी, चिलम-बीड़ी पीना छोड़ दे, इससे बहुत बड़ी-बड़ी बीमारियाँ लग जाएँगी।"

और वह मुसकराकर रह जाती। चिलम को माध्यम बना मानो जीवन की साँसें खींचती जाती थी। नाक-मुँह से निकलते धुएँ की परवाह किए बिना उत्तर देती, "अरी बेटी, अब यह तो रामजी के घर ही छूटेगी।"

वह रसिया गाती थी। इतनी ऊँची टेर थी उसकी कि दूसरे गाँवों से आई रसिया गाने वाले आदमियों की टोलियाँ की टोलियाँ उसकी बराबरी नहीं कर पाती थीं। राजा मोरध्वज की कथा हो या नरसीजी का मायरा, वह कथानक के छंद रचती जाती और गाती जाती। अनपढ़ थी, पर उसके हृदय की हिलोरों में जैसे आत्मा का ज्ञान समाहित था। गाने पर आ जाती तो घंटों गाती। न आगे पुरुष देखती ,न स्त्री, न जात पूछती, न गाँव। उसके लिए जैसे ये सारे अंतर और पहचान अर्थहीन थे।

सतयुग की किसी कथा से अपना राग मिलाती और तुकबंदी में उसे त्रेतायुग तक ऐसे जोड़ देती कि सब दंग रह जाते। पर उसको जैसे हर काम की माफी थी। अंत में उसका लोहा मान रसिया में हार मानने वाले उसकी ओढ़नी के कोने में रुपया बाँध अपनी हार स्वीकार करके बैठ जाते।

राजनीति शास्त्र में राजस्थान विश्वविद्यालय से स्नातकोत्तर। हिंदी साहित्य के प्रति रुझान का अनमोल उपहार उन्हें अपनी माँ से संस्कार रूप में प्राप्त हुआ। भावाभिव्यक्ति की सरसता और रचनात्मक लेखन शैली के चलते उन्होंने मीडिया और कई संगठनों के लिए लेखन कार्य किया है। एक कविता-संग्रह 'मन' २०१० में प्रकाशित और एक कहानी-संग्रह शीघ्र प्रकाश्य।

कहीं भी पसरकर बैठी हुई वह बस्ती में लोगों के मध्य भी मुझे कभी-कभी ऐसी प्रतीत होती, जैसे किसी अघोरी साधु ने श्मशान के मध्य अपनी धूनी रमा रखी हो। सांसारिक क्रिया-कलापों में सशरीर उपस्थिति के पश्चात् भी उसकी आत्मा का किसी और लोक में विचरण मेरे अबोध मन को भयभीत करता था।

इसी भाँति प्रतिवर्ष हम जाते रहे और काकी के चेहरे पर वे वर्ष लकीरों में बदल स्थायित्व लेते रहे। चेहरा बदलता गया, परंतु वह नहीं बदली। जितनी काकी में चंचलता व चपलता थी, काका उतने ही गंभीर व सूने से थे। उनका भारी-भरकम डील-डौल था। गहरे साँवले रंग पर पीली सी निस्तेज आँखें कुछ अलग ही कथा कहती थीं।

मेरे माता-पिता शहर में रहकर भी गाँव के उनके अपनों के सुख-दु:ख से अपनी संवेदना के तार जोड़े रखते थे। हम और बाहर रहने वाले चाचाओं के परिवार प्रत्येक दीपावली हमारे गाँव में बसे बड़े चाचा के परिवार के सान्निध्य में मनाते। गाँव के हमारे भाई-बहन और हम सभी बच्चे वर्ष भर दीपावली की प्रतीक्षा करते, ताकि खूब हुड़दंग मचा सकें। वे दिन कितने भी अधिक क्यों न होते, बस पंख लगा उड़ जाया करते थे। अलसुबह दूर-दूर तक फैले, धुंध में अँटे-लिपटे से सरसों के खेत और उनके मध्य की ऊबड़-खाबड़ पगडंडियाँ दृष्टि से दूर होते-होते कहीं लोप हो जाती थीं।

दोपहर में से साँझ न जाने कब प्रकट हो जाती और चूल्हे से उठती सुनहरी, लपकती लपटें चमचमाने लगतीं। धुएँ और गुँधे हुए आटे की मिली-जुली सुगंध भूख जगा देती। बीच से फोड़ी हुई रोटी और उस पर रखा ढेर सा पिघलता मक्खन जैसा होता था, वैसा तृप्तिदायक कोई भोजन हो सकता है, यह मेरी कल्पना से परे है।

फिर प्रारंभ होता कथाओं की धूल छाई पोथियों की वर्षों पुरानी बखिया उधेड़ने का क्रम। कभी धीमे-धीमे अलसाया सा गहरा स्वर चाचा का सुनाई देता, तो कभी दिन भर की थकी चाचियों की मेरी माँ से लंबी चर्चा चल निकलती। घर में सभी अपने विचार प्रकट करने, अपने ही निकाले निष्कर्षों पर, अपने ही संशय दूर करने या अन्य किसी मार्गदर्शन के लिए माँ पर निर्भर रहते थे। और इस सब में सम्मान, धैर्य व प्रेम का ऐसा भाव था, जो अधिकांशत: देखने को नहीं मिलता। ऐसे में बच्चों से घिरी होती थी 'जीजी', यानी मेरी दादी। उन्होंने सही समय पर सांसारिक उलझनों से जैसे संन्यास ले लिया था।

तब तक मेरी सोच संभवत: कुछ परिपक्व होने लगी थी। उसी अधकच्ची परिपक्वता से मैंने जीजी से पूछा, "जीजी, यह काकी ऐसी क्यों है? और इसकी बात का कोई बुरा भी नहीं मानता!"

तब दया भरी हँसी हँसकर जीजी बोली, "यह जो तेरी काकी है, इसका तीन पुत्रों से भरा-पूरा एक घर संसार था। गरीबनी विधाता के हाथों छली है।

"इसका बड़ा पुत्र एक दिन तालाब में प्रतिदिन की भाँति नहाने गया और न जाने क्या हुआ कि तालाब से बाहर नहीं आ पाया। यह दुखियारी जवान बेटे का दु:ख झेल टूट गई। पर दो छोटे बेटों का मुँह देख इसने स्वयं को सँभाल किसी तरह धीर धरा। माह-दो माह ही बीते होंगे कि गाँव में मियादी बुखार फैला। इसके दोनों पुत्र बुखार की चपेट में आ गए। यह रात-दिन उनके सिरहाने बैठी रहती, पर माँ के आँचल की ओट में जीवन दीप ठहर न पाया। अभागिन के एक पुत्र को जब श्मशान में जलाकर लौटे तो दूसरा भी खाट में मृत मिला।

"सब भाग्य का खेल है, बेटा।

"यह सुध-बुध खोकर पागल हो गई। रात-रात उठकर कुएँ की ओर दौड़ पड़ती। इसका दु:ख किसी से देखा न जाता था। पूरा गाँव इसके आँसू रोता था। इसकी साँस तो शेष रह गई, किंतु प्राण और आत्मा पुत्रों के साथ ही चली गई। अब हँसी-ठिठोली के सहारे जीवन काट रही है। जिस पर ईश्वर की लाठी पड़ी हो, उसे कोई और क्या कहे और क्या न कहे!

"अब सो जा।" कहकर जीजी ने जैसे खुली किताब के पन्नों को पुन: जिल्द के कारागार में बंद कर दिया, परंतु मेरी अंतरात्मा में कानों में गूँज रही, इस व्यथा-कथा के पीछे छिपे शब्दों की पीड़ा गहरी, और गहरी पैठती रही।

वह निर्धन थी, यह मैं जानती थी। थोड़े से खेत थे। गाँव भर में अधिकांश किसान अब ट्रैक्टर का उपयोग करते थे, किंतु उसके बाड़े में तब भी बैलों की जोड़ी थी और एक हल। हल हाँकने का काम काका करते थे। प्रतिवर्ष अब गाँव में कच्चे घर टूट रहे थे और उनके स्थान पर एक या दो पक्के कमरे बना लोग संपन्न होते जा रहे थे, परंतु काकी का 'मैड़ी-ओबरा' ज्यों का त्यों था। मैड़ी-ओबरा, अर्थात् गारे-मिट्टी का दो मंजिला घर, जिसे फूस की छत डालकर अपने हाथों से बनाया जाता है। उसकी आर्थिक स्थिति का वर्णन वह कण-कण करता था, जिस पर कि उसका अधिकार था।

निर्धन तो अनेक होते हैं इस जग में। किसी सबल-संपन्न की अनुकंपा हो जाए तो विपन्नता से संपन्नता की ओर बढ़ने का मार्ग उतना दुर्गम भी नहीं रहता। किंतु इस जगत् में जनमा कोई इतना सक्षम न था, जो काकी की झोली भर सके। इन्हीं विचारों के भँवरचक्र में घूमते-घूमते न जाने कब मेरी आँख लग गई।

अगली प्रात: दीपावली के दिन का प्रारंभ था। सुबह-सवेरे से ही एक अलग उल्लास हवा में घुलकर बह रहा था। तालाब पर स्नान करने वालों का ताँता लगा था।

खेतों में कड़ा परिश्रम करने वाली, धूल-मिट्टी को जीवन का अभिन्न अंग मानने वाली ग्रामीण स्त्रियाँ आज तालाब किनारे के पत्थर पर बैठ, काले मटमैले हाथों पर से छोटा, खुरदुरा पत्थर रगड़-रगड़कर मानो आज के दिन के लिए मिट्टी-मैल से अपना चिर स्थायी संबंध तोड़ देना चाहती थीं। दो घड़ी आपस में बतियाते, घड़ी भर को पानी में डुबकी लगाते और घंटा भर काली मिट्टी से धुले बाल सुखाते बीत जाता और

समय बचता तो बगल की कँटीली झाड़ी पर ओढ़नी टाँगकर परदा बनाया जाता, फिर बालों को सरसों के तेल से चिपकाकर उनमें मेड़े गूँथे जाते। कहीं नई ओढ़नी, काजल, बिंदी के जतन किए जाते।

फिर प्रारंभ होता भोजन आदि बनाने का क्रम। कोई साल भर एकत्र किए देशी घी में पुए और छाछ का करारा बनाती तो कोई पूड़ी-साग। लोहे की बड़ी करछी के नुकीले पिछले सिरे मे पिरो-पिरोकर पूड़ियाँ कड़ाही से निकाली जाती थीं। जब तक मैंने स्वयं नहीं देखा, तब तक पूड़ियों के मध्य एक बड़ा सा छेद मेरे लिए कौतुक का विषय रहा करता था।

अधिकांशत: बाल-बच्चेदार स्त्रियाँ लीपने-पोतने का कार्य दीपावली के एक-दो दिन पहले निबटा चुकी होती थीं, ताकि बच्चों को प्रेम से कुछ बनाकर खिलाने का पर्याप्त समय बच जाए। मुझे चित्रकारी का बहुत चाव रहा, इसलिए प्रारंभ से ही जब भी घर के आँगन में माँड़ने बनते, मैं भी खड़िया की एक कटोरी और कपड़े की लीर लेकर बैठ जाती थी। धीरे-धीरे माँड़नों के स्वरूप और कला से हमारा भी परिचय हो गया। कोई सुंदर साफ सा माँड़ना बनता तो सब से सराहना भी मिलती।

मेरी आयु इतनी नहीं थी कि किसी एक विचार पर बहुत लंबे समय तक मेरी बुद्धि टिक सके, अत: रात को काकी की वेदना को हृदय से अनुभव करके भी त्योहार के उल्लास में मैं दोपहर तक पूर्णत: डूब चुकी थी। तभी देखा तो मैड़ी-ओबरे की असमान सी सीढ़ियाँ उतर, पीले रंग की ओढ़नी ओढ़े काकी आ रही थी।

मेरी दृष्टि उस पर टिक गई। चार कदम पर गली के दूसरी ओर उसका घर था। उसके सारे कार्यकलाप हमारे घर से दिखाई देते थे। वह हमें देख उत्साह से हमारी ओर आई। देखा कि उसने बिंदी भी लगाई है और काजल भी। उसे देख लगा कि किसी समय वह बहुत सुंदर रही होगी। चिलम के धुएँ से पीले पड़े दाँत दिखाकर हँसती हुई वह आकर मेरा हाथ पकड़ मुझसे बोली, "चल बेटा, म्हारा घर मैं एक जगह थारे लियाँ रखी है। एक माँड़नों माँड़ दै।"

मैंने हर बार की भाँति उससे बचने-छिपने का प्रयास नहीं किया। उसका हाथ थामे यंत्रवत् मैं उसके साथ चल दी।

हाथों से बनाई उसकी कच्ची गारे की सीढ़ियाँ चढ़कर घर के ऊपरी हिस्से में पहुँची, जहाँ की छत फूस की थी। पहली बार उसके घर में प्रवेश किया तो पाया, उसके द्वार पर कमर झुकाएँ बिना प्रवेश संभव नहीं है। भीतर एक चारपाई थी। एक कोने से दूसरे कोने तक मूँज की रस्सी बँधी थी, जिस पर उसके कपड़े टँगे थे। एक कोने में चूल्हा था, जिसके धुएँ से सारी फूस की छत काली पड़ी थी और पैरों के नीचे था ताजा लिपा फर्श। उसके मध्य में उसने मेरे माँड़ने के लिए स्थान सुरक्षित रखा था। मुझे कुछ खिलाने के लिए उसने सारे बरतन देख डाले। उसका मेरे प्रति प्रेम का ऐसा भाव था कि मेरा बालमन उसके वात्सल्य भरे स्नेह की आँच से मुझे पिघला सा अनुभव हो रहा था।

हाथों से बनाई उसकी कच्ची गारे की सीढ़ियाँ चढ़कर घर के ऊपरी हिस्से में पहुँची, जहाँ की छत फूस की थी। पहली बार उसके घर में प्रवेश किया तो पाया, उसके द्वार पर कमर झुकाएँ बिना प्रवेश संभव नहीं है। भीतर एक चारपाई थी। एक कोने से दूसरे कोने तक मूँज की रस्सी बँधी थी, जिस पर उसके कपड़े टँगे थे। एक कोने में चूल्हा था, जिसके धुएँ से सारी फूस की छत काली पड़ी थी और पैरों के नीचे था ताजा लिपा फर्श। उसके मध्य में उसने मेरे माँड़ने के लिए स्थान सुरक्षित रखा था। मुझे कुछ खिलाने के लिए उसने सारे बरतन देख डाले। उसका मेरे प्रति प्रेम का ऐसा भाव था कि मेरा बालमन उसके वात्सल्य भरे स्नेह की आँच से मुझे पिघला सा अनुभव हो रहा था।

मैंने बड़ी लगन से उसके घर माँड़ना बनाया और वह पूरे समय उससे जाने कितना गुना अधिक लगन हृदय में ले निरंतर उसे निहारती रही। पूरा होने पर मुझसे बोली, "अब जब तू अगली बार आएगी, तब तक मैं इसे देख तुझे याद करूँगी।" मैंने कहा, "काकी, जब तू घर लीपेगी, तब तो यह मिट जाएगा।"

तब उसका उत्तर था कि सारा घर लीपूँगी, किंतु इस माँड़ने को छोड़कर।

फिर बड़े जोर से हँस मेरे माथे पर हाथ फेर, उसी प्रेम से मुझे घर छोड़ गई, जैसे कोई किसी की धरोहर को सँभालकर ले जाता है और सँभालकर लौटाता है।

समय किसी के लिए रुकता नहीं। हम सब बच्चे भी बड़े हो गए। शनै:-शनै: पढ़ाई के कारण गाँव आना-जाना अब किसी के शादी-ब्याहों तक सीमित हो गया। इसी बीच जब गाँव से कोई आता, मैं अधिकांशत: सबकी कुशलक्षेम के साथ काकी की कुशलक्षेम पूछना नहीं भूलती।

एक दिन पता चला, काका का हाथ घास काटने की मशीन में आ गया और दुर्भाग्य की जीवन भर चलती अतिवृष्टि से आई बाढ़ में काकी का सर्वस्व बह गया। वे हल जोतने वाले हाथ ही अब अपाहिज हो गए तो कैसे उनका जीवनयापन होगा! यह दु:खद समाचार मुझे भीतर तक व्यथित कर गया।

इसके पश्चात् अनेकानेक बार गरीबी रेखा से नीचे आने वाले लोगों की विभिन्न सरकारी परियोजनाओं में मिलने वाली सहायता के लिए मैंने माँ को काका-काकी का नाम उठाते सुना, किंतु अंतत: उनका जीवन कैसे चला, यह या तो वे स्वयं जानते थे या उनका ईश्वर।

बहुत समय बाद फिर एक बार गाँव जाना हुआ, तब मैंने प्रथम बार काकी को आँसू पोंछते देखा। वह बहुत बूढ़ी लगने लगी थी। न मैं उससे उसी बचपन की सहजता से बात कर पाई, न वह किसी हँसी-मसखरी की स्थिति में थी।

आज मुझे गृहस्थी से अवकाश नहीं मिलता, किंतु विचारों की सतत प्रक्रिया में काकी का जीवन-चक्र चलता रहता है। मैं आज एक माता की

भावनाओं और जीवनयापन के लिए मनुष्य द्वारा किए जाने वाले प्रयासों का मर्म भलीभाँति समझने में सक्षम हूँ।

एक हरी-भरी बगिया का उजड़ना उसके माली के हृदय को कितना छलनी कर सकता है, एक नीड़ से गिरकर फूटे हुए अंडे के पास बैठी चिड़िया का स्वर इतना मार्मिक क्यों होता है? बछिया को जन्म देने वाली गाय उसे घड़ी भर भी न देखे तो रँभा-रँभाकर आसमान सिर पर उठा लेती है। तब वह तो हाड़-मांस और उसमें हर क्षण धड़कता हृदय लिये एक जीती-जागती स्त्री थी।

सूने मैड़ी-ओबरे में उसकी आत्मा ने अनगिनत पछाड़ें खाई होंगी। उसकी हँसी-ठिठोली के पीछे छिपे रुदन की गूँज साधारण कानों को भले ही सुनाई न दे, किंतु क्या ईश्वर तक भी नहीं पहुँची?

कुछ जीवन ऐसे होते हैं, जहाँ लगता है कि जन्ममात्र दुर्भाग्य झेलने के लिए हुआ है। ऐसा क्यों है? इसका उत्तर हमारे पास नहीं है। फिर जीवन में अधिकांश बार दिया हुआ, सुना हुआ एक ही उत्तर बचता है कि ईश्वर की यही इच्छा है।

जीवन के उल्टे बहते धारों के साथ संघर्ष करके भी काकी जीवन के प्रति नकारात्मक नहीं हुई। पल-पल कड़वे घूँट पीकर भी सबके लिए मीठी रही। विषम परिस्थितियों में भी वह हँसी के सम स्वरों की ताल और लय नहीं भूली।

गोधूलि के मटमैले रंग में धुएँ की कालिमा जब मिलती है, मुझे अपनी छोटी सी मैड़ी के सँकरे द्वार के पास कुछ ऊँची-नीची सी सीढ़ियों पर बैठ शून्य में रीती आँखों से एकटक देखती काकी की छवि दिखाई देती है।

वह ईश्वर, जिसकी इच्छा से सब जग चलता है, मानो उससे पूछती हो—

"घाव गहरे,
हृदय, सह रे
नि:शब्द आँखों से,
शब्द बह रे
मैं ही क्यों
हे मेरे विधाता,
समक्ष आकर
कभी तो कह रे!"

साअ
अनुराग निवास, होटल अनुरागा पैलेस,
रणथंभौर रोड, सवाईमाधोपुर-३२२००१ (राज.)
दूरभाष : ९६३६००२२२२

बाल-कविता

रंगों का त्योहार

● गोविंद भारद्वाज

दौड़ा-दौड़ा फिर आया,
रंगों वाला त्योहार।
ये ऋतु बसंत बीत गई,
बरसा फागुन का प्यार।

फसल पकी खेतों में अब,
आई कटन की बारी।
अबीर-गुलाल के संग,
हुई सब की तैयारी।

फागुन गीत गाएँ सभी,
करे हैं खूब ठिठोली।
बच्चों के मन को भाती,
अपनी अनोखी होली।

स्वागत हो गरमी का यों,
बजे हैं ढोल-नगाड़े।

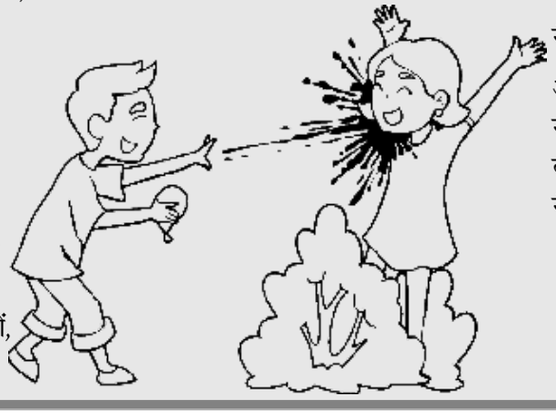

झूम-झूम बस्ती में सब,
अलग ही झंडे गाड़े।

भेदभाव भूल सभी फिर,
मिलते आपस में गले।
पानी की बौछार संग,
रंग मुख पर खूब मले।

आपस में घुल-मिल जाए,
सब रंग भरा संसार।
दौड़ा-दौड़ा फिर आया,
रंगों वाला त्योहार।

साअ
पितृकृपा, ४/२५४, बी-ब्लॉक,
हाउसिंग बोर्ड कॉलोनी,
पंचशील नगर, अजमेर-३०५००४ (राज.)

तब समझ पाता हूँ मेरी माँ के राम

● **राजशेखर ब्यास**

मेरी माँ के राम—बचपन में मैं रामद्रोही था, रामद्रोही से चौंकें नहीं, न शाब्दिक अर्थ पर चले जाए, जैसे हर युवा को जवानी में अकल का अजीर्ण हो जाता है, मुझे भी हो गया था, अर्थात् दुनिया भर का साहित्य पढ़ मार्क्स, लेनिन, ओशो-रजनीश, जिद्दु कृष्णमूर्ति पढ़कर आपको सर्व ज्ञानी होने का भ्रम होता है, तब आप लोकमानस में सहज-सरल विराजमान ज्ञान के बड़े भारी आलोचक हो जाते हैं, ज्ञान का यह भ्रम आपको अज्ञानी बना देता है, तो मैं भी कुछ-कुछ वैसा आलोचक बचपन में रोजाना मेरी माँ के पाँव दबाकर उनसे कहानी सुनकर उनके पास ही सोता था। माँ नियमित रामायण, महाभारत, कलिदास रघुवंश, दुष्यंत, शकुंतला, नल-दमयंती सुनाती और सुनाने का उनका अंदाज इतना रोचक होता कि आप पाँव दबाना बंद ही नहीं करते, क्योंकि रामानंद सागर और बी.आर. चोपड़ा के रामायण महाभारत के दूरदर्शन पर जन्म से बहुत पहले वे कथा धारावाहिक रूप में सुनाती थी और बेहद रोचक रोमांचक क्षण में रोकती—बस! आज इतना ही। जिस से कथा की रोचकता हमें दूसरे दिन फिर माँ के चरणों में ले आती!

ऐसे ही एक दिन भवभूति की उत्तर रामचरित सुनकर मैंने कह दिया—माँ, तुम भी किन राम की पूजा करती हो? वह राम जिसने अपनी गर्भवती स्त्री सीता माँ को जंगल में छोड़ दिया? वह राम जिसने अपने छोटे-छोटे बच्चे लव-कुश तक को न कभी खिलाया, न उनकी चिंता की, किस राम की पूजा करती हो तुम? प्राय: ही अपने ज्ञान के अज्ञान में डूबा मैं ऐसे अंहकारजन्य प्रश्न उठाकर माँ को निरुत्तर कर सोचता, मैं कितना बड़ा ज्ञानी हूँ, जानता न था, रामभक्त माँ कितनी बड़ी अध्येता हैं या कि वे विख्यात विद्वान् पद्म भूषण पंडित सूर्यनारायण व्यास की सहचरी हैं तो कोई अज्ञानी स्त्री तो न होगी!

पर जब रामकथा आती, मैं राम-विरोधी तब का रामद्रोही माँ पर सवाल के गोले दागता, बाली के वध को अंबेडकर और ओशो-रजनीश के शब्द में हत्या बताता, कभी शंबूक वध, कभी घर का भेदी विभीषण

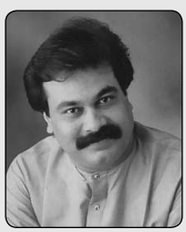

सुपरिचित लेखक, संपादक एवं निर्माता-निदेशक। केवल १२ वर्ष की वय में पितृविहीन हो चले 'यायावर'। ५९ से अधिक क्रांतिकारी ग्रंथ, ४,००० से ज्यादा लेख देश-विदेश के सभी अखबारों में प्रकाशित; २०० से ज्यादा वृत्तचित्र, कार्यक्रम, रूपक, फीचर, रिपोर्ताज टी.वी. पर प्रसारित। भारतीय दूरदर्शन में सबसे अल्पायु के आई.बी.एस. अधिकारी 'अतिरिक्त महानिदेशक'।

की निंदा करता, कहता कि मान लो रावण रहस्य पूछते तो? माँ हमेशा मौन मूक हँसकर मुझे उत्तर न देती, एक दिन अति हो गई! मैंने राम-सीता प्रसंग में राम को स्त्री विरोधी और पत्नी बच्चों का दोषी कहा, सदा की तरह! बस वह माँ की मर्यादा का अंतिम क्षण था, उसने पहली बार गुस्से में भरकर मुझ से कहा, 'बस! अब एक शब्द मेरे राम के खिलाफ बोला तो, मैं तुझे तज दूँगी, तेरी सूरत भी नहीं देखूँगी', दो पंक्ति बोली, 'जाके प्रिय न राम वैदेही। तजिए ताहे परम स्नेही॥ बस, अब एक शब्द न सुनूँगी, क्या जानता है तू राम के बारे में? कौन से राम? किस राम के बारे में जानता है तू? भवभूति के राम, कालिदास के राम, वाल्मीकि के राम, कंबन के राम, कृतिवास के राम? क्रोध में माँ का चेहरा रोष से रक्तिम हो गया था। माँ बोली, जिस राम को तू जानता है, वह तो राजा राम हैं, आज तुम अगर माधव राव सिंधिया या राजीव गांधी की पत्नी के खिलाफ एक शब्द भी सार्वजनिक बोल दो तो वे क्या करेंगे (मेरे युवा होने तक ये सत्ता में आने वाले लोकप्रिय युवा नेता थे)? मैंने कहा, 'उठाकर बंद करवा देंगे।' बस यही तो! माँ बोली, मेरे राम और तुम्हारे युग के राम में फर्क है! मेरा राम भी चाहता तो उस धोबी को, जिसने सीता के विरुद्ध अपशब्द बोला, बंद नहीं करवा सकते थे? सारे परिवार को बंदी बना लेते, पर तुम्हारे राजा और हमारे राजा में यही फर्क है, तुम्हारा राजा अपनी खुशी के लिए प्रजा को दु:खी करने में कोई कसर न छोड़ेगा, मेरा राजा प्रजा के सुख के लिए अपने सुख का त्याग कर

खुद दु:ख भोगेगा! कहते-कहते माँ फफक पड़ीं, 'तूझे पता है शेखर! मेरा राम जब दरबार से उठकर अपने अंत:पुर में जाता था और जब अपना मुकुट उतारकर सहज-सरल राम होता था, तब सीता को याद कर, अपने दोनों बेटों को याद कर कितना रोता था?

मैं भला कैसे जानता? मैंने उस राम को देखा कब था? पर मैं अपनी माँ के चेहरे पर उसके आँसुओं में उस राम को देख रहा था! फिर माँ ने राम की मर्यादा पर उनकी करुणा पर बोलते हुए, मानों मुझे शाप ही दे दिया, देखना शेखर, जब तू अपनी सीता, अपने लव-कुश से विरह पाएगा, उस दिन समझेगा मेरे राम को! मुझे नहीं मालूम था, भविष्य दर्शन के सर्वोच्च सूर्य की वह पतिव्रता स्त्री भी भविष्य दृष्टा थी, या पूज्य पिता ने उसे मेरा भविष्य बता दिया था, मैं नहीं जानता था, वह अपने पिता में मर्यादा पुरुषोत्तम राम देखती हैं, जिसने पिता के सुख के लिए अपना महल त्याग दिया! आज जब मैं अपनी सीता और मेरे लव-कुश से दूर होता हूँ, तब राम की विरह-वेदना के एक सूक्ष्म आँसू में ही बह जाता हूँ।

साअ
भारती भवन (महाकाल)
उज्जैन-४५६००६ (म.प्र.)
दूरभाष : ९९९९०७००५९

कविता

प्राण-प्रतिष्ठा हर्ष

• दिनेश भारद्वाज

रामलला की जन्मभूमि का पूर्ण हुआ संघर्ष।
स्वर्गादपि गरीयसी में नव प्राण प्रतिष्ठा हर्ष॥

यज्ञदेव की प्रणित खीर से, जनमे त्रेतायुग में।
जनयज्ञों की आहुतियों से, प्रकट हैं कलियुग में॥
संविधान की खीर प्रणित है, पंचपीठ का निर्णय—
अमर रहेगी संस्कृति की यह, जन आस्था हर युग में॥

स्वीकृत शाश्वत सत्य प्रणित है सदा न्याय उत्कर्ष।
न्याय प्राप्ति में लगे भले ही सतत पाँच सौ वर्ष॥

कुटीवास चौदह बरस, इकतीस वर्षीय तिरपाल।
तब तो निशिचर नाश किया, अब बने अधर्मी काल॥
मंदिर का निर्माण बना है, नए राष्ट्र की थाती—
शिखर ध्वजा से उन्नत होगा, भारत माँ का भाल॥

साष्टांग दंडवत् कर मोदी ने किया चरण स्पर्श।
भारत के प्रधानमंत्री का यही भरत आदर्श॥

लोकतंत्र ने परतंत्री दुष्कर्म नाश, अभियान किया।
रामनामी सत्याग्रहियों ने, जीवन बलिदान किया॥
मैं उरई में कैद किया था, विद्रोही सरकार ने—
कारसेवकों ने बाबरी ढाँचे का संहार किया॥

प्रीति नहीं होती है भय बिन राम मंत्र निष्कर्ष।
आदर्शों की मर्यादा का होता तभी विमर्श॥

भारतीय संस्कृति के तो, अधिष्ठान ही राम हैं।
सारा विश्वादर भी जिनको, करता सदा प्रमाण है॥
असंभवों का हुआ समन्वय, वाल्मीकि के राम में—
मर्यादा पुरुषोत्तम ही तो, ज्ञानशील गुणधाम हैं॥

वीरोचित सौंदर्यमयी शिव सत्यों के प्रादर्श।
आलोकित ब्रह्मांडों के अखंड जीवन आकर्ष॥

अनगिन कविगण गुणगान करें, स्वयं काव्य हैं राम।
संस्कृति की अस्मिता राम हैं, राष्ट्र पुरुष हैं राम॥
सारे भारत के नगर गाँव हैं, पुण्य अयोध्या धाम।
न्यायिक लौकिक अलौकिक, अब हैं लोकतंत्र के राम॥

राम राम बस राम ही अनन्यतम सत्यादर्श।
रामाचरणों से मिटते सब जीवन के अपकर्ष॥

साअ
गांधी पार्क के पास, एम.एस. रोड जौरा,
जिला मुरैना (म.प्र.)
दूरभाष : ७०४७६७९५७७

कालचक्र

• एम.डी. मिश्रा 'आनंद'

'राम-नाम सत्य है' ध्वनि के साथ पंडित रामदास की शवयात्रा में मात्र दस-ग्यारह लोग एक-दूसरे से दूरी बनाकर चल रहे थे। संपूर्ण संसार कोरोना काल से ग्रसित त्राहि-त्राहि कर रहा है। हमारा भारतवर्ष भी इससे अछूता नहीं था। पूरा देश लॉकडाउन के पहले प्रयोग के तौर पर एक दिवस सफल होने के उपरांत इक्कीस दिन कर दिया गया। सभी अपने घरों में बंद; जो जहाँ था, वहीं रह गया। सभी रेलगाड़ियाँ, बसें बंद कर दी गईं। हवाई सेवाएँ रोक दी गई थीं। प्राणी अपने घरों में भयभीत थे। टेलीविजन चालू थे। अनेक विकसित देशों के कोरोना से मृत्यु के आँकड़े बताए जा रहे थे। और बार-बार घरों में ही रहने के संदेश प्रसारित हो रहे थे।

रामदास के बड़े बेटे अंचल ने नगर में आजकल की प्रथा के अनुसार पूज्य पिता के स्वर्ग सिधारने का समाचार वाट्सएप पर डाल दिया था कि अंतिम संस्कार ग्यारह बजे तक होना है और शवयात्रा प्रात: आठ बजे निज निवास से प्रारंभ होगी। वह जानते थे, पिताश्री ने इस नगर सहित अन्य समीपस्थ ग्रामों के लोगों को शिक्षित बनाया है। वह जीवन भर इसी शासकीय स्कूल में शिक्षक रहे। शासकीय सेवा से निवृत्त होने के पश्चात् नि:शुल्क शिक्षा दान करते रहे। उनके पढ़ाए कुछ छात्र शासकीय उच्च पदों पर पदस्थ थे, जिससे क्षेत्र भर में उनका बहुत सम्मान था। जब लोगों तक खबर पहुँचेगी तो भीड़ उमड़ पड़ेगी, किंतु ऐसा नहीं हुआ। क्योंकि सभी लोग शासन के आदेशों का पालन करने को विवश थे। और उससे अधिक कोरोना के संक्रमण होने का भय व्याप्त था। कहते हैं कि 'जान है तो जहान है।' अदृश्य काल, जिसके गाल में अनेक प्राणी समा गए थे। इस अंधकार को पराजित करने के लिए एक रात्रि नौ मिनट के लिए दीपक जलाने थे, जो प्रकाश का प्रतीक है। वह यादगार समय था पाँच अप्रैल। मेवालाल ने ध्यान भंग किया, क्यों अंचल भैया, छोटे भाई विकास अमेरिका से नहीं आए, उन्हें खबर तो गई होगी।

काका उन्हें खबर तो पहले ही कर दी थी और वह ठीक समय पर स्वदेश आ गए थे। अमेरिका, जो ऊँचे पड़े-लिखे लोगों का स्वर्ग माना जा रहा था, आज मरघट बन गया है। एक दिन में हजारों लोग कोरोना काल के गाल में समा रहे हैं। विकास जैसे ही परिवार के साथ दिल्ली पहुँचे थे एयरपोर्ट पर जाँच करके चौदह दिन के लिए क्वारंटाइन में रख दिया गया है और अभी सब लोग वहीं पर हैं। श्मशान पर विधिपूर्वक मृत्यु संस्कार कर सभी वापस आ गए। अगले दिवस अंचल ने पंडित बुलाकर होने वाले विधि-विधान कार्यक्रमों के संबंध में समझा। गाँव से कुछ लोग मातमपुरसी को भी आ गए थे और डॉक्टर हंसराज भी आ गए। हंसराज विकास के साथ पढ़ने वाले प्रतिभाशाली छात्र रहे। किंतु विकास इंजीनियरिंग प्रथम स्थान पाते हुए एम.टेक. करने के पश्चात् विदेश चला गया था और हंसराज ने आयुर्वेदशास्त्र से बी.ए.एम.एस. की डिग्री प्राप्त करके गाँव में ही अपना निजी चिकित्सालय प्रारंभ कर दिया था।

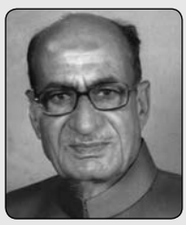

जाने-माने कथाकार। प्रमुख कृतियाँ हैं— 'मोक्ष की राह', 'मैं कौन हूँ', 'पंख' (काव्य-संग्रह), 'इंद्रधनुष से रंग जीवन के संग' (कहानी-संग्रह)। आकाशवाणी छतरपुर से काव्यधारा तथा 'सब' टीवी पर कार्यक्रमों का प्रसारण। म.प्र. राष्ट्रभाषा प्रचार समिति भोपाल एवं साहित्य मंडल, श्रीनाथद्वारा सहित छोटे-बड़े दर्जनभर सम्मान प्राप्त।

बस्ती के एक मुहल्ला से महिलाओं के रोने-चिल्लाने की आवाज आई तो पास-पड़ोस के दो-चार लोग मुँह पर तौलिया लपेटे, एक-दो लोग सादा कपड़ों के मास्क लगाए उपस्थित हो गए। गाँव में शोर मच गया कि सुखराम की कोरोना से मौत हो गई है। उसकी पत्नी मीरा बच्चों के साथ लौटकर आई, वही रो रही है। साथ में कुछ अन्य लोग समझाने के लिए इकट्ठे हो गए हैं। मोबाइल तो छोटे-बड़े सभी रखते हैं। किसी ने थाना-तहसील में खबर कर दी थी। थोड़ी देर में चिकित्सा विभाग सहित सरकारी अमला रोती-बिलखती मीरा के पास आकर रोने के संबंध में पूछने लगा तो उसने आप बीती सुनाई कि हमेशा की तरह वह अपने परिवार के साथ मेहनत-मजदूरी करने जाते रहे। डेरा में पचास-

साठ मजदूर साथ रह रहे थे। जब बंद की खबर फैली तो ठेकेदार और मालिक ऐसे धरती में समा गए कि शक्ल नहीं दिखाई। सभी मजदूर घबरा गए कि अपने घर कैसे पहुँचें और भगदड़ मच गई। मैंने समझाया था कि धीरज धरो! घर की बहुत दूरी है। बिना रेलगाड़ी, बस के नहीं पहुँच सकते हैं। लेकिन वह नहीं माने, अपने बोरिया-बिस्तर समेटकर सुबह के चौथे पहर से चलना प्रारंभ कर दिया। कुछ डेरा वालों ने भी रोका था। अब कौन जानता था कि ऐसी दशा होगी। वह घटना को याद कर फिर दहाड़ मारकर रोने लगी। मेवालाल ने कहा, मीरा पढ़ी-लिखी समझदार है। उसकी सीख सुखराम ने नहीं मानी, पर होनी कोई नहीं जानता है, वह होकर रहती है। उसकी उमर इतनी रही होगी, पुलिस ने समझाया कि यह बताओ कि कितने दिन पहले उसको कोरोना हुआ था? कब और कहाँ उसकी मृत्यु हुई? मीरा ने कहा, उसे कोरोना नहीं था, वह तो खूब चंगा-भला था। तीन दिवस पैदल चलते-चलते चौथे दिन सड़क किनारे सभी लड़के बच्चे साथ चल रहे थे। इसी बीच किसी का फोन आया तो वह सड़क पर खड़े होकर बात करने लगे। आगे से तेज रफ्तार कार ने आकर टक्कर इतनी जोर की मारी कि उनकी वहीं पर मृत्यु हो गई थी।

शासकीय अधिकारियों ने समझाया कि सरकार से आपको मदद मिलेगी। घबराने की कोई बात नहीं है। अब जो हो गया है, उसकी भरपाई कोई नहीं कर सकता है। गाँव के सरपंच रामाधीन ने मुनादी करवा दी, कोई भी बाहर से आने वाले व्यक्तियों को गाँव में प्रवेश नहीं करने दिया जाए। उसने चौकीदार से कहा कि बीस-पच्चीस मजदूर बाहर गए थे, उनको गाँव से बाहर रुकने-ठहरने की व्यवस्था कराई जाए।

अगले दिवस विकास अपने गाँव पहुँच गए और गाँव के ही पास जो उनकी खेती-बाड़ी आम वाला कुआँ था, उसी पर बच्चों के साथ ठहर गए और सरपंच को अपने आने की सूचना भिजवाई। गाँव के सरपंच और अंचल दो-तीन लोग आ गए, सभी ने एक-दूसरे को हाथ जोड़कर अभिवादन किया और एक-दूसरे से दूरी बनाकर आम की शीत लहर में कुशल-मंगल पूछने लगे थे। विकास ने कहा कि अमेरिका से आने के बाद चौदह दिन क्वारंटाइन में हम लोगों को रखा गया था। फिर कोरोना की जाँच-पड़ताल हुई, नेगेटिव होने के पश्चात् गाँव आने की अनुमति दी गई। सरपंच ने कहा कि पंडितजी, मृत्यु से पूर्व तुम्हारी बहुत याद करते रहे। उनके अंतिम संस्कार में आप शामिल नहीं हो सके और अब तो मृत्यु-भोज भी हो गया। विकास ने कहा कि हम लोग समय से पहुँच जाते, स्वदेश आ भी गए थे, परंतु कोरोना की जाँच-पड़ताल के बाद चौदह दिनों के लिए क्वारंटाइन में रहना पड़ा। सभी ने कहा, चलो घर पर चलें, वही बातें होती रहेंगी। सभी के साथ विकास अपने घर पहुँच गए थे। उनके बच्चे तो जन्म के बाद ही गाँव आए थे। जो अपनी नाक-भौंहें सिकोड़ रहे, मुँह पर रूमाल लगाए आपस में काना-फूसी कर रहे थे—how dirty। उनकी माँ सुनीता ने कहा, नहीं, ऐसा नहीं कहते हैं, यह अपना घर है। मम्मी हिंदुस्तान में अपने घर इतने गंदे हैं। यहाँ हम लोग क्यों आए हैं?

बच्चों की बातें अंचल की पत्नी ने सुनकर कहा, देख लिया सुनीता, हम लोग इसलिए फोन पर कहते थे कि दीपावली पर एक वर्ष में एक बार अपने घर हो जाओ तो सभी को यहाँ के रहन-सहन की आदत बनी रहेगी। अरे, बच्चों का क्या दोष है? उन्होंने तो घर पहली बार देखा है। सभी लोग मिलकर गृहस्थी की बातें करते रहे। शाम को भोजन करने के उपरांत टेलीविजन पर समाचार सुन रहे थे, यह कैसी विपत्ति आई है कि समस्त संसार में हाहाकार मचा है। इस अदृश्य शत्रु के सामने सभी विवश हो गए हैं।

हंसराज को पता लगा कि विकास आ गए हैं तो वह मिलने के लिए आ गए। गाँव के कुछ लोग और मिलने आए। धारा १४४ लगी हुई है, सभी लोग सचेत हैं। पाँच लोगों से अधिक एक स्थान पर एकत्र नहीं होना है। और कम-से-कम एक मीटर की दूरी एक-दूसरे से बनाए रखना और मुँह पर मास्क लगाना भी आवश्यक है। इसका पालन करते हुए लोग बैठ गए थे। हंसराज ने विकास से कहा कि अमेरिका में बहुत साफ-सफाई सुनते हैं। यह बीमारी अमेरिका और स्पेन में तथा अन्य विकसित मुल्कों में क्यों फैल रही है। विकास ने कहा कि अमेरिका तथा यूरोप अन्य देशों में सड़कें प्रतिदिन पानी से धोई जाती हैं। कहीं धूल-मिट्टी बस्ती में नजर नहीं आती है। घरों के दरवाजे के सामने फूल महकते हैं। खिड़कियों और बालकनी फूलों के पौधों से सजे-सँवरे नजर आते हैं। कुछ शहरों को छोड़कर भीड़-भाड़ नहीं होती। कहीं-कहीं तो किलोमीटर चलने पर एक-दो व्यक्ति ही नजर आते हैं। किंतु किसी ने ऐसा सोचा भी नहीं था कि इतनी महामारी फैल जाएगी, जिसकी दवा भी नहीं होगी और लोग मरते जाएँगे।

हंसराज ने कहा कि पिछला इतिहास उठाकर देखें तो ऐसी महामारी गरीब मजदूरों से फैलती थी। जिसका मुख्य कारण गंदगी व कुपोषण हुआ करता था। लेकिन इस काल ने तो ऊपर से दस्तक दी है। मेवालाल ने कहा यह गाज है। ऊपर से गिरती है तो जड़ें तक हिला देती है। उसका न कोई इलाज न कोई दवाई। हंसराज ने कहा कि वह इनसान के भेस में शैतान हैं, पापी हैं, जो दूसरे के लिए बुरा सोचते हैं, बुरा करते हैं। मेवालाल ने कहा, बुरे लोगों के गाँव अलग नहीं होते हैं। हमेशा से राम हैं तो रावण भी है; कृष्ण हैं तो कंस रहा है। सभी उपस्थित लोगों ने एक स्वर में कहा संकट के समय देश बचाने की बात है। जो दिन-रात देश के लिए, हर प्राणी के लिए चिंतित है।

सुखराम की मृत्यु स्थल की जाँच के पश्चात् सहायता राशि का चैक लेकर सरकारी कर्मचारी आए, उन्होंने सरपंच रामाधीन को बुलवाया और मीरा को वह चैक सौंपकर शोक संवेदना व्यक्त कर वापस लौट गए। मीरा कक्षा आठ तक पढ़ी थी। उसके माता-पिता ने अच्छी शादी की थी। दहेज में उसको कपड़ा सिलाई मशीन भी दी थी। वह छोटे-मोटे कपड़ों को काट-छाँटकर सिलाई कर लेती थी। दो बच्चों का साथ घर का कमाने वाला अचानक चला गया। अब सरकार से मिले रुपए-पैसे कितने

दिन तक चल जाएँगे। यह सोचकर उसने कुछ काम करने का विचार बनाया। सभी लोगों के मुँह पर मास्क देखकर उसने मास्क तैयार करना प्रारंभ कर दिया था। यह बात रामाधीन को पता चली, उन्होंने सभी तैयार मास्क खरीदने का अनुबंध कर दिया और अपने पंचायत क्षेत्र में नि:शुल्क बँटवाना चालू कर दिया। दूसरी पंचायतों में तथा सामाजिक संस्थाओं में इसकी पहल होने लगी थी।

लॉकडाउन का तीसरा सप्ताह चल रहा था। हमारे देश में ईश्वर की बड़ी कृपा है। स्पेन, इटली, अमेरिका जैसे मुल्कों में मृत्यु के आँकड़े बढ़ते जा रहे हैं। संसार में मृतकों की संख्या एक लाख के पास पहुँच चुकी है। जबकि हमारे देश में दो सौ के आसपास है। आज हमारा देश संसार की श्रेष्ठ श्रेणी में स्थान बना चुका है। हमारे यहाँ से कोरोना की रोकथाम के लिए बड़े-बड़े देश दवाएँ मँगाने के लिए याचना कर रहे हैं।

अंचल ने कहा कि पिताश्री की अंतिम विदाई में बहुत कम लोग शामिल हो पाए थे, किंतु आज शासन ने आदेश कर दिया कि शवयात्रा में पाँच व्यक्ति से अधिक सम्मिलित नहीं होंगे, और शव अस्पताल से सीधे श्मशान घाट ही जाएँगे। उपस्थित लोगों ने कहा यह सब अपनी भलाई के लिए ही तो किया जा रहा है। दवाई बन रही है और इस महामारी का टीका भी बनाने के लिए तैयारी चल रही है।

रामाधीन ने कहा कि जबसे मुझे खबर है और जेठे-बड़ों से सुना है कि रेलगाड़ी जब से चली थी, आज तक इसके पहिए कभी बंद नहीं हुए। हवाई जहाज नहीं उड़ रहे हैं और बसें भी बंद हैं। इस प्रकार संपूर्ण देश कभी बंद नहीं हुआ था। अंचल ने कहा कि कल मामाजी का फोन आया था, उन्होंने बताया उनके ग्राम के साठ-सत्तर मजदूर दिल्ली के पास रह गए हैं, जिनमें चार-पाँच लोग मलेरिया से मर गए हैं। अरे भैया, कोरोना की वजह से सभी बीमारी बंद नहीं हो गई हैं। सामान्य मौतें तो हो ही रही हैं।

हंसराज ने कहा कि रामकृष्ण का देश है। ऋषि-मुनियों की तपस्या का स्थल है। ईश्वर रक्षा कर रहे हैं। जिन मुल्कों ने ईश्वरीय शक्ति को नकार दिया था, हवा में उड़ रहे थे, जमीन पर आ गए हैं। हमारी जीवन शैली पर खानपान का बहुत असर पड़ता है। जिन लोगों के भोजन में साँप, कीट चूहे सभी खाए जाते हैं, चमगादड़ का साथ है तो ऐसी घातक बीमारी वहीं से शुरू होंगी। वैसा हो रहा है। कहते हैं कि एक मछली संपूर्ण तालाब को गंदा कर देती है।

आज तक संसार में करीब तीन लाख लोगों की मृत्यु इस महामारी से हो चुकी है। ईश्वर की कृपा है कि हमारे देश में लगभग ढाई हजार तक क्षति हुई है। जो देश की जनसंख्या की तुलना से सुखद और उत्साहवर्धक बात है। अमेरिका जैसे शक्तिशाली राष्ट्र में अस्सी हजार के पार तक काल के गाल में समा चुके हैं। हमारे गाँव देहात से मजदूरी करने बाहर गए थे और वहीं शहरों में ही रह गए अथवा आवाजाही के कारण बीच स्थान पर मार्गों में फँसकर रह गए थे। ऐसे लाखों लोगों के ठहरने की तथा खाने-पीने की व्यवस्था संबंधित राज्य सरकारें करा रही हैं। उचित व्यवस्थाओं, आपसी सहयोग और साहसपूर्वक यह महायुद्ध जीतना है।

विकास ने कहा कि संसार की व्यवस्था चरमरा गई है। अमेरिका और अधिक प्रभावित देश बहुत पीछे चले गए हैं। मेवालाल ने कहा कि अच्छा रहा है कि आप अपने देश में आ गए हैं। अब वापस नहीं जाना। विकास ने कहा काका सब कमाने-खाने को बाहर जाते हैं। जैसे गाँव से शहर, शहर से विदेश। जो अधिक पढ़-लिख जाते हैं, वह विदेश में अधिक कमाई के लिए जाते हैं। मेवालाल ने कहा कि भैया विकास अधिक पढ़े-लिखे लोगों के पेट इतने बड़े हो जाते हैं कि अपने देश में नहीं भर पाते।

विकास ने कहा कि संसार की व्यवस्था चरमरा गई है। अमेरिका और अधिक प्रभावित देश बहुत पीछे चले गए हैं। मेवालाल ने कहा कि अच्छा रहा है कि आप अपने देश में आ गए हैं। अब वापस नहीं जाना। विकास ने कहा काका सब कमाने-खाने को बाहर जाते हैं। जैसे गाँव से शहर, शहर से विदेश। जो अधिक पढ़-लिख जाते हैं, वह विदेश में अधिक कमाई के लिए जाते हैं। मेवालाल ने कहा कि भैया विकास अधिक पढ़े-लिखे लोगों के पेट इतने बड़े हो जाते हैं कि अपने देश में नहीं भर पाते।

हंसराज ने कहा कि अपने यहाँ चालीस दिन का लॉकडाउन है, अब बाद में देखते हैं कि ऊँट किस करवट बैठता है। कुछ लोगों ने टोका, अरे भैया, एक-एक दिन काटना भारी है। प्रतिदिन इस महामारी का जाल फैलता ही जा रहा है। और जो लोग अपनी जान को जोखिम में डालकर दूसरों की जिंदगी बचा रहे हैं, उन लोगों पर कुछ उपद्रवी व्यक्ति जानलेवा हमला कर रहे हैं। अपने छतों से पत्थर मार रहे हैं। कुछ डॉक्टर, नर्सें तथा अन्य स्वास्थ्य कर्मचारियों सहित पुलिस अधिकारी कर्मचारी घायल हो गए हैं। और कुछ को तो जान भी गँवानी पड़ी है।

अरे उनके भी परिवार है, बाल-बच्चे हैं। कहने को हम लोग देव दूत कहते हैं, किंतु व्यवहार कितना शर्मनाक हो रहा है। मेवालाल ने कहा कि देव और दानवों का हमेशा साथ रहा है। यह समय हमेशा याद रहेगा। कुछ ऐसे कार्य हैं, जो इतिहास बन जाएँगे। जैसे हवाई जहाज, ट्रेन, बसें, आवागमन को संपूर्ण बंद कर दिया है। पूजा स्थल और मंदिर सभी दर्शनों के लिए बंद हैं। वह भी लॉकडाउन का पालन कर रहे हैं।

अंचल ने कहा, हमारी बुआ के दामाद तीरथ लाल दस-ग्यारह वर्ष से मुंबई में रह रहे हैं, उनका स्वयं लोकल ट्रांसपोर्ट का व्यवसाय है। अपना निजी छोटा फ्लैट खरीद लिया था, वह एक भव्य भवन की उन्नीसवीं मंजिल पर है। घर में सात सदस्य हो गए हैं। सभी उसमें बंद हैं। जैसे झूले की पालकियाँ ऊपर ही रुककर रह जाती हैं। उस भवन में छोटे-बड़े दो-ढाई सौ परिवार रहते हैं, समझ लो छोटी-मोटी गाँव की पूरी बस्ती बंद है। कितना कष्टदायक होता है। सीमित जगह में सिमटकर रह जाना, जैसे किसी चिड़िया को उसके बच्चों के साथ घोंसले में बंद कर दिया जाए। तीरथलाल का फोन आया था, वह अपनी पीड़ा सुना रहे थे।

हंसराज ने कहा कि अकेला मुंबई ही क्यों यह तो सभी महानगरों का हाल है। सभी तो गाँव छोड़कर शहरों के लिए भागते हैं। इसलिए वहीं इकट्ठा हो रहे और गाँव खाली होते जा रहे हैं। अब सभी को गाँव की याद आ रही है। मैंने तो कहा है, 'अब चलो गाँव की ओर।'

अंचल की पत्नी गायत्री ने कहा कि मेरी बहन की बड़ी बेटी की शादी इसी माह में होना निश्चय हुआ था। कोरोना की वजह से निरस्त कर दी गई। शादी-विवाह, धार्मिक कार्यक्रम सभी बंद हैं। उत्सव और त्योहार मन प्रसन्न हो तभी अच्छे लगते हैं। विश्व पर मृत्यु का छाया मँडरा रही है। प्रत्येक संवेदनशील व्यक्तियों के अंदर एक भय समाया हुआ है। सामने ऐसा शत्रु है, जो मार तो रहा है किंतु मारने वाला दिख नहीं रहा है। अब हम लड़ें तो किससे लड़ें। लड़ने को मुकाबले की तैयारी पूरी है, फिर भी मन भयभीत है।

रामाधीन ने कहा कि अपने देश के गोवर्धन लाल को कौन नहीं जानता है। विपक्षी दल के बड़े पदाधिकारी रहे हैं। उनका नाम सामने आया है स्वास्थ्यकर्मियों और पुलिस पर हमला कराने पत्थर फेंककर मारने वालों को उकसाने में, किंतु वह काफी चतुर-चालाक हैं। उन्होंने सत्ता पक्ष की चाल उन्हें झूठा फँसाने बदनाम करने की बात कहकर सभी आरोपों को नकार दिया है।

गोवर्धनलाल के विचारों से जनता परिचित हो चुकी थी, क्योंकि उनका उद्देश्य हमेशा शासन की नीतियों का विरोध करना ही था। वह कहा करते थे कि जब आप विरोध करेंगे, तभी लोगों को आपका नाम याद रहेगा और कोई भी कार्य शत-प्रतिशत सही नहीं होता है। जब पचास हजार का एक तौला बिकने वाला सोना भी शत-प्रतिशत सही नहीं होता। तो गड़बड़ी प्रत्येक जगह है।

देश में उनके नाम का काफी प्रचार था और उनके समर्थक भी बन गए थे। उनका दल राष्ट्र व्यापी रूप धारण कर चुका था। इस उपलब्धि से वह प्रसन्न थे।

वह अपने निवास पर सामने लोन में अपने निजी चार-पाँच लोगों के साथ चाय का आनंद ले रहे थे कि अचानक उन्हें दो-तीन छींकें आ गईं। सभी मित्र-मंडली ने एक-दूसरे की आँखें बचाते हुए कुरसियाँ खिसकाकर दूरी बना ली और गोवर्धन लाल के सामने से अगल-बगल हो गए। एक सदस्य ने पूछा, सर, आपको ऐसा कब से हो रहा है? तो उन्होंने सरलता से उत्तर दिया कि कल शाम से। बदन में हल्का-सा दर्द हो रहा है। जकड़न बदन में महसूस हो रही थी। लेकिन मौसम बदल रहा है। बहुत गरमी कभी ठंडी लहर बस इसका प्रभाव है। मौसम नहीं, समय का प्रभाव समझिए, सर इसे। आप हल्के से नहीं लेवें। कोरोना से संपूर्ण संसार और हमारा देश भी ग्रसित हो रहा है। इस बीमारी का संपूर्ण इलाज भी विकसित नहीं हो पाया है।

सुनीता ने विकास से कहा कि अंश को बुखार है, उसने कल से कुछ नहीं खाया, कह रहा था कि मम्मी मेरे सिर में दर्द हो रहा है। मेरी खाने की इच्छा नहीं है। मम्मी, इला दीदी भी कह रही थीं कि यहाँ पर धूल, मिट्टी और गरमी है। यहाँ से वापस अमेरिका चलें, हम लोग यहाँ नहीं रह सकते हैं। विकास ने समझाया कि वह लोग तो बच्चे हैं, जहाँ पैदा हुए हैं, वहीं के रहन-सहन के अभ्यस्त हो गए हैं। किंतु सुनीता हम लोगों ने तो इसी भूमि पर जन्म लिया है, मैं प्रारंभ से ही कहा करता था कि चलो दशहरा, दीपावली पर अपने देश अपने घर पर दिया जलाएँ, किंतु तुम हर बार टाल दिया करती थीं। कभी बच्चों की पढ़ाई और कभी खर्चा बहुत हो जाएगा। ऐसे ही समय निकलता गया और बच्चों ने तो पहली बार यह घर मकान देखा हैं। उनका क्या दोष है? पिताजी ने पहले ही खेत-खलिहान हम दोनों भाइयों को बाँट दिया थे। अपने पास कुछ नहीं रखा था वह कहा करते थे कि हमारे खर्च के लिए पेंशन ही बहुत है। जब तक माताजी जीवित रही तो उन्होंने यह सब नहीं होने दिया था। माताजी का स्वर्गवास होने के बाद उन्होंने यह सब कर दिया था। वह सब तो ठीक है, जेठजी और जेठानी गायत्रीजी का व्यवहार भी बदल गया है। पड़ोस के कुछ लोगों से कह रहे थे कि महामारी का बहाना कर अमेरिका से भाग खड़े हुए हैं और यहाँ पर जो कृषि भूमि और मकान है। अपने हिस्सा पर कब्जा जमाने के लिए आए हैं।

बच्चे तो समझते थे कि इंडिया टूर पर जा रहे हैं। रहने को पाँच सितारा होटल जैसे आरामदायक फ्लैट होंगे। लेकिन यहाँ तो उनका दम घुट रहा है। मैंने तो पहले ही कहा था कि अमेरिका से सभी लोग तो भाग नहीं जाएँगे। विकास ने कहा कि अभी तक अमेरिका में मृतकों की संख्या अस्सी हजार के पार हो रही है। आज मुसीबत के समय में अपने गाँव की खुली हवा में हम लोग यहाँ ठीक हैं, सुरक्षित हैं, भीड़-भाड़ से दूर हैं, कोरोना को हराएँगे।

उधर मीरा ने मास्क बनाकर ग्राम पंचायत में दिए तो उसका धंधा ऐसा चल निकला कि उसके साथ गाँव की बहुत सी महिलाएँ जुड़ गईं। उसने एक सहकारी समिति बना ली। अधिक तादाद में मास्क तैयार होने लगी, जिसे राज्य सरकार भी खरीदने लगीं। यह कार्य संकट काल में समाज सेवा और पेट पालने का साधन बन गया है। भाभी ने कहा कि अब गाँव से बाहर मजदूरी करने किसी को गाँव से बाहर नहीं जाना पड़ेगा। हम लोग और भी गृह उद्योग कर सकते हैं। तो शहरों से लोग गाँव आकर के सामान खरीदने को मजबूर हो जाएँगे और हम गरीबों को मजदूरी के लिए शहरों में नहीं भटकना पड़ेगा। अरे, साग-सब्जी, फल-फूल, गेहूँ, चना, दाल, चावल सभी गाँवों में तो उपजते हैं, जिससे लोग जिंदा रहते हैं। खाने को तो यही सब चाहिए। नोटों से भूख नहीं मिट पाएगी।

आजकल नवयुवकों ने दाड़ी रखने का प्रचलन हो रहा है। लेकिन गाँव के बड़े-बूढ़े सभी दाड़ी-मूँछ बढ़ाए सिर के बाल भी बढ़ाए फिर रहे हैं। अरे, मेवालाल को ही देख लो, गाँव के सरपंचजी क्या देखा-देखी इनमें फैशन चल पड़ा है। महिला मंडल की बुजुर्ग ने रामाधीन को टोका। रामाधीन ने कहा, काकी लॉकडाउन में नाई की दुकानें बंद हैं। सभी बड़े-बड़े हेयर कटिंग सैलून बंद हैं। दूसरी दुकानें खुलती हैं। लोग दो गज दूरी से सामान लें तो आपस में एक-दूसरे व्यक्ति से दूरी बनी रहती है। ऐसा नाई के साथ नहीं हो सकता है। रामाधीन ने कहा कि सभी को लॉकडाउन पालन करने में ही भलाई है।

हंसराज ने कहा कि ऐसा इतिहास में भी देखने को नहीं मिला और किसी ने कभी सोचा भी नहीं होगा कि ऐसी अदृश्य रूप में साक्षात् यमराज की काली छाया विश्वपटल पर छा जाएगी, जिसके समक्ष संसार की महान् शक्तियाँ विवश हो जाएँगी। विज्ञान का विकास चरम सीमा पर है। पल झपकते राष्ट्र नष्ट किए जा सकते हैं। शक्तिशाली राष्ट्रों के पास इतना फौज-फांटा है। हवाई हमलों के लिए और जल थल के मुकाबले के लिए असीमित साधन हैं। बड़े वैज्ञानिक और अनुसंधान केंद्र हैं, किंतु सब बेकार, कोई शक्ति काम नहीं दे रही है। और अपने घरों में छुपने के अतिरिक्त कोई विकल्प ही नहीं है।

विश्व में दो लाख से अधिक लोग अपनी जान गँवा चुके हैं। अमेरिका जैसे शक्तिशाली राष्ट्र में गिनती अस्सी हजार पार कर चुकी है। जबकि हमारे देश में दो-ढाई हजार के ऊपर काँटा बढ़ा है। इस महायुद्ध में हमारे राष्ट्र की बहुत बड़ी जीत है और कोरोना काल की पराजय है। इसका श्रेय हमारी आस्था और विश्वास को जाता है। कुछ बुराई में अच्छाई भी छिपी होती है। आज देश में एकजुटता, अनुशासन देखने को मिला, यह सच्चाई है। महानगरों से लेकर नगर, गाँव की सूनी सड़कें, सूनी गलियाँ 'थम गए कदम' सदैव स्मरणीय रहेंगे। रेल की पटरियों पर दौड़ती तेज गाड़ियाँ, चौड़ी सड़कों को वाहनों से पचास दिवस का पूर्ण विश्राम आकाश में मँडराते हवाई जहाजों का कोलाहल, अथाह समुद्रों को चीरते विशाल जलयान बंद हैं। जल में रहने वाले छोटे-बड़े जीव-जंतु भय मुक्त होकर विचरण कर रहे हैं। पचास दिवस के बाद अब रेलगाड़ियों का पहिया घूमा है।

वायु प्रदूषण कम हो गया है। नदियों और जलाशयों का नीर निर्मल हो गया है। सड़क दुर्घटनाएँ कम हो गई हैं। अपराधों पर नियंत्रण हुआ है। जिन लोगों को कार्य व्यस्तता के कारण कभी विश्राम नहीं मिल पाता था, अपने परिवार और बच्चों के साथ रहने का समय मिला है। दूसरे लोगों से पर्याप्त दूरी बनाकर रहना, न हाथ मिलाना, न गले मिलना, हाथ जोड़कर नमस्ते। क्योंकि कालचक्र है, अभी भी पलटवार से सावधान रहना चाहिए।

खट्टी-मीठी यादें देकर समय चला जाता है।
क्या खोया, क्या पाया यही याद आता है।

साअ
आनंद भवन, मेन रोड
पृथ्वीपुर-४७२३३८
जिला-टीकमगढ़ (म.प्र.)
दूरभाष : ९४२४३४५३५५

लघुकथा

वक्त अपनों के लिए

• डोली शाह

राजेश का एक छोटा सा परिवार था—उसकी पत्नी और दो बच्चे। दोनों बच्चे माता-पिता के बड़े ही लाड़ले थे, पर दोनों को ही कार्य की व्यसतता के कारण बच्चों की पढ़ाई पर ध्यान देने के लिए वक्त नहीं मिल पाता। उन्हें इस कारण विद्यालय में रोज डाँट पड़ती।

एक दिन वह अपने पिता के पास जाकर बोली, "पापा, मैं सारे गृहकार्य स्वयं नहीं कर पाती। मुझे एक प्राइवेट शिक्षक रख दीजिए, आप लोगों के पास तो हमें पढ़ाने के लिए वक्त मिलता नहीं!"

पिताजी बोले, "बेटा, प्राइवेट टीचर से अच्छा खान सर, ऋषभ रोहरा यूट्यूब के जाने-माने शिक्षकों से पढ़ो, बहुत अच्छी और बहुत कुछ सीख भी पाओगे। यूट्यूब ज्ञान का सागर है, यहाँ हर तरह की जानकारी मिल सकती है। हर तरह के लोगों के बीच रहने से अच्छे-बुरे की पहचान भी होती है। इसमें बहुत सारे मोटिवेशनल स्पीच भी मिलती है, जिससे तुम जिंदगी में बहुत आगे बढ़ सकते हो, गजब का आत्मविश्वास पैदा होता है।

बच्ची पिता के गोद में बैठ मौन हो सबकुछ सुनती रही, फिर खुद को रोक न सकी और बोली, "पापा, मानती हूँ, यूट्यूब ज्ञान का सागर है, इसमें हमें हर जानकारी प्राप्त हो सकता है, हम आत्मविश्वास के शिखर पर भी पहुँच सकते हैं, लेकिन आप लोगों के द्वारा सिखाए शब्द हमारे लिए एक अलग मायने रखता है, वह हमें अपनत्व का अहसास दिलाता है, हमें वह कहाँ से मिलेगा?

बच्चों की यह बात राजेश के मन-मस्तिष्क को झकझोर दिया, और उसी वक्त निर्णय लिया, चाहे कितना भी काम हो, मैं शाम को कम-से-कम दो घंटे बच्चों के साथ अवश्य बिताऊँगा। सोशल मीडिया से दूर अपनी छोटी सी दुनिया में खुशियों का बाग लगाऊँगा।

माता-पिता का साथ पाकर बच्चों के अंदर आत्मविश्वास की नई ऊर्जा का संचार हुआ और अब दोनों अपनी पढ़ाई में अच्छे नंबर पाने लगे जिससे राजेश शाह के आँगन में खुशियों की बगिया लहलहाने लगी। बच्चों के साथ-साथ माता-पिता के होंठों पर भी मुसकान खिल गई…

साअ
निकट-पी.एच.ई., पोस्ट-सुल्तानी छोरा
जिला-हैलाकंदी
दूरभाष : ९३९५७२६१५८

देख लेते एक बार

● बी.एल. गौड़

वरिष्ठ साहित्यकार, कवि तथा संपादक। साहित्य की अनेक विधाओं के लेखन के साथ-साथ मीडिया तथा औद्योगिकी (सिविल इंजीनियरिंग) की हिंदी में दो पुस्तकें, मीडिया पर तीन तथा एक कहानी-संग्रह, अब तक कुल १६ पुस्तकें प्रकाशित। अनेक साहित्यिक सम्मानों के साथ केंद्रीय हिंदी संस्थान लखनऊ के 'साहित्य भूषण' सम्मान से सम्मानित।

हे तुलसी के राम, कि तुमको

हे तुलसी के राम! कि तुमको
सौ-सौ बार प्रणाम
लगता कलियुग अंत निकट अब
गूँज रहा 'श्रीराम'

ऐसे भी कुछ जन भारत में
जिनमें बुद्धि नहीं,
तन पलता इस देश के भीतर
पर मन और कहीं,
भारत में रहकर करते वे
भारत का अपमान।

वर्तमान का शासक ऐसा
माँगे सबकी खैर,
लोग गालियाँ देते उसको
वह न पालता बैर,
देश की खातिर भागा फिरता
ना करता विश्राम।

दुश्मन उसके रोज खोदते
कब्र बहुत गहरी,
बाल न बाँका होता उसका
जिसके प्रभु प्रहरी,
तूती की आवाज न पहुँचे
जहाँ गूँजे 'श्रीराम'।

हे राम तुमने क्या किया

हे राम तुमने क्या किया
इतना कठिन निर्णय लिया,
कि एक दुर्जन के कथन पर
त्याग दी पल में सिया।
एक पल को भी न सोचा
पल रहे जिसके उदर में
सूर्यवंशी दो तुम्हारे
जन्म लेंगे किस डगर में
कौन मानेगा कि तुमने
कार्य मर्यादित किया।

यदि तुम्हें करना यही था
तो न लेनी थी परीक्षा
तुम न थे अच्छे परीक्षक
ली परीक्षा पर परीक्षा
कृत्य था यह जन-विरोधी
बिन विचारे क्यों किया?

नीर के बिन मीन सी वह
प्राण से विहीन सी वह
याचना भरकर नयन में
दीन सी वह हीन सी वह,
सोचती अंतिम पलों तक
सोच बदलेंगे पिया।

काश उस दरबार को तुम
देख लेते एक बार
नयन कितने झर रहे थे
बह रही थी अश्रुधार,
चाहते तो रोक लेते
जो गलत निर्णय लिया।

राम तुम्हारा रूप निहारूँ

राम तुम्हारा रूप निहारूँ
या सरयू का तीर
बिना तुम्हारी कृपादृष्टि के
घटे न मन की पीर।
जब-जब मैं दर्शन को आऊँ
अवरिल अश्रु बहें
तेरे प्रांगण में आकर सब
केवल राम भजें
जब छोड़ूँ मैं अवधपुरी तो
नयनन बरसे नीर।

भवसागर की इस माया ने
ऐसा जाल बिछाया
लगता जैसे इस मनवा ने
जीवन व्यर्थ गँवाया,
मैं तो मानव साधारण सा
कैसे बनूँ कबीर।

कौड़ी-कौड़ी माया जोड़ी
कभी न कुछ भी सोचा
अंत समय पर सबने देखा
संग न जाए अँगोछा,
जीवन की रेखा से पाई
लंबी मौत लकीर।

१, बाराखंभा रोड, नई दिल्ली-११०००१
दूरभाष : ९८१०१७३६१०

पाँच लघुकथाएँ

● रामनिवास 'मानव'

पत्नी की चिंता

इकलौते युवा बेटे की मृत्यु के बाद आए हार्ट अटैक के कारण एक महीने तक अस्पताल में रहने के बाद घर तो लौट आए हैं रामदत्तजी, लेकिन बहुत चिंतित हैं। सत्तर वर्ष की उम्र, पता नहीं कब ऊपर वाले का बुलावा आ जाए। तब पत्नी का क्या होगा? कैसे रहेगी अकेली मेरे बिना? एटीएम से पैसे निकालना तो दूर, उसे तो यह भी नहीं पता कि बैंक की पासबुक अलमारी के किस खाने में कहाँ रखी है।

'मेरे जाने के बाद बेटी के पास ऑस्ट्रेलिया चली जाए तो अच्छा है।' मन-ही-मन वह सोचते हैं। फिर उन्हें खयाल आता है कि बेटी और दामाद, दोनों सर्विस में हैं, सारा दिन ऑफिस में रहते हैं। काम का बोझ इतना है कि उन्हें अपने खाने-पीने की ही फुर्सत नहीं होती, तो वे इसकी क्या सेवा करेंगे। सारा दिन घर में अकेली पड़ी रहेगी तो घर भी जेल बन जाएगा।'

'नहीं-नहीं।' वह सोचते हैं, 'पत्नी को बेटी के पास नहीं जाना चाहिए।'

'फिर? फिर तो एक ही रास्ता है कि किसी ओल्ड एज होम में जाकर रहे। आजकल तो शहरों में बहुत अच्छे पेड ओल्ड एज होम बन गए हैं। बड़े-बड़े अमीर लोग भी उनमें रहते हैं। पत्नी के लिए रुपए-पैसे की व्यवस्था मैं कर जाऊँगा।'

लेकिन उनका विचार फिर बदल गया, 'जो महिला सारी उम्र अपने आलीशान घर में ठाठ-बाट से रही है, वह बुढ़ापे में ओल्ड एज होम में जाकर रहे। नहीं, यह नहीं हो सकता। इससे तो टूट जाएगी वह। और फिर लोग भी क्या सोचेंगे।

'इससे तो अच्छा है, वह मुझसे पहले चली जाए।' यह विचार मन में आते ही वह बहुत भावुक तथा और भी गंभीर हो गए। पत्नी के पहले जाने की बात वह सोच भी कैसे सकते हैं। उन्होंने स्वयं को धिक्कारा, 'हमेशा मरने की ही बात करते रहते हो, जीने की बात क्यों नहीं।'

अत: पास ही बैठी पत्नी की ओर मुखातिब होकर वह कहते हैं, "माधुरी, मैं अभी और जीना चाहता हूँ, तुम्हारे लिए। मैंने शादी के समय जीवन भर तुम्हारा साथ निभाने का वचन दिया था। फिर तुम्हें अकेला छोड़कर कैसे जा सकता हूँ।"

सुपरिचित रचनाकार। इनकी रचनाओं पर अब तक सत्तर से अधिक शोधार्थी शोध कर चुके हैं। दस अनूदित कृतियाँ प्रकाशित। देश-विदेश की डेढ़ सौ से अधिक संस्थाओं द्वारा हिंदी-साहित्य में विशिष्ट योगदान हेतु विभिन्न पुरस्कारों और सम्मानों से सम्मानित।

गिद्ध

पहला दिन : ऑनर किलिंग का स्पष्ट मामला। लड़का और लड़की, दोनों एक ही गाँव के रहने वाले और अलग-अलग धर्म के थे। लड़की के माता-पिता ने दोनों को खेत में आपत्तिजनक स्थिति में देख लिया था। लड़का तो भाग गया, पर लड़की की जमकर पिटाई कर दी, जिसके कारण उसने मौके पर ही दम तोड़ दिया।

दूसरा दिन : मांस की गंध मिलते ही टीआरपी के जुगाड़ू और वोटों के भूखे गिद्ध गाँव पर टूट पड़े। ऑडी वैनों और चमचमाती गाड़ियों ने गाँव को घेर लिया। मृतका का निर्भया के रूप में महिमा-मंडन शुरू।

तीसरा दिन : धरना-प्रदर्शन, कैंडल मार्च, सरकार से त्याग-पत्र की माँग, लड़की के नाक-कान काटने की अफवाह, गुप्तांग तक की चर्चा।

चौथा दिन : कानून-व्यवस्था के मुद्दे पर आरोपों से घिरी सरकार बैंक फुट पर। आनन-फानन में परिवार को पचास लाख की आर्थिक सहायता, परिवार के एक सदस्य को सरकारी नौकरी और शहर में पक्का मकान देने का वायदा, प्रतिपक्ष के चार आरोपियों की गिरफ्तारी।

पाँचवाँ दिन : गाँव में पूरी तरह सन्नाटा। सभी गिद्ध उड़ चले थे किसी और लाश की तलाश में।

गिफ्ट पैक

"पहले गिफ्ट में बरतनों का पूरा सैट मिलता था, उहँ कप-प्लेट या छह गिलास, लेकिन अब चार ही होते हैं।" किसी रिश्तेदार की शादी में मिले गिफ्ट पैक को खोलते हुए पत्नी ने कहा, "इसमें भी चार ही गिलास है।"

"गिफ्ट पैक में बरतनों की संख्या परिवार के सदस्यों की संख्या के अनुसार होती है।" पति ने स्पष्ट किया।

"मतलब?" पत्नी ने जानना चाहा।

"मतलब यह है कि पहले परिवार में छह सदस्य होते थे, बेटा-बहू, दो बच्चे और माता-पिता। इसलिए छह बरतनों का सैट मिलता था।"

"लेकिन··· ?" पत्नी कुछ समझ नहीं पाई थी।

"अब परिवार में चार ही सदस्य रह गए हैं, बेटा-बहू और दो बच्चे। इसीलिए गिफ्ट पैक में दिए जाते हैं चार कप-प्लेट या चार गिलास।"

निरुत्तर

शोरगुल सुनकर अमर सहगल ऑफिस से बाहर निकले, तो देखा, कोठी के गेट के सामने कुछ लोग खड़े हैं, जो देखने में भड़ा-मजदूर या झुग्गी-झोंपड़ी वाले लगते हैं। पास ही एक फोरव्हीलर खड़ा है, जिसमें उनका कबाड़नुमा सामान भरा है। सहगल ने गेट के पास जाकर देखा, तो उन्हें दूसरी ओर खड़े एक सज्जन नजर आए। यह तो प्रेमभूषण शर्मा हैं, श्रमिक जागृति मंच के अध्यक्ष। लेकिन यह इन मजदूरों को लेकर यहाँ क्यों आए हैं? सहगल साहब असमंजस में पड़ गए थे।

जानकारी के लिए बता दें, अमर सहगल मुरादनगर के जाने-माने वकील हैं। मॉडल टाउन स्थित एक हजार वर्ग गज की आलीशान कोठी में रहते हैं, पत्नी और वह, यानी सिर्फ दो जने। बच्चे तो पढ़-लिखकर कब के विदेश में जा बसे हैं। खैर···।

"आज सुबह-सुबह कैसे आना हुआ शर्माजी?" उन्होंने पूछा था।

"मंदिर-मसजिद केस में कल अदालत में आपके द्वारा दी गई दलीलों को सुनकर बहुत अच्छा लगा। वक्फ बोर्ड की ओर से बहस करते हुए, आपने मंदिर की छत पर मसजिद के निर्माण को सांप्रदायिक सद्भाव का प्रतीक बताया था। यह सब आज के समाचार-पत्रों में छपा है।"

"जी हाँ, इसमें गलत भी कुछ नहीं है। इसीलिए मैंने यथास्थिति बहाल रखने की माँग की थी। आखिर मथुरा के श्रीकृष्ण-जन्मभूमि मंदिर पर मसजिद है कि नहीं।" सहगल साहब ने स्पष्ट किया।

"आपके इसी तर्क से प्रभावित होकर हम आपके पास आए हैं।" प्रेमभूषण ने कहना जारी रखा, "ये बेचारे गरीब मजदूर हैं, बेघर हैं। बरसात का मौसम सिर पर है।"

"अरे भाई, तो इनसे मेरा या मंदिर-मसजिद केस का क्या संबंध है?"

"संबंध है, सहगल साहब। ये बेचारे आपकी कोठी की छत पर अपनी झोंपड़ियाँ डाल लेंगे, तो इनकी सारी परेशानियाँ दूर हो जाएँगी। आपकी कोठी की लंबी-चौड़ी छत खाली पड़ी है। आप तो कभी ऊपर जाकर भी नहीं देखते होंगे।"

"तुम पागल तो नहीं हो गए हो भूषण। यह विचार तुम्हारे दिमाग में आया भी कैसे?" गुस्से से तमतमाते हुए सहगल ने पूछा, "मेरे घर की छत पर अपना घर बनाने की बात कोई सोच भी कैसे सकता है?"

"सहगल साहब, जब हमारे भगवान् के घर (मंदिर) की छत पर आक्रांता मसजिद बना सकते हैं, तो आपकी छत पर इन मजदूरों की झोंपड़ियाँ क्यों नहीं बन सकतीं? आपका बयान कोर्ट के रिकॉर्ड में दर्ज है। हम तो उसी का पालन कर रहे हैं।"

अदालत में अपने तर्कों से बड़े-बड़े वकीलों को निरुत्तर कर देने वाले अमर सहगल को आज एक अदने से सामाजिक कार्यकर्ता ने निरुत्तर कर दिया था।

बेटे का दुःख

मम्मी-पापा, आप मुझे नहीं देख पाते हैं, लेकिन मैं अपने बीच की अदृश्य दीवार के पार, आप दोनों को बिल्कुल स्पष्ट देख सकता हूँ। आपको उदास देखकर मैं परेशान हो उठता हूँ। मम्मी का रोना तो मुझसे बिल्कुल नहीं देखा जाता।

मैं आप दोनों की स्थिति को समझ सकता हूँ। जिनका इकलौता बेटा डॉक्टर न बन पाने के कारण आत्महत्या कर ले, उनके लिए इससे अधिक दुःख की बात और क्या हो सकती है। लेकिन इसके लिए क्या अकेला बेटा ही दोषी होता है, मम्मी-पापा नहीं?

मैं जानता हूँ, हर माता-पिता की भाँति आप भी मुझे डॉक्टर बनाना चाहते थे। तभी तो कोचिंग के लिए मुझे कोटा भेज दिया। मेरी मोटी कोचिंग फीस और दूसरे खर्चा के लिए आपको बैंक से लोन भी लेना पड़ा। मम्मी भी एक वर्ष का अवैतनिक अवकाश लेकर किराए के मकान में मेरे साथ कोटा में रहीं। लेकिन मैं आपके सपने को पूरा नहीं कर पाया।

आप दोनों ने मुझे कोटा भेजने से पूर्व एक बार भी मुझसे नहीं पूछा कि मैं क्या बनना चाहता हूँ। डॉक्टर बनने की मेरी बिल्कुल इच्छा नहीं थी। मैं प्रोफेसर, मैनेजर, सीए, इकोनॉमिस्ट, जर्नलिस्ट, एक्टर, कुछ भी बन सकता था, लेकिन मेरे सपनों को आपने अपनी इच्छा के बोझ से दबा दिया।

आपने एक बार भी नहीं सोचा कि डॉक्टर या इंजीनियर बनना ही सबकुछ नहीं है। हर बच्चा अपनी इच्छा और योग्यता के अनुसार कुछ बनना, जीवन में कुछ करना चाहता है, लेकिन माता-पिता डॉक्टर या इंजीनियर बनाने की चाह में उसे आत्महत्या करने को विवश कर देते हैं। मैं नहीं जानता, हम किस लोक में हैं, लेकिन आत्महत्या करने वाले मेरे जैसे सैकड़ों छात्र यहाँ हैं। अकेले कोटा से छब्बीस छात्र इस वर्ष यहाँ आ चुके हैं तथा पता नहीं कितने अभी और आएँगे।

माता-पिता न जाने कब समझेंगे कि बच्चों पर अपनी इच्छा थोपना, उन पर दबाव डालना उचित नहीं है। यही दबाव उन्हें तनाव के रास्ते पर धकेल देता है और वे आत्महत्या करने जैसा कदम उठा लेते हैं।

मम्मी-पापा, मुझे क्षमा कर देना, मैं आपकी इच्छा पूरी नहीं कर पाया। आपका प्यार पाने के लिए मैं पुनः आपके बेटे के रूप में जन्म लेना चाहता हूँ। लेकिन आपको भी मुझसे एक प्रोमिस करना पड़ेगा कि आप मुझे डॉक्टर या इंजीनियर बनाने की जिद नहीं करेंगे। बोलो, करोगे न प्रोमिस?

साअ

५७१, सेक्टर-१, पार्ट-२
नारनौल-१२३००१ (हरियाणा)
दूरभाष : ८०५३५४५६३२

तुलसी-पथ की प्रवर्तक : रत्नावली

• नित्यानंद श्रीवास्तव

यह लोक में प्रचलित है कि रत्नावली ने अपने पति गोस्वामी तुलसीदास को किन्हीं भावाकुल क्षणों में कुछ ऐसा कह दिया कि वे गृहस्थ-जीवन छोड़ अपने आध्यात्मिक पथ की ओर गतिमान हुए। पति से विछोह का वह क्षण रत्नावली के लिए सहज नहीं था—संभवत: गोस्वामीजी के लिए भी न रहा हो। कहीं-कहीं इसकी अनुगूँज उनके साहित्य में भी प्रतीत होती है, जैसे—

लरिकाई बीती अचेत चित चंचलता चौगुनी चाय।
जौवन जर जुवती कुपथ्य करि भयो त्रिदोष, भरि मदन बाय॥

यानी लड़कपन तो अज्ञान में ही चला गया, चित्त में तब अब से चौगुनी चंचलता और प्रसन्नता थी और यौवनरूपी ज्वर में स्त्री रूप कुपथ्य कर बैठा। एक तो वैसे ही ज्वर चढ़ रहा था, तिस पर कुपथ्य कर लिया। सन्निपात हो गया और सारे शरीर में कामरूप वायु भर गई, कामोन्माद हो गया। (विनय पत्रिका से)

कामिहि नारि पिआरि जिमि लोभिहि प्रिय जिमि दाम।
तिमि रघुनाथ निरंतर प्रिय लागहु मोहि राम॥

(रामचरितमानस, उत्तरकांड)

मोह और काम से रामपद की यात्रा गोस्वामीजी के सिर्फ व्यक्ति मन की यात्रा बनकर रह गई होती तो वे गुफा-गेह वासी सिद्ध ही रह गए होते। मन की व्यक्तिगत व्यथा का तंत्र लोक-मन से जुड़ा। क्रूर आततायी बादशाही शक्तियों के आतंक तथा भय, दीनता और मोह से निर्बल लोक मन की दुर्बल अवस्था का चित्र भारत के उत्तरापथ का सुलभ चित्र था। रामपद की व्यक्ति तुलसीदास की यात्रा 'लोक मंगल' की साधनावस्था के महाकाव्य में अवतरित हुई। घर-घर में हनुमान पताकाओं की स्थापना में, कीर्तन मंडलियों में, अखाड़ों में तथा रामकथा के जीवंत मंचन में सर्वसमाज की सहभागिता हुई—हतप्रभ कुंठित और भयभीत लोकमन के हनुमानजी और 'राजा रामचंद्र की जय' के दिग्-दिगंत व्यापी उद्घोष ने अंधकार से आवृत्त मन को संबल दिया, अँधकार से ढके आसमान में आशा, श्रद्धा और विश्वास की किरणें फूट पड़ीं। इतना सब रत्नावली के जिस प्रेरक वाक्य के कारण उद्घाटित हुआ, उसे आज लोकमन इन पंक्तियों में याद करता है—

अस्थि चर्ममय देह यह ता सों ऐसी प्रीति।
नेकु जो होती राम से तो काहे भव भीति॥

इसी एक दोहे में पूरा भारत-दर्शन है, पूरा भारत-बोध है।

नाभादास कृत 'भक्तमाल' के टीकाकार प्रियादास ने गोस्वामीजी के गृहत्याग की घटना का वर्णन किया है। भक्तमाल का रचनाकाल संवत् १६६० है और प्रियादास ने इसकी टीका संवत् १७६८ में की। संवत् १८५५ में प्रकाशित अपने प्रबंध तुलसीदास में निरालाजी इस वृत्त को तथा रत्नावली के कथन को इस प्रकार उद्धृत करते हैं—

'धिक! आए तुम यों अनाहूत,
धो दिया श्रेष्ठ कुल धर्म धूत,
राम के नहीं, काम के सूत कहलाए।
हो बिके जहाँ तुम बिना दाम,
वह वहीं और कुछ हाड़-चाम!
कैसी शिक्षा, कैसे विराम पर आए।'

साधारण गृहस्थ नर-नारियों को ये कथन निश्चित रूप से मर्यादा विरुद्ध लगे होंगे। लेकिन निरालाजी के इस प्रबंध में गोस्वामीजी इन प्रवर्तक क्षणों को महसूस करते हैं। रत्नावली का यह रूप तो वाग्देवी का रूप है—

देखा शारदा नील वसना
है सम्मुख स्वयं सृष्टि-रसना
जीवन-समीर-शुचि-नि:श्वसना, वरदात्री,
वीणा वह स्वयं सुवादित स्वर
फूटी तर अमृताक्षर- निर्झर,
यह विश्व हंस, हैं चरण सुघर जिस पर श्री।

वाग्देवी रूपी रत्नावली के वाक्य फलीभूत हुए। भारत को 'भक्तमाल सुमेरु' के रूप में गोस्वामी तुलसीदास मिले, लेकिन रत्नावली के शेष जीवन के बारे में लोग अपरिचित रह गए। रत्नावली के ऐतिहासिक वृत्त को लिपिबद्ध करने की दिशा में मुरलीधर चतुर्वेदी ने महत्त्वपूर्ण कार्य किया है। उन्होंने ३३ छंदों में 'रत्नावली चरित' नामक प्रबंध की रचना श्रावण शुक्ल प्रतिपदा विक्रम संवत् १८२८ को की। वर्तमान में आंग्ल पंचांग के अनुसार यह तिथि १ जुलाई, १७७२ है। इस ग्रंथ के अलावा आचार्य वेदव्रत शास्त्री ने 'रत्नावली' शीर्षक से ग्रंथ १८८० ई. में उत्तर प्रदेश हिंदी संस्थान लखनऊ से प्रकाशित कराया। इस ग्रंथ में रत्नावली की रचनाएँ और मुरलीधर चतुर्वेदी कृत 'रत्नावली चरित' दोनों संकलित हैं।

सुपरिचित लेखक एवं शिक्षक। अब तक दो पुस्तकें 'जातीयता की चेतना : साहित्य भाविक विमर्श', 'भक्ति : भय और भूख की अंतर्यात्रा', इसके अलावा लगभग पचास शोधपत्र विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित। संप्रति गोरखपुर से दिग्विजयनाथ पी.जी. कॉलेज में हिंदी के प्राध्यापक।

रत्नावली चरित के अनुसार शूकर क्षेत्र में स्थित बदरिका (बदरिया) ग्राम में दीनबंधु पाठक और दयावती की चौथी संतान के रूप में रत्नावली का जन्म हुआ। पिता ने तीनों पुत्रों और रत्नावली को समुचित शिक्षा दी। रत्नावली बचपन से ही प्रखर बुद्धि की थीं। मुरलीधर चतुर्वेदी लिखते हैं—

प्रखर बुद्धि तेहि जनक जानि। पाटी बुदिका दयो लानि॥
कहू दिनन महं भई जोग। कहहि सरसुती ताहि लोग॥
पुनि व्याकरनहुँ पितु पढाइ। दीनो कोश हु तेहि घोंटाय॥
वालमीकि पुनि पढ़न लागि। गई भारती तासु जागि॥
पिंगल के कछु अंग जानि। काव्य करन की परी बानि॥

रत्नावली चरित एवं स्वयं रत्नावली के साहित्य के साक्ष्य से उनके जीवन के महत्त्वपूर्ण कालखंडों के बारे में पता चलता है। इन साक्ष्यों के अनुसार संवत् १५७७ में उनका जन्म हुआ, विवाह संवत् १५८८ में हुआ, गौना संवत् १५८३ में, पति का गृहत्याग संवत् १६०४ में हुआ तथा रत्नावली की मृत्यु संवत् १६५१ में ७८ वर्ष की अवस्था में हुई। संवत् १६०४ में सत्ताईस वर्ष की उम्र में पति का गृहत्याग हुआ तथा इसी वर्ष रत्नावली को माँ की मृत्यु की पीड़ा भी मिली। अपने एक दोहे में वे कहती हैं—

वैस वारही कर गह्यो सोरहि गौन कराय।
सत्ताइस लागत करी, नाथ रतन असहाय॥
सागर रव रस ससि रतन संवत मो दुःखदाय।
पिय वियोग जननी मरन, करन न भूल्यो जाय॥

रत्नावली चरित के अनुसार शूकर क्षेत्र में स्थित बदरिका (बदरिया) ग्राम में दीनबंधु पाठक और दयावती की चौथी संतान के रूप में रत्नावली का जन्म हुआ। पिता ने तीनों पुत्रों और रत्नावली को समुचित शिक्षा दी। रत्नावली बचपन से ही प्रखर बुद्धि की थीं। मुरलीधर चतुर्वेदी लिखते हैं—

प्रखर बुद्धि तेहि जनक जानि। पाटी बुदिका दयो लानि॥
कहू दिनन महं भई जोग। कहहि सरसुती ताहि लोग॥
पुनि व्याकरनहुँ पितु पढाइ। दीनो कोश हु तेहि घोंटाय॥
वालमीकि पुनि पढ़न लागि। गई भारती तासु जागि॥
पिंगल के कछु अंग जानि। काव्य करन की परी बानि॥

स्त्री-शिक्षा और स्त्री-विमर्श पर पाश्चात्य आधारों पर चिंतन करने वाले आज के महानुभावों को यह उदाहरण ध्यान में रखना चाहिए।

ऐसी सुयोग्य कन्या के वरान्वेषण में पिता गुरु नृसिंह की पाठशाला के विद्यार्थी तुलसीदास के गुणों से प्रभावित हुए। विवाह हुआ। कुछ समय पश्चात् तारापति नामक पुत्र उत्पन्न हुआ—

तारापति नामक सुपूत। भयो तासु बुधिबल अकूत।
गयौ दैव गति स्वर्गधाम। बिलपति रत्नावली बाम॥

इस दुर्घटना के कुछ समय बाद रत्नावली अपने भाई के साथ मातृगृह गईं। मुरलीधर चतुर्वेदी ने इस प्रसंग में प्रचलित कथा से थोड़ी भिन्न प्रस्तुति की है। उनके अनुसार रत्नावली का अपने मायके जाना अकस्मात् नहीं था, इसमें तुलसीदास की सहमति थी।

राखी बांधन एक बार। भ्राता संग हिय हरष धार॥
पति आयसु गहि सीस नाय। गई मायके सदन धाय॥
इत तुलसी करिबे नवाह। गए सुमिरि उर अवध नाह॥
तुलसी ग्यारह दिन बिताई। आये तिनहि न घर सुहाई॥
रत्नावलि मन लषन चाह। चले ससुर घर भरि उछाह॥

इस प्रसंग में मुरलीधर चतुर्वेदी की बात अधिक प्रामाणिक लगती है। इसका सबसे बड़ा कारण यह है कि मुरलीधर चतुर्वेदी और गोस्वामीजी तथा रत्नावली के समय में करीब दो सौ साल का ही अंतराल है।

रत्नावली के प्रेम में पगे तुलसीदासजी पर देश-काल बाधा न बन पाया। वर्षा ऋतु, गंगाजी का तीव्र प्रवाह तथा आकाश में कड़कड़ाती बिजली, इनमें से कोई भी उनका पथ न रोक सका—*'नारि प्रेम मद गए भोइ। चले समय को ज्ञान खोइ।'* रत्नावली के बारे में जो प्रचलित वाद इस अवसर का है, वह भी 'रत्नावली चरित' के वर्णन से खंडित हो जाता है।

मुरलीधर चतुर्वेदी ने रत्नावली के कथन को इस प्रकार उद्धृत किया है—

कहि रत्नावलि प्राननाथ। धन्य आपको मिल्यो साथ॥
मेरे हित बहु दुःख उठाइ। दरस दयो तुम नाथ आइ॥
मो सम को बड़भागि नारि। मो सम को तिय पतिहि प्यारि॥
सीम प्रेम तुम करी पार। नाथ प्रेम के तुम अधार॥
मम सुप्रेम निज हिये धार। उतरे प्रिय सुरसरित पार॥

जग अधार पद प्रेम धार। जातु मनुज भव उदधि पार॥
प्रेमहीन जीवन असार। नाथ प्रेम महिमा अपार॥
सुनि रत्नावलि भव्य बानि। भव विषयनु सो भई ग्लानि॥
भये चित्रसम तुलसिदास। कुछ जन सोचत भे उदास॥
रत्नावलि पति नींद जानि। गई परिस पद जोरि पानि॥

रत्नावली ने सहज भाव से मानुष प्रेम को भगवत् प्रेम की ओर प्रवर्तित किया। 'मानुष प्रेम भएउ बैकुंठी' जायसी ने लिखा। गोस्वामीजी भगवान् के मुँह से कहलवाते हैं—

तत्त्व प्रेम कर मम अरु तोरा। जानत प्रिया एकु मन मोरा॥
सो मनु सदा रहत तोहि पाहीं। जानु प्रीति रस एतनेहि माहीं॥

रत्नावली का शेष जीवन सिर्फ पति वियोग में आहत चित्त लेकर नहीं बीता। व्रत, नियम तथा स्त्री शिक्षा के प्रति उन्होंने अपने को समर्पित किया। निरंतर ईश्वराराधन में रत रत्नावली ७४ वर्ष की अवस्था में शरीर त्याग स्वर्गधाम गईं। मुरलीधर चतुर्वेदी लिखते हैं—

देती नारिन सीख नीक। रही दिखावति धरम लीक॥
पति वियोग महँ साधि जोग। त्यागि दये सब जगत भोग॥
चरन सदन रज जासु कोइ। धरत देह रुज रहित होइ॥
भू शर भू बरस पूरि। स्वर्ग गई लहि सुजस भूरि॥
धनि रत्नावलि मात धन्य। जेहि राम अब कहं जगत मन्य॥

रत्नावली के तप की महिमा का बखान करते हुए मुरलीधर लिखते हैं—"रत्नावली की तप-साधना के कारण ही उसके चरणों और उसके गृह की धूल को शरीर से लगाता है, वह रोग रहित हो जाता है।"

और अब रत्नावली की कुछ रचनाओं को देखते चलें। उनका जैसा जीवन है, वैसी ही कविता भी है। कविता कवि के जीवन के ताप से ऊष्मा ग्रहण करती हुई शब्द-विधान में ढलती जाती है, व्यक्तिगत दु:ख का दंश जीवन को उच्च भावों के सोपानों पर ले जाता है, कविता को भी और फिर पाठक के जीवन को भी। प्रकाशित संकलन में दो सौ एक दोहे हैं। दोहे अपने रूपाकार में कवि से सांद्र जीवनानुभवों की अभिव्यक्ति संपन्नता का वृत्त रचते हैं—

हाय सहज ही हों कही, लह्यो बोध हिरदेस।
हों रत्नावलि जाँचि गई, पिय हिय काँच बिसेस॥

"मैंने अपनी बात तो सहजता से कही थी, हृदयेश ने उससे ज्ञान प्राप्त कर लिया। ज्ञान भी ऐसा कि उसके प्रभाव से मैं ही उनके हृदय में काँच के समान लगने लगी।" इस वेदना में अंतर्निहित जो व्यंजना है, उसकी ध्वनि तो एक बड़े गहरे उलाहने की ओर जाती है। कविता में अनकहा ही सार्थक बिंब रचता है। उलाहना तो उस ज्ञान के प्रति है, जिसके कारण हृदयेश ने मुझे ही काँच समझकर त्याग दिया।

वियोगजन्य दु:ख बड़ा बेधक होता है। रत्नावली इस दु:ख में भी स्वयं को भाग्यशाली मानती है। इस दोहे की व्यंजना देखें—

राम तासु हिरदे बसत, सो प्रिय मम उर धाम।
एक बसत दोऊ बसें, रतन भाग अभिराम॥

प्रेम के तत्त्व को वे कुछ इस प्रकार निरूपित करती हैं—

रतन प्रेम डंडी तुला, पला जुरे इक सार।
एक बाट पीड़ा सहै, एक गेह संभार॥

अर्थात् "जिस प्रकार तराजू के एक पलड़े में बाट रखा जाता है और दूसरे में उसी वजन की सामग्री रखी जाती है, उसी प्रकार दंपती में से एक (श्री तुलसीदास) बाट (मार्ग) के कष्टों को सह रहे हैं और दूसरी रत्नावली गृह झंझटों में लगी है।"

रत्नावली ने नीति एवं धर्म विषयक बहुत भावप्रवण शैली में दोहे लिखे हैं। कुछ एक दोहों में स्त्रियों के प्रति, उनके व्यवहार के प्रति प्रेरक वचन हैं। पाश्चात्य रीति से स्त्री के आत्म पर विचार करने वाले विमर्शकार इन दोहों से किंचित् विस्मित भी हो सकते हैं। इस विषय पर आधुनिक चिंतन जहाँ स्त्री और पुरुष को परस्पर प्रतिद्वंद्वी तथा कई बार वर्ग शत्रु के रूप में समझता रहा है, वहीं रत्नावली का स्त्री विषय-चिंतन स्त्री-पुरुष के पारस्परिक संपूरक भाव की व्यंजना करता हुआ, इस संबंध में अर्द्धनारीश्वर की संकल्पना को मूर्त रूप देता चलता है।

भारतीय स्त्री का आदर्श क्या हो सकता है? रत्नावली स्पष्ट शब्दों में आह्वान करती है—

रतन रमा सी सुख सदन, बनि सारद धरि ग्यान।
खलन दलन हित कालिका, बनि करि धारि कृपान॥

अर्थात् "हे स्त्री! तुम लक्ष्मी के समान गृह की शोभा स्वरूप बनो। ज्ञान प्राप्त कर शारदा बनो और दुष्टों के दमन के लिए हाथ में खड्ग लेकर कालिका बनो।"

जब हम यह ध्यान में रखेंगे कि रत्नावली का समय राजतंत्र पोषित लोलुप और आक्रामक आतंकवाद का समय था, तब इस दोहे का मर्म और भारतीय स्त्री का 'आत्म' समझा जा सकता है। इस मर्म को आज स्त्री की तथाकथित स्वतंत्र सत्ता के नाम पर उसे सिर्फ दैहिक अहं की सीमा में देखने वाले विमर्शकार नहीं समझ सकते।

'स्त्री' के संपूर्ण व्यक्तित्व में अंतर्निहित स्वत्वबोध की रक्षा और उसकी अभिव्यक्ति के निमित्त रत्नावली ने कई दोहे रचे हैं। इनमें पारिवारिक संबंधों के निर्वाह के साथ-साथ उसके सामाजिक संचरण के प्रसंगों के संदर्भ में कई सूत्र-संकेत हैं। एक दोहे में तो वे यहाँ तक कहती हैं कि स्त्री को अकेले किसी संत-महात्मा के पास भी नहीं जाना चाहिए—

कबहुँ अकेली जनि करहु, संतहु निकट पयान।
देखि अकेली तिय रतन, तजत संत हू ज्ञान॥

यह भक्तिकालीन स्त्री का स्वाभिमान से परिपूर्ण उदात्त स्वर है, जिसकी परख आधुनिक विमर्शकार भी कर सकते हैं।

रत्नावली ने कुछ गीत पद-शैली में भी लिखे हैं। इन गीतों में सर्वत्र विछोह के मार्मिक स्वर हैं। विछोह की व्यथा के बावजूद रत्नावली को यह संतोष है कि उनके प्रियपति भक्ति की ध्वजा के आधार-स्तंभ हैं, वे कहती हैं—

मोरे पिय समान कोइ ग्यानी।

आगम निगम पुरान ग्यान रवि जोति जगत प्रगटानी।
एक नारिव्रत राम भगतिरत धरम ग्यान-धन दानी॥
जिन धनि कर्यो सुकुल कुल उज्जल, प्रभु वराह रजधानी।
कौन पुन्य करि अस पति पाए, लखि लखि सदा सिहानी॥
हरष-विषाद सहित रतनावलि, अब मम वैस बितानी॥
कौन पाप करि भई वियोगिनी, विधि गति जाति न जानी॥

रत्नावली का शेष जीवन पति स्मृति, भगवद् भक्ति और स्त्री-जाति के प्रबोधन में बीता। कहते हैं कि उनकी तप:साधना से पवित्र उनके निवासस्थान की मिट्टी का लेपन; उसकी धूल का लेपन जो भी व्यक्ति अपने शरीर पर करता है, वह रोग रहित हो जाता है।

भारतीय नारी की जो आचार संहिता रत्नावली ने निर्मित की है, उसे अपने जीवन के व्याकरण से सिद्ध किया है, वह स्तुत्य है तथा आज के समय में पथ-प्रवर्तक है।

साअ
हिंदी विभाग
दिग्विजयनाथ पी.जी. कॉलेज
गोरखपुर (उ.प्र.)
दूरभाष : ७८००९८९३९८

फागुन गीत

● शकुंतला अग्रवाल शकुन

फागुन गीत

दहक रहा टेसू पिया, फूल रहा कचनार,
फागुन की पदचाप से, झंकृत मन के तार।

थिरके मेरे पाँव अब, सुन ढोलक की थाप,
मनवा भी करने लगा, पिउ-पिउ का जाप।
चहुँ-दिश प्रिय! होने लगी, रंगों की बौछार,
फागुन की पदचाप से, झंकृत मन के तार॥

बैरन पुरवा बन गई, उर से खींचे चैन,
पथ-निहारते थक गए, साजन मेरे नैन।
काया कजली पड़ गई, बहती कजरा-धार,
फागुन की पदचाप से, झंकृत मन के तार॥

आती मुझको लाज है, कहते मन की बात,
करवट में ही बीतती, प्रिय! मेरी हर रात।
अगन लगाए साजना, देखो मदिर-बयार,
फागुन की पदचाप से, झंकृत मन के तार॥

ताने देती सास भी, देवर करें मखोल,
सिसक रहा यौवन पिया, अब तो आँखें खोल।
कलियाँ भी मुसका रहीं, भ्रमर करें गुंजार,
फागुन की पदचाप से, झंकृत मन के तार॥

दोहा छंदाधारित फागुन गीत

आज तुम्हारे गाल पर, मल दूँ रंग-गुलाल,
तेरी-मेरी प्रीति में, आए तनिक उबाल।

रँग फागुन के रंग में, प्रकृति रचाए रास,
आते गुन-गुनकर भ्रमर, महक रहा मधुमास।
हो लें मस्त मलंग हम, पीकर थोड़ी भाँग,
बीत गई जो यामिनी, कुक्कुट देगा बाँग।
मौन-निमंत्रण पा प्रिये! बदलो अपनी चाल,
तेरी-मेरी प्रीति में, आए तनिक उबाल॥

सोए जो जज्बात हैं, उन्हें जगाना मीत,
छौंक लगाकर प्रेम का, लेना मन को जीत।
दहके हृदय वियोग में, जैसे पुष्प-पलास,
प्रेम-पुजारी का यहाँ, उड़ता नित उपहास।
हृदय-धरा से दो प्रिये! डर को आज निकाल,
तेरी-मेरी प्रीति में, आए तनिक उबाल॥

ओढ़ चुनरिया प्यार की, कर सोलह-शृंगार,
आओ मेरे अंक में, दूँगा जीवन वार।
सदियों तक कायम रहे, अपना पावन-प्यार,
प्रणय-निवेदन को प्रिये! अब कर लो स्वीकार।
प्रियवर! मेरी ताल के, संग मिलाओ ताल,
तेरी-मेरी प्रीति में, आए तनिक उबाल॥

दहक रहा टेसू पिया, फूल रहा कचनार,
फागुन की पदचाप से, झंकृत मन के तार।
थिरके मेरे पाँव अब, सुन ढोलक की थाप,
मनवा भी करने लगा, पिउ-पिउ का जाप।
चहुँ-दिश प्रिये! होने लगी, रंगों की बौछार,
फागुन की पदचाप से, झंकृत मन के तार॥

बैरन पुरवा बन गई, उर से खींचे चैन,
पथ-निहारते थक गए, साजन मेरे नैन।
काया कजली पड़ गई, बहती कजरा-धार,
फागुन की पदचाप से, झंकृत मन के तार॥

आती मुझको लाज है, कहते मन की बात,
करवट में ही बीतती, प्रिय! मेरी हर रात।
अगन लगाए साजना, देखो मदिर-बयार,
फागुन की पदचाप से, झंकृत मन के तार॥

ताने देती सास भी, देवर करें मखोल,
सिसक रहा यौवन पिया, अब तो आँखें खोल।
कलियाँ भी मुसका रही, भ्रमर करें गुंजार,
फागुन की पदचाप से, झंकृत मन के तार॥

निश्चल छंदाधारित गीत

जीवन में प्रतिदिन खुद को भी लेना तोल,
कितने अवगुण हैं अंतस में—आँखें खोल।

सुपरिचित रचनाकार। अब तक दोहा, कुंडलियाँ, लघुकथा की पाँच पुस्तकें तथा अनेक साझा संग्रह प्रकाशित। 'साहित्य सुधाकर', विक्रमशिला हिंदी विद्यापीठ द्वारा 'विद्यावाचस्पति सम्मान', 'छंद-रथी' एवं अन्य कई सम्मान।

कीच उछाले है वो जिसके, मन में मैल,
रास नहीं आती उसको, प्रभु की गैल।
मारा-मारा फिरता रहता, खोकर धीर,
अँखियों से बहता ही रहता, प्रति-पल नीर।
खाती रहती है तब उसकी, साँसें झोल,
कितने अवगुण है अंतस में, आँखें खोल॥

जीवन-पगडंडी में आए, अगणित शूल,
'शकुन' कभी मर्यादा को मत, जाना भूल।
धैर्य बसे जिसके अंदर वह, पाता जीत,
प्रेम-भाव के निशिदिन वो ही, गाता गीत।
सब जीवों में मानव जीवन है अनमोल,
कितने अवगुण है अंतस में, आँखें खोल॥

मंदिर-मसजिद भूल गए हैं, अब तो लोग,
याद रहा मदिरालय सबको, है दुर्योग?
ऊधम करते घर-आँगन में, खोकर धीर,
पत्नी की आँखों से हर-क्षण, ढुलके नीर।
रूठ गए क्यों अब रसना से, मीठे बोल,
कितने अवगुण हैं अंतस में, आँखें खोल॥

साअ

हनुमंत कृपा, १०-बी-१२,
आर.सी.व्यास कॉलोनी,
केशव हॉस्पिटल के पास,
भीलवाड़ा-३११००१ (राज.)
दूरभाष : ९४६२६५४५००

पेड़ की पीड़ा

• गोपाल चतुर्वेदी

शहर के प्रतिष्ठित और जाने-माने जनसेवक ने देश की महती सेवा करते नगर के पास के जंगल का विनाश करके वहाँ एक उपनगर बना लिया। उन्होंने जन-कल्याण का एक और काम किया। शहर के नामी बिल्डर्स से साँठ-गाँठ कर वहाँ प्लॉट कटवाए, आवासीय सुविधा के लिए सरकार से आवेदन कर एकाध दशक में सड़क-बिजली, पानी की व्यवस्था भी कर दी। इस उपनगर का विकास उनका मिशन था। जाहिर है कि सियासी दल का प्रश्रय पाकर और शहर-विकास की स्थापित संस्थाओं तथा विभागों के अधिकारियों को पर्याप्त इस नए काम को करने का पर्याप्त नामा देकर उन्होंने अपना निर्धारित लक्ष्य प्राप्त किया। महत्त्वपूर्ण तथ्य यह है कि उनमें चींटी सी लगन और जोंक सी प्रतिभा थी चिपकने की, जिस दफ्तर से चिपके, अपना लक्ष्य हासिल करके ही दम लिया।

यह दीगर है कि नई बस्ती बसने की प्रक्रिया में उनकी जेब भी भरती गई। बिल्डर्स की तो लेन-देन की महारत है। उन्होंने भी उन्हें उपकृत किया। स्वाभाविक है कि धर्मचंद्र के नाम पर यह उपनगर भी 'धर्म बस्ती' कहलाई। एक बिल्डर ने तो इनको वहाँ बड़ा सा आवास भी भेंट कर दिया। तीन बेडरूम, स्टडीरूम, लॉन और सेवक की रहने की व्यवस्था। इसके अलावा विनम्रता का नाटक करने वाले विनम्र धर्मचंद्र को चाहिए ही क्या था? भेंट और खान-पान के प्रबंध से शहर के अखबार और सोशल मीडिया उनकी सेवा-भावना के गुण गान की होड़ में लगे रहे।

जैसे-जैसे लक्ष्मी की कृपादृष्टि बढ़ी, उनके निजी कर्मचारी भी बढ़ते गए। उनके जन-संपर्क अधिकारी का दायित्व था कि वह समाचार-पत्र और सोशल मीडिया पर उनकी निस्स्वार्थ सेवा तथा जन कल्याण की लगन का बढ़-चढ़कर प्रचार करे। वह नगर और जिले के सारे सम्मानों से अलंकृत किए गए। शहर के सांसद को उन्होंने फ्री प्लॉट दिलवाया था। वह सूबे के शासकीय दल का प्रभावी और महत्त्वपूर्ण सदस्य था। शहर की संख्या में प्रमुख जाति के नेता होने के कारण ही उसे टिकट ही नहीं मिलता, वह विजयी भी रहता। धर्मचंद्रजी निजी सेवा से प्रसन्न होकर एक दिन उसने कहा भी था कि 'आप तो किसी पद्म सम्मान के योग्य हैं।'

फिर क्या था! धर्मचंद्र के प्रचार अधिकारी इसी मुहिम में जुट लिये। शहर के पचास महत्त्वपूर्ण व्यक्तियों के हस्ताक्षर से धर्मचंद्र को पद्म पुरस्कार से सम्मानित करने का प्रतिवेदन सांसद को प्रस्तुत किया गया। वह भी अपने जातभाई को अलंकृत करवाने से क्यों पीछे रहता? उसने राज्य सरकार से न केवल आग्रह किया, बल्कि हठ भी किया। हठ-योग का परिणाम सुखद रहा। राज्य सरकार ने धर्मचंद्र के नाम की अनुशंसा केंद्र सरकार को भेज दी। वहाँ भी सांसद ने भरपूर सफल प्रयास किया और एक दिन इस धर्म नगरी के संस्थापक 'पद्मश्री' हो ही गए।

अपने नाम के आगे पद्श्री लगा देख वह गद्गद हो उठते। उन्होंने पद्मश्री धर्मचंद्र के कई परिचय-पत्र भी छपवाए, जिनपर वह उदारता से दूसरों के पद, प्रमोशन, नियुक्ति आदि की अनुशंसा लिखते और अपनी छवि चमकाते। रोज घर के आगे उनका जनता-दरबार लगता और वह हर प्रार्थी की सिफारिश कर जन-जन का मन मोहते। हर दल उन्हें चुनाव में अपना प्रत्याशी बनाने को उत्सुक था। बिल्डर उन्हें अपने प्रतिनिधि के बतौर फंड आदि की प्रमुख समस्या से जूझने को प्रस्तुत थे, "आप मैदान में उतरिए तो। धन और प्रचार का जिम्मा हमारा है।"

"सियासत में कोई किसी का सगा नहीं है।" इसे चरितार्थ कर धर्मचंद्र ने अपने उपकृत करने वाले सांसद का टिकट हथिया लिया। सार्वजनिक रूप से सांसद की इस अनदेखी पर ढोंग के आँसू भी बहाए। सांसद भी इनके टिकट पाने से विचलित नहीं हुआ, उल्टे उसने धर्मचंद्र को बधाई दी और चुनाव में सफलता की शुभकामनाएँ भी। दूसरे दल से वह चुनाव का प्रत्याशी भी बन बैठा। उसका जन-समर्थन और संपर्क क्षेत्र व्यापक था। धर्मचंद्र उसके सन्मुख नौसिखिया थे। चुनाव प्रचार के समय उन्हें अपने अज्ञान का आभास होता रहा, पर उनका अहं इस स्वीकारोक्ति के आड़े आ जाता। आर्थिक सहायता का वादा करने वाले हजारों तक उनके साथ रहे, पर जब लाखों के व्यय की बात आई तो मुकर गए।

राजनीति एक नशा है, कतई ड्रग्स ऐसा। एक बार लत लगी तो छूटने की संभावना कम हो जाती है। धर्मचंद्र को इस नशे ने बरबाद कर दिया। प्रचार में उन्होंने क्या-क्या नहीं किया? पोस्टर निकाले, धर्मनगरी की स्थापना और लाखों को आवास उपलब्ध करवाने का ढिंढोरा पीटा। आस-पास की सुलभ और सस्ती भूमि लेकर राज्य सरकार ने भी वहाँ एक विशेषज्ञता का बड़ा अस्पताल भी स्थापित किया था। धर्मचंद्र इसका श्रेय लेने से भी नहीं चूके। सियासत में सच और झूठ का अंतर कठिन है।

शीर्षस्थ नेता भी अवसर के अनुरूप कटा-छँटा सच बोलते हैं। पकड़े गए तो जुबान फिसलना एक आम वारदात है।

फिर चुनाव चुनाव है। जनमत का क्या भरोसा? किसे हराए किसे जिताए? इसीलिए चुनाव एक सट्टा है। कुछ व्यक्ति आपस में सट्टा लगाते हैं जीत-हार के। कई विद्वान् नेतागीरी के सिर्फ सत्ता के स्वार्थ की काया पर आदर्श और उसूल का मुलम्मा चढ़ाते हैं, अपनी निजी सुविधानुसार। कुछ भयंकर जातिवादी सैक्युलर हो जाते हैं, कुछ कट्टर बेईमान, ईमानदार। जनतंत्र के चुनाव का कुछ जन्मजात शंकालु मखौल भी उड़ाते हैं। "असली चुनाव तो बाहुबल का है, कई आते हैं और पाते हैं कि उनका वोट तो पहले ही पड़ चुका है।" पहले वामपंथ के दल, उसूलन अपनी प्रजातांत्रिक आस्था का प्रदर्शन ऐसे ही करते थे। हर बूथ का 'दादा' इसी वोट-प्रबंधन में निष्णात था। लोकप्रियता का मापदंड वोट की ठगी से दादा बदल देते। जनप्रिय नेता चुनाव भूले-भटके ही जीत पाता। वह भी दादा की कार्यक्षमता के अभाव से। कौन कहे, आज भी वहाँ लोकतंत्र का यही सफल प्रयोग चलता हो? एक बार कहीं दादा-कल्चर का प्रवेश हो गया तो उसकी विदाई कठिन है। हो तो कैसे हो? नेता को इस में सुभीता है। उसके समर्थकों की एक ही टेक है, दादा से टकराएगा, चूर-चूर हो जाएगा।

जब से चुनाव लड़ने का निश्चय लिया, धर्मचंद्र को भी कानों में एक अजीब, अजानी सनसनाहट सुनाई देती। कई विशेषज्ञों ने उनके कानों की जाँच की। कुछ ने महँगे कैप्सूल भी दिए। पर परिणाम सिफर का सिफर रहा। उनका पुराना परिचित डॉक्टर कहता भी कि यह 'साँय-साँय' आपके मन का भ्रम है। वास्तविकता में ऐसा कुछ है नहीं। पर धर्मचंद्र उस पर कैसे विश्वास करते? जो भुगतता है, वह जानता है। यह साँय-साँय की ध्वनि उनके कानों में शहर के कोलाहल तक में भी गूँजती। वह अकेले बैठने से भयभीत रहते। उन्हें लगता कि साँय-साँय जैसे सामूहिक क्रंदन का स्वर है? रात के सन्नाटे में जैसे दूर कहीं आँधी आई हो। आज के सभ्य समाज का तकाजा है कि कोई रोए भी तो प्रतीक के बतौर रूमाल आँख पर लगाकर। जोर-जोर से रोना असभ्यों की पहचान है। दिखने-दिखाने को घनीभूत समान पीड़ा के बावजूद सब प्रसन्न क्यों न दिखें? सभ्य समाज में जो रहते हैं? यह निरंतर की 'साँय-साँय' जनसभा से लेकर जनता-दरबार तक धर्मचंद्र का पीछा न छोड़ती।

गोपनीयता की शर्त पर जब नामी विशेषज्ञ भी उनकी समस्या के समाधान में असफल रहे तो उन्हें शंका हुई कि कहीं यह मन के भ्रम का कोई काल्पनिक रोग तो नहीं है? जब बैठे-ठाले किसी का कान बजने लगे तो वह सोचे तो क्या सोचे? एक मित्र ने उन्हें शहर के एक प्रसिद्ध मनोवैज्ञानिक का नाम सुझाया। मरता क्या न करता? वह विवशता में इस अनजान प्रक्रिया के लिए भी सहमत हो गए। चुनाव प्रचार से बमुश्किल उन्होंने एक दिन चुराया। यह साँय-साँय का संकट किसी से बताते भी तो कैसे बताते? क्या भरोसा कि यह निजी रोग सार्वजनिक न हो जाए।

डॉक्टर से वह उसकी निजी क्लीनिक में मिले, वह भी गुपचुप, लुक-छिपकर। उन्होंने फीस से अधिक रुपए उसे इसी शर्त पर दिए थे कि उन्हें प्रतीक्षा न करनी पड़े। फिर भी वहाँ जाकर वह अपनी गाड़ी में छिपे रहे, जब तक उन मनोवैज्ञानिक डॉक्टर ने उन्हें बुलाया नहीं। डॉक्टर ने उनसे बचपन से लेकर आज तक का इतिहास जाना। फिर उसका एक प्रश्न उन्हें अंदर तक झकझोर गया। आपने जंगल काटकर एक उपनगर बसाया। पेड़ों के प्रति आपकी यह दुर्भावना क्यों है?

धर्मपुर एक दशक बाद भी हरियाली-विहीन स्थल दिखता था। लोगों ने पेड़ लगाए थे, जो धीरे-धीरे बड़े हो रहे थे। उनका तो यही हाल है कि एक पीढ़ी लगाए तो दूसरी उसका सुख भोगे। उधर उपनगर धर्मपुर के विषय में धर्मचंद्र भी डॉक्टर से मिलकर चिंतन की प्रक्रिया से गुजर रहे थे। आखिर पेड़ों ने उनका क्या बिगाड़ा है? उन्होंने ने तो समाज के विकास में उपयोगी भूमिका निभाई है। सड़कों के रेगिस्तान में वह प्राण-वायु के संवाहक हैं। जलवायु के सुधार और प्रदूषण के नियंत्रण में उनकी प्रशंसनीय भूमिका है।

उन्होंने दिमाग पर जोर डाला कि वृक्षों का क्या गुनाह है कि बैठे-ठाले उन्होंने सैकड़ों पेड़ कटवा डाले? बहुत सोचने के बाद वह इस निष्कर्ष पर पहुँचे कि इसका कोई प्रत्यक्ष कारण तो नहीं है। उन्होंने डॉक्टर से भी यही बताया, "मुझे तो हरियाली से प्रेम है। पेड़ों से दुश्मनी या उनके उन्मूलन सी कोई वजह ध्यान नहीं आती है।" डॉक्टर ने उन्हें एक कप चाय पिलाई और चुस्की लेते जानना चाहा, "कुछ तो जरूर है। अपने बचपन का ध्यान करिए। कोई पेड़ विषयक दुर्घटना-घटना याद आती है क्या?"

धर्मचंद्र ने फिर अपनी स्मृति पर जोर डाला। उन्हें अचानक याद आया कि एक बार उनके पिताजी ने क्लास में फेल होने पर उन्हें डाँटते हुए कहा था, "लिखाई-पढ़ाई में तो तुम्हारी कतई अरुचि है। स्वभाव और प्रवृत्ति से तो तुम लकड़हारे हो। शहर में रहने से बेहतर है कि तुम जंगल में बसकर लकड़ी काटने का अभ्यास करो।" वह तो उनकी माँ ने उन्हें पिटाई से बचाया।

उन्होंने डॉक्टर को यह प्रारंभिक घटना सुनाई तो वह चुप हो गया। उसने उन्हें सुझाया कि "घर में बगीचा लगाएँ। पिताजी की उस फटकार को भूलने का भरसक प्रयास करें। यह साँय-साँय अपने आप ठीक हो जाएगी।"

धर्मपुर एक दशक बाद भी हरियाली-विहीन स्थल दिखता था। लोगों ने पेड़ लगाए थे, जो धीरे-धीरे बड़े हो रहे थे। उनका तो यही हाल है कि एक पीढ़ी लगाए तो दूसरी उसका सुख भोगे। उधर उपनगर धर्मपुर के विषय में धर्मचंद्र भी डॉक्टर से मिलकर चिंतन की प्रक्रिया से गुजर रहे थे। आखिर पेड़ों ने उनका क्या बिगाड़ा है? उन्होंने ने तो समाज के विकास में उपयोगी भूमिका निभाई है। सड़कों के रेगिस्तान में वह प्राण-वायु के संवाहक हैं। जलवायु के सुधार और प्रदूषण के नियंत्रण में उनकी प्रशंसनीय भूमिका है। धर्मचंद्र को याद आया कि कागज भी तो वृक्ष से

ही बनता है। एक पढ़े-लिखे समाज के निर्माण में उनका अहम योगदान है, वरन् इनसान कब तक भोजपत्र का इस्तेमाल करते? शुरू-शुरू में निवासियों को धर्मपुर भी ऐसे ही सामूहिक विलाप और क्रंदन के स्वर सुनाई देते थे। आश्रयहीन चिड़िया को घोंसले की शरण पेड़ देते हैं। पसीना सुखाने को थके-हारे रिक्शवाले या ठेले के मजदूर को इन्हीं के शीतल साये और बयार का सहारा है। धर्मचंद्र के मन की अपराध भावना गहरा गई।

उनके अंतर में प्रश्न उठा, क्या आधुनिक सभ्यता ही ऐसे गुनाहों में पनपी है कि अपने से कमजोर, कमतर और बेजुबान का विनाश करो। क्या मानव जाति लाखों वृक्षों के उन्मूलन के अनुचित अन्याय का दोषी नहीं है? आज भी यही हनन क्या जारी नहीं है? यदि सड़क का चौड़ीकरण करना है तो सबसे आसान विकल्प है। दोनों तरफ के पेड़ काट दो। लकड़ी के ग्राहकों की कमी नहीं है। उसके बने फर्नीचर को 'एंटीक' का दर्जा हासिल है। लोग उसका प्रयोग बैठने-लेटने के लिए नहीं, दूसरों को दिखाने के लिए करते हैं। फलाने के पास अस्सी साल पहले की कुरसी है या मेज है या फिर 'बेड' है। अब तो यह इतिहास की सामग्री है। उस समय का रहन-सहन, उपयोग और प्रसाधन के साधन कैसा था? ड्रेसिंग टेबल की बनावट कैसी थी? कहीं उस पर नक्काशी तो नहीं थी? आज के आधुनिक फैशन-डिजाइनर इन सबका अध्ययन करते हैं। बढ़ई और लकड़ी के माध्यम से उस युग की इन लुप्त वस्तुओं की हूबहू नकल, जो असल सी लगे तो औने-पौने दाम से बाजार में उतारकर धनपति ठगों को ठगने की जुगाड़ लगाते हैं, वह भी सफलता से। इस महारत को कुछ आधुनिक मार्केटिंग तकनीक का नाम देकर उसकी इज्जत बढ़ाते हैं। हम केवल यही जानते हैं कि एक पैसा कमाने वाले ठग को दूसरा बेचने वाला डकैत उल्लू बनाता है। पेड़ अहिंसक है। रेल की पटरी से लेकर आधुनिक आयुध के निर्माण में इनकी लकड़ी का उपयोग होता है।

कोई इनके योगदान का सम्मान नहीं करता है, उल्टे इनका अपमान ही होता है। जैसे रेल दुर्घटना में पटरी से छेड़छाड़ इनसान करे, दोष कोई पटरी को दे। ठीक उसे ही जैसे सियासी दल गांधी के नाम का जाप करें, उनके उसूलों और सिद्धांतों को ठेंगा दिखाकर।

पेड़ों की दुर्दशा है। न उनका इनसानों की तरह जातिवाद में विश्वास है, न आर्थिक असमानता में। वह आदमी से कहीं अधिक संवेदनशील हैं, अपने प्रति की गई हर नाइनसाफी चुपचाप सहते आए हैं। पर हर अन्याय की भी सीमा है। आदमी घर का चूल्हा जलाते हैं, उनकी डालें काटकर। तब भी वह सिर्फ साँय-साँय ही हाय ही भरते हैं। न छोटों को सताते हैं, न बड़ों से डाह करते हैं।

हमें लगता है कि कहीं वृक्ष विनाश ही तो धर्मचंद्र के चुनाव में हार का कारण तो नहीं बन गया? कमजोर की हाय क्या-क्या न कर दे? तभी तो कबीर कह गए हैं, "निर्बल को न सताइए, जाकी मोटी हाय।" कौन कहे कि धन, जन-संपर्क, साधन, पैसा-रुपया और उपनगर बसाने का श्रेय और यश क्या-क्या उनके पास नहीं था? कहावत है कि "लक्ष्मी चंचल होती है।" पर यह आभास किसे है कि इतनी चंचल होती है। एक चुनाव उनके वृक्ष-हनन की एक-एक कौड़ी ले डूबा और उन्हें पैसे-पैसे का मोहताज बना गया।

साअ

९/५, राणा प्रताप मार्ग,
लखनऊ-२२६००१
दूरभाष : ९४१५३४८४३८

लेखकों से अनुरोध

- मौलिक तथा अप्रकाशित-अप्रसारित रचनाएँ ही भेजें।
- रचना फुलस्केप कागज पर साफ लिखी हुई अथवा शुद्ध टंकित की हुई मूल प्रति भेजें।
- पूर्व स्वीकृति बिना लंबी रचना न भेजें।
- केवल साहित्यिक रचनाएँ ही भेजें।
- प्रत्येक रचना पर शीर्षक, लेखक का नाम, पता एवं दूरभाष संख्या अवश्य लिखें; साथ ही लेखक परिचय एवं फोटो भी भेजें।
- डाक टिकट लगा लिफाफा साथ होने पर ही अस्वीकृत रचनाएँ वापस भेजी जा सकती हैं। अतः रचना की एक प्रति अपने पास अवश्य रखें।
- किसी अवसर विशेष पर आधारित आलेख को कृपया उस अवसर से कम-से-कम तीन माह पूर्व भेजें, ताकि समय रहते उसे प्रकाशन-योजना में शामिल किया जा सके।
- रचना भेजने के बाद कृपया दूरभाष द्वारा जानकारी न लें। रचनाओं का प्रकाशन योजना एवं व्यवस्था के अनुसार यथा समय होगा।

पिचकारी मन की भरो

• प्रीति चौधरी 'प्रीत'

रंगों की नव गंध को, लाया फिर से फाग।
मौन हृदय के द्वार पर, बजते हैं अब राग॥

साँस-साँस है फागुनी, पुलकित मन के भाव।
फिर सपनों के ताल में, लहराती है नाव॥

नए-नए अहसास ले, लेकर नई उमंग।
सारे ही संदर्भ अब, हुए प्रीत के संग॥

स्वप्न गुलाबी हो गए, आशाएँ हैं नील।
रुकी-रुकी सी जिंदगी, फिर से है गतिशील॥

जीवन में फिर से भरें, नए-नवेले रंग।
मीत! प्रीत के गीत को, गाएँ हम-तुम संग॥

कितना अद्‌भुत लग रहा, रंगों का संसार।
चुपके से होने लगा, फिर जीवन से प्यार॥

महकी-महकी हर सुबह, बहकी है हर शाम।
फागुन फिर लिखने लगा, खत प्रियतम के नाम॥

जन्म-जन्म का हो गया, तेरा-मेरा संग।
चल अब जीवन में भरें, खुशियों के कुछ रंग॥

दिशा-दिशा मदमस्त है, गाए फागुन गीत।
लाल चुनरिया मीत की, ओढ़े अपनी प्रीत॥

अपने-से लगने लगे, हमको सारे रंग।
स्वप्न सुनहरे देखकर, नयन हुए हैं दंग॥

आशा को रँगने लगे, अब होली के रंग।
खुश हैं मन की तितलियाँ, उड़ें हवा के संग॥

आसमान में उड़ रहा, नीला-लाल गुलाल।
थिरक रहे हर पाँव में, बँधा प्रीति का जाल॥

बौराई-सी ये हवा, गाए फागुन गीत।
रंग लिखेंगे प्रीति के, जग में अपनी जीत॥

होली का त्योहार ये, आता हमको रास।
रंग हमारे पास हैं, हम रंगों के पास॥

सबकी अपनी धुन यहाँ, सबकी अपनी चाल।
हुरियारे सब नाचते, कर गालों को लाल॥

ठंडाई पी भाँग की, झूमे हर चौपाल।
कपड़े सारे तर-बतर, बिखरे-बिखरे बाल॥

बहके-बहके बोल हैं, भटके-भटके ढंग।
बदली-बदली सूरतें, नए-नए सब रंग॥

बम-बम भोले भज रहे, भजते हैं गोपाल।
होली वाले गीत से, सजे भक्ति के थाल॥

करे राधिका श्याम की, कैसे अब पहचान।
होली में तो लग रहे, सारे एक समान॥

कान्हा के मन भा गया, रंगों का यह फाग।
करते यमुना तीर पर, राधा से अनुराग॥

सुबह-शाम ही कर रही, राधा मन में जाप।
होली सूनी श्याम बिन, कैसा यह संताप॥

रंगों की जब श्याम ने, ब्रज में की बौछार।
देखो राधा-श्याम की, शुरू हुई तकरार॥

तुम बिन मेरे श्याम अब, प्रीति हुई है मौन।
इस राधा को फाग के, गीत सुनाए कौन॥

बजी याद में बाँसुरी, ज्यों ही पड़ी फुहार।
राधा ले दर्पण चली, करने को शृंगार॥

सुपरिचित रचनाकार। 'महक गया ये मेरा जीवन' व 'हमने की है प्रीति गजल से' दो संकलन तथा विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में रचनाओं का प्रकाशन व आकाशवाणी रामपुर से काव्य पाठ। कई सम्मान प्राप्त। संप्रति शासकीय शिक्षा सेवा में कार्यरत।

कान्हा करते रास जब, बाँसुरिया के संग।
मोरपंख के खिल उठे, तब सातों ही रंग॥

वंशी बजती कृष्ण की, राधा आती पास।
उड़ती किसी पतंग-सी, मन में ले उल्लास॥

देश भावना धर्म के, बिखरे अद्‌भुत रंग।
जय माँ जय माँ भारती, हर-हर बम-बम संग॥

भारत की सब बेटियाँ, गाएँ होली गीत।
जो भी नयनों में बसे, हो सपनों की जीत॥

मुझसे मेरी जिंदगी, कहती है हर बार।
मन में यदि उल्लास हो, हर दिन है त्योहार॥

आओ बैठें पास हम, थोड़ा करें विमर्श।
कैसे अपने लक्ष्य हों, कैसे हों आदर्श॥

रिश्ते होते प्रेम के, जीवन का ये सार।
प्रेम बिना सूना लगे, सारा ही संसार॥

पिचकारी मन की भरो, होगा तब उद्धार।
यही जगत् का सत्य है, यही जगत् का सार॥

११, फ्रेंड्स कॉलोनी
गजरौला-२४४२२३, अमरोहा (उ.प्र.)
दूरभाष : ९५२८८९४१५३

गद्दी जनजाति के लोकनाट्य

• भरत सिंह

हिमाचल प्रदेश पश्चिमी हिमालय में अवस्थित नैसर्गिक, प्राकृतिक सौंदर्य से परिपूर्ण पर्वतीय भू-भाग है। जितना सुंदर इसका प्राकृतिक परिवेश है, उतना ही सुंदर यहाँ का लोकसाहित्य है। वास्तव में लोकसाहित्य आम जनमानस का साहित्य है, जो श्रुत अथवा कंठस्थ रूप से एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी तक हस्तांतरित होता है। लोकसाहित्य की समस्त विधाओं में 'लोकनाट्य' प्रमख विधा है। इसके माध्यम से जनसामान्य अपनी दिनभर की परिश्रमजन्य क्लांति, चिंताओं और अवसाद का परिहार लोकनाट्यों के मनोरंजनात्मक कार्यक्रमों में पाता है। हिमाचल प्रदेश में मुख्यत: पाँच जनजातीय समुदाय निवासरत हैं—गद्दी, गुज्जर, पंगवाल, लाहौले और किन्नौरे। विवेच्य जनजातीय समुदाय का अपना एक वशिष्ट लोकसाहित्य है, जिसके अंतर्गत इनके लोकगीत, लोककथाएँ, लोकगाथाएँ, लोकनाट्य तथा लोक-सुभाषित आदि आते हैं। यदि बात गद्दी जनजाति की करें तो यह समुदाय हिमाचल प्रदेश के जिला चंबा, काँगड़ा, मंडी एवं प्रदेश के अन्य भू-भाग में निवास करती है। इस जनजाति का मूल निवास स्थान 'ब्रह्मपुर' अर्थात् 'भरमौर' रहा है। रजतधवल पर्वत-श्रृंखलाओं से घिरे जनजातीय क्षेत्र भरमौर अत्यंत दुर्गम एवं आधुनिक सुख-सुविधाओं के अभावग्रस्त होने के परिणामत: यहाँ का लोकमानस अपने मनोरंजन हेतु गीत, संगीत और नृत्य के संयुक्त तत्त्वावधान द्वारा 'लोकनाट्यों' से अपना मनोरंजन करता है। इन पारंपरिक लोकनाट्यों के प्रदर्शन-मंचन के फलस्वरूप ऐतिहासिक, सामाजिक, धार्मिक, सांस्कृतिक और साहित्यिक ज्ञानदर्शन के साथ-साथ विविध प्रकार की उपदेशात्मक शिक्षाओं से समाज अनुगृहीत होता है। गद्दी जनजाति में परंपरित लोकनाट्यों का विवरण इस प्रकार से है—

सुपरिचित लेखक एवं शोधकर्ता। 'गद्दियाली लोकगीतों का साहित्यिक विश्लेषण एवं मूल्यांकन' विषय पर शोधकार्य। 'गद्दी जनजाति के लोकगीत' पुस्तक का प्रकाशन। राष्ट्रीय एवं अंतरराष्ट्रीय शोध-पत्रिकाओं में लोक-संस्कृति विषयक लगभग १८ शोध-आलेख प्रकाशित। संप्रति शोधार्थी हिंदी विभाग, हिमाचल प्रदेश केंद्रीय विश्वविद्यालय धर्मशाला।

हरणातर

गद्दी जनजाति मूलत: जिला चंबा के भरमौर जनपद से संबंधित है। यहाँ पर सर्दियों में भीषण हिमपात होता है, अत: कुछ गद्दी पुहाल अपने मवेशियों सहित कुछ दिनों के लिए 'जांधर' (समतलीय भू-भाग) की ओर प्रवास करते हैं। जबकि अधिकांश लोग स्थायी रूप से भरमौर में ही निवास करते हैं। अत: भरमौर जनपद में होली उत्सव के सुअवसर पर यहाँ के जनसमुदाय में 'हरणातर' लोकनाट्य परंपरित है। हरणातर के दिन सुबह से ही ढोल बजने लगता है। हरणातर के लिए कोई खुला स्थान, आँगन निश्चित करके साफ किए गए स्थान के मध्य में लकड़ियों का बड़ा ढेर लगाया जाता है, जिसे लोग 'घ्याणा' कहते हैं। इसे घ्याणा इसलिए कहते हैं कि यह ढेर आग जलाने के लिए लगाया जाता है। इस अवसर पर स्थानीय जनसमुदाय द्वारा 'हरण' खेला जाता है। हरण अथवा 'हरणातर' में गीत, संगीत, नृत्य और अभिनय चारों का सम्मिश्रण होता है। इस लोकनाट्य में कोई शास्त्रीय बंधन नहीं होता। लोक अपनी प्रकृति और स्वरूप के अनुसार सरल, सहज और स्वाभाविक रूप से 'हरणातर' आयोजित करते हैं, जिसमें अपनी-अपनी रुचि और योग्यता के अनुसार स्वाँग बनते हैं, जिसमें 'खप्पर' (मुखौटाधारी), चंद्रौली (स्त्रीभेस में पुरुष), गद्दी, गद्दण, हरण तथा साहब प्रमुख हैं। हरण स्वाँग करते हुए किसी पशु का चर्म बाँधे हुए होता है। सिर पर सींग लगाए होते हैं। सारे शरीर को डोर से बाँधा हुआ होता है। इस पर बच्चे अथवा व्यक्ति सवारी करते हैं तथा सामर्थ्य के अनुसार पैसे भी देते हैं। हरण या हिरण जानवर के जैसे चलने का अभिनय करता है। वस्तुत: यह लोकनाट्य हास्य-विनोद संवादों से ओत-प्रोत होता है, इस स्वाँग के वस्त्राभूषण ही उत्सुकता और मनोरंजन के साधन हैं।

हरणातर लोकनाट्य के स्वाँगी कलाकार

स्वाँग

गद्दी जनजाति का दूसरा प्रमुख लोकनाट्य 'स्वाँग' है, जो मुख्य रूप से छतराड़ी क्षेत्र में परंपरित है। छतराड़ी क्षेत्र में शिवशक्ति का भव्य मंदिर है, जिसकी मान्यता हर स्थान पर है। जिस दिन मणिमहेश जात्रा भाद्रपद राधाष्टमी को समाप्त होती है, उसी दिन शिवशक्ति छतराड़ी में मेला (जात्रा) प्रारंभ होता है। अत: जातर प्रारंभ होने से पूर्व यहाँ स्वाँग निकालने की प्रथा है। 'स्वाँग' शिवशक्ति छतराड़ी से निकाले जाते हैं। स्वाँगों में तीन मुखौटेधारी पुरुष पात्र होते हैं, जिन्हें स्थानीय लोग 'खप्पर बड्डे' कहते हैं। चौथा मुखौटाधारी स्त्रीपात्र होता है। पुरुषपात्र राक्षस के द्योतक हैं तथा स्त्रीपात्र देवी का स्वाँग माना जाता है। जब स्वाँग निकलता है तो वहाँ पर उपस्थित दर्शक तुमुल ध्वनि करते हैं। राक्षस पात्रों को ऐंहण (बिच्छु बूटी) से पीटने का अभिनय किया जाता है। जब राक्षस पात्रों को पीटा जाता है तो वे विभिन्न भाव-भंगिमाओं के माध्यम से अभिनय कर अपनी पीड़ा को प्रकट करते हैं, यह लोकनाट्य दर्शकों के लिए अत्यंत मनोरंजन और उत्सुकता का विषय बन जाता है।

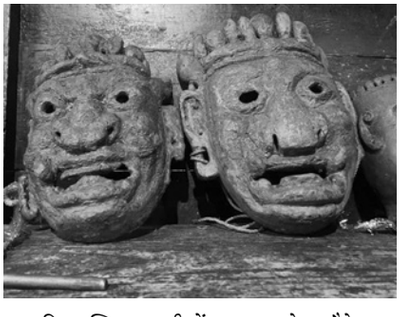

शिवशक्ति छतराड़ी में प्रयुक्त वाले मुखौटे

उक्त समस्त मुखौटाधारी राक्षस अपने हाथों में खड्ग धारण किए होते हैं। लोकनाट्य का मंचन करते हुए राक्षस पात्र देवी पर आक्रमण करते हैं। देवी का स्वाँग बड़ी वीरता और पराक्रम से लड़ते हुए राक्षसों को पराजित करता है। इसी दिवस स्वाँग सहित बटुक महादेव की यात्रा भी दिखाई जाती है। यह स्वाँग समस्त लोकमानस के लिए धार्मिक भावना का प्रेरक और मनोरंजन का उत्तम साधन है।

बांढ़ा लोकनाट्य

बांठड़ा शब्द का संबंध भांड शब्द से जुड़ा है। भांड शब्द स्वयं संस्कृत भाण से उत्पन्न हुआ है। संस्कृत साहित्य के अनुसार भाण दृश्य-काव्य का एक रूपक है, जिसमें हास्य की प्रधानता रहती है और प्राय: एक अंक का होता है। इस दृष्टि में भाण, सादृश्य और प्रहसन को लोक-शैली के नाट्य रूपक कहा जाता है। हिमाचल के अन्य क्षेत्रों, यथा—मंडी, बिलासपुर और काँगड़ा में यह लोकनाट्य दशहरे और दीपावली उत्सव के दौरान मनाया जाता है, जबकि भरमौर जनपद में बांढ़ा उत्सव असूज मास की आरंभिक तिथियों में मनाया जाता है। भरमौर के बाढ़े और काँगड़ा, मंडी और बिलासपुर के बांठड़े में सांगोपांग समानता पाई जाती है। लेकिन क्षेत्र भिन्नता के फलत: इसमें कतिपय असमानता स्वाभाविक है। भरमौर जनपद में बांढ़ा नाट्य उत्सव प्रमुख रूप में दियोल, चंहौता, क्वारसी और शुटकर में मनाया जाता है।

बांढ़ा लोकनाट्य का आयोजन प्राय: मंदिरों में किया जाता है। भरमौर जनपद के चंहौता गाँव में लक्ष्मीनारायण, शिव और नाग मंदिर हैं, अत: बांढ़े का आयोजन मंदिर के खुले प्रांगण में ही किया जाता है। स्थानीय लोकमान्यताओं के अनुसार बांढ़ा लोकोत्सव का आयोजन नौ दिन होता था, अत: प्रकाश की व्यवस्था हेतु गाँव का प्रत्येक सदस्य एक 'जंगणी' (विरोजायुक्त लकड़ी) का गट्ठा लाता है, जिसका प्रयोग 'घियाणा' (आग जलाने के लिए लकड़ी का ढेर) लगाने के काम आता है। इस 'घियाणे' के चारों ओर बैठकर समस्त जनसमुदाय इस लोकनाट्य का आनंद लेता है।

बांढ़ा लोकनाट्य का मुख्य आकर्षण 'स्वाँग' आयोजन है। इस लोकनाट्य में भी हरणातर की भाँति विभिन्न स्वाँगों का आयोजन होता है। संप्रतिकाल में बांढ़ा लोकनाट्य के पुनरुत्थान हेतु दियोल गाँव के स्थायी निवासी, वर्तमान में कृषि विज्ञान केंद्र चंबा में बतौर कृषि वैज्ञानिक पद पर कार्यरत डॉ. केहर सिंह ठाकुर इस लोकपरंपरा के संरक्षण, संवर्द्धन में उल्लेखनीय कार्य कर रहे हैं।

बांढ़ा उत्सव में प्रत्येक स्वाँग अपनी-अपनी वाक्पटुता दिखाने का प्रयत्न करते हैं। यद्यपि इस लोकनाट्य में किसी कथा विशेष का अभिनय अपरिहार्य नहीं है, किंतु फिर भी रात्रि में सामूहिक रूप से पारंपरिक वाद्य-यंत्रों सहित गाने, बजाने, नाचने और हँसी-मजाक से दर्शकों का मनोरंजन किया जाता है। बांढ़ा लोकनाट्य के संवाद भी निश्चित नहीं हैं। अपनी वाक्पटुता और हाजिरजवाबी से समूचे वातावरण को कुतूहलपूर्ण बनाया जाता है।

गद्दी जनजातीय समुदाय में मनाए जाने वाले प्रमुख 'लोकनाट्यों' का सम्यक् अवलोकन करने के उपरांत अंततोगत्वा कहा जा सकता है कि अनंतकाल से गद्दी जनजाति के यायावरी जीवन में कोई परिवर्तन नहीं आया, किंतु संस्कृतियों के आपसी संक्रमण एवं भूमंडलीकरण और बाजारवाद के प्रभावमय इनकी सांस्कृतिक विरासत में कतिपय परिवर्तन अवश्य आया है, लेकिन बावजूद इसके इस समुदाय ने अपने लोकसाहित्य और लोकसंस्कृति के मौलिक स्वरूप को संप्रतिकाल तक अक्षुण्ण बनाए रखने में सफल रहा है। यदि इनके लोकनाट्य 'हरणातर', स्वाँग एवं बांढ़ा की बात करें तो इसकी लोक-परंपरा एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी तक हस्तांतरित हो रही है। किंतु संस्कृतियों के आपसी संक्रमण, बाजारवाद और भूमंडलीकरण के दौर में विवेच्य लोकनाट्यों के मंचन और प्रस्तुति में कतिपय भेद आया है, बावजूद इसके गद्दी जनजाति ने इन लोकनाट्यों को वर्तमान में भी अक्षुण्ण बनाए रखा है। प्रकृति के सान्निध्य और कठोर पारिश्रमिक जीवनयापन करने के परिणामस्वरूप विवेच्य समुदाय के लोकसाहित्य में प्रकृति की सुकोमलता, भव्यता, श्रम-साधना और ऋतु-त्योहार एवं पारिवारिक संबंधों का ताना-बाना इसके लोकसाहित्य का वर्ण्य विषय है।

साअ

गाँव-भौंट, डाकघर गरनोटा, तहसील भट्टियात,
जिला चंबा-१७६२०७ (हि.प्र.),
दूरभाष : ८२१९७७५९०६

किराएदार माँ-बाप

● प्रियंका पाठक

"चंदन बेटा! खाना क्यों नहीं खाया तुमने? तुम्हारी माँ बता रही थी कि तुम नाराज हो, इसलिए खाना नहीं खा रहे हो। चलो, मैं तुम्हें अपने हाथों से खिलाता हूँ।"

"नहीं पापा, मैं खाना नहीं खाऊँगा, मुझे भूख नहीं है। माँ जब देखो, मुझे ही डाँटती रहती है। नंदू को कभी नहीं डाँटती। हमेशा उसी के पसंद का खाना बनाती है। अब आज मैंने खीर बनाने के लिए बोला तो सेवई बना दी उन्होंने। क्योंकि नंदू को सेवई पसंद है।"

"तुम्हें कैसे पता कि तुम्हारी माँ ने खीर नहीं बनाई होगी। उन्होंने तुम्हारी मनपसंद खीर और रसमलाई भी बनाई है, जो तुम्हें सरप्राइज देना चाहती थी। चंदू बेटा, माँ भी तुम्हें बहुत प्यार करती हैं। बस तुम बड़े हो तो तुम्हें समझदार बनाना चाहती हैं, इसीलिए कभी-कभार तुम्हें डाँट देती हैं। अच्छा यह बताओ, तुमने नंदन से झगड़ा क्यों किया? कितनी बार तुम्हें समझाया है कि झगड़ा करना अच्छी बात नहीं है। तीनों भाई-बहन में तुम सबसे बड़े हो, तुम्हें तो उनके साथ मिलजुलकर रहना चाहिए।"

"नहीं पापा, मैंने झगड़ा नहीं किया, नंदन और मम्मी केवल मेरी शिकायत करते रहते हैं। पूरी बात तो आपको बताते नहीं, आप सुगंधा से पूछ लें। नंदन मुझसे मेरी पतंग उड़ाने के लिए माँगता तो मैं दे देता, लेकिन उसने मेरी चार पतंग फाड़ दीं, तो मैं क्या करता? संधू भी तो मेरे साथ पतंग उड़ा रही थी (सुगंधा को सभी प्यार से संधू कहते थे)। उसे तो कभी मुझसे शिकायत नहीं रहती। नंदू खुद बदमाशी करता है और सारा इलजाम मुझ पर लगा देता है। आप ही बताइए न, कितनी आरजू-मिन्नत के बाद आपने मुझे पतंग खरीदने के लिए पैसे दिए थे।"

"ठीक है बेटा! तुम्हारी बात भी अपनी जगह सही है, लेकिन तुम ही सोचो, रोज-रोज तुम्हें नई पतंग चाहिए, वह भी एक-दो नहीं, बल्कि पाँच। इसीलिए मैं आनाकानी करता हूँ तुम्हें पतंग दिलवाने में।"

"क्या करूँ पापा, हमेशा मेरी पतंग कट जाती है, इसीलिए मैं पाँच पतंग एक साथ ले लेता हूँ। एक कटी तो दूसरी उड़ा लूँगा।" चंदू ने मुँह बनाते हुए कहा।

श्याम सुंदर बाबू ने कहा, "चलो कोई बात नहीं। झगड़ा नहीं करना चाहिए। तुमको मुझे बताना चाहिए था, नई पतंग के लिए पैसे दे देता। यू आर ए गुड बॉय। छोटे भाई से झगड़ा नहीं करते बेटा। तुम तो बड़े हो।"

नवोदित लेखिका। कविताएँ और कहानियाँ विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित। संप्रति असिस्टेंट प्रोफेसर, डी.बी.एस.डी. डिग्री कॉलेज, गरखा, सारण, बिहार।

"सॉरी पापा।" कहते हुए चंदन ने अपने पापा के हाथों से अपनी मनपसंद खीर खाई और फिर सोने चला गया।

धीरे-धीरे बच्चे बड़े होने लगे। तीनों काफी समझदार एवं मेहनती थे। इन बच्चों में चंदन अपने पापा के दिल के काफी करीब था, क्योंकि वह बहुत आज्ञाकारी था। जबकि सुगंधा उनकी लाड़ली थी और छोटा वाला तो सबसे नटखट सबका प्यारा-दुलारा था ही। बड़े बेटे के बाद संधू ने भी बहुत कम उम्र में ही बैंक की नौकरी ज्वॉइन कर ली थी। चंदन के लिए बहुत अच्छे रिश्ते भी आने लगे। कोई लड़की बैंक में जॉब करती थी, कोई शिक्षिका थी, कोई सॉफ्टवेयर इंजीनियर तो कोई असिस्टेंट प्रोफेसर थी। इतनी सारी लड़कियों में गायत्री उन्हें पसंद आई, जो कि कॉलेज में पढ़ाती थी। बड़े धूमधाम से उन्होंने अपने बड़े बेटे चंदन की शादी गायत्री से कर दी। शादी के दिन श्याम सुंदर बाबू घर-परिवार के बारे में तरह-तरह के सपने सँजो रहे थे। घर में पहली शादी थी, इसलिए वह बहुत खुश थे। नंदन ही शादी की सारा व्यवस्था सँभाले हुए था। बैंड की धुन पर उसने अपने दोस्तों के साथ बड़े भैया की शादी में खूब धमाल मचाया। सुगंधा ने भी शादी में अपने कॉलेज के और कुछ बैंक के दोस्तों को बुलाया था। दोनों भाई-बहन अपने दोस्तों के साथ मिलकर भाभी गायत्री से हँसी-मजाक और चुहलबाजी करने का कोई मौका नहीं छोड़ना चाहते थे। केरल से आए उसके दोस्तों ने भी खूब एन्जॉय किया।

नंदन केरल से इंजीनियरिंग की पढ़ाई कर रहा था। अभी फाइनल ईयर में ही था कि उसका भी कैंपस सलेक्शन हो गया। बहुत बढ़िया पैकेज मिला था। बड़े बेटे और बेटी की नौकरी के बाद अब छोटे बेटे की नौकरी लग जाने की खबर सुनते ही श्याम सुंदर बाबू के दोस्तों ने पार्टी की माँग की तो उन्होंने पार्टी देने का मन बना साथ ही अपने सभी सगे-संबंधियों को भी सूचना देकर पार्टी में सम्मिलित होने के लिए बुलाया।

जो मिलता, उससे बोलते, भाई अब सुगंधा बची है, बेटी की शादी किसी अच्छे लड़के से कर दें तो उऋण हो जाएँ। फिर आगे की सोचेंगे।

समय बीतता गया। नंदन एक बड़ी कंपनी में मैनेजिंग डायरेक्टर बन गया। श्याम सुंदर बाबू बेटों से निश्चिंत होकर सुगंधा की शादी की तैयारियों में जुट गए। उन्होंने कई लड़कों को सुगंधा के लिए देखा, लेकिन वह चाहते थे कि सुगंधा बैंक में है तो कोई बैंक अधिकारी मिल जाए तो ज्यादा अच्छा है। कई लोगों से उन्होंने इस बाबत चर्चा भी की थी। कई साल बाद अचानक एक दिन उनकी मुलाकात अपने पुराने मित्र प्रोफेसर बी.एन. सिंह से हो गई। दोनों बिछड़े मित्रों में घर-परिवार की बहुत सारी बातें हुईं। इसी क्रम में बच्चों की पढ़ाई-लिखाई, नौकरी, शादी-ब्याह की भी बातें हुईं तो उन्हें पता चला कि प्रोफेसर साहब का मँझला बेटा भी पंजाब नेशनल बैंक में ही है। उसी बैंक में सुगंधा भी थी। दोनों ने तय किया कि क्यों न अपनी दोस्ती को रिश्तेदारी में बदल दिया जाए? उन्होंने अपने मित्र प्रोफेसर बी.एन. सिंह के बेटे सौरव राज से बहुत ही धूमधाम से सुगंधा की शादी कर दी। सभी मित्रों और रिश्तेदारों ने शादी में बढ़-चढ़कर भाग लिया। गायत्री ने भी ननद की शादी में कोई कमी न होने दी।

नंदन ने अपनी कमाई से उपहारस्वरूप एक डायमंड का सेट और हनीमून ट्रिप का पैकेज दिया। सुगंधा विदा होकर अपने ससुराल चली गई। श्याम सुंदर बाबू को लगा कि उन्होंने चार धाम की यात्रा कर ली। श्याम सुंदर बाबू ने बच्चों की परवरिश बहुत ही मेहनत से और पेट काटकर की थी। अपनी सारी सुख-सुविधाओं का त्याग कर एक-एक पैसा उनके लिए जोड़ा था। बच्चे सेटल हो गए तो उन्हें लगा कि उनका दायित्व पूरा हो गया और आगे का जीवन अब आराम से कटेगा। उन्होंने अपनी पत्नी सावित्री के साथ मिलकर रिटायरमेंट का प्लान बनाना शुरू कर दिया था। उन दोनों ने विचार किया कि अब बहुत हो गया सरकारी क्वार्टर में रहना। रिटायरमेंट के बाद उसे खाली करना ही पड़ेगा तो रहने के लिए अब अपना घर जरूरी हो गया है। अपने खुद के घर में बेटे-बहुओं के साथ अपनी बाकी जिंदगी चैन से काट देंगे। नंदन के लिए भी बहुत अच्छे-अच्छे रिश्ते आ रहे थे। लेकिन उनकी बड़ी बहू गायत्री जिद पर अड़ी थी कि मेरे मामा की बेटी नंदिनी से ही नंदन की शादी होनी चाहिए। जबकि माँ सावित्री चाहती थी कि नंदन की शादी उनकी सखी माधुरी की बेटी काजल से हो, लेकिन गायत्री के आगे उनकी एक न चली। मजबूरन नंदिनी से नंदन की शादी करनी पड़ी।

रिटायरमेंट के बाद श्याम सुंदर बाबू ने अपना सारा पैसा जमीन खरीदने में ही लगा दिया। दोनों बेटों के सहयोग से दो मंजिला मकान भी बनकर तैयार हो गया। बड़े बेटे चंदन ने अपने नाम से ही रजिस्ट्री करवाई। क्योंकि मकान बनवाने में ज्यादा खर्च उसका लगा था। इसलिए श्याम सुंदर बाबू ने कोई आपत्ति नहीं जताई। बड़ी धूमधाम से उन्होंने गृह प्रवेश किया। श्याम सुंदर बाबू और सावित्री को अब अपना जीवन सार्थक लग रहा था, क्योंकि अपने सभी दायित्वों का निर्वाह उन्होंने कर दिया था। सावित्री ने कहा कि "प्रभु से प्रार्थना है कि बाकी का जीवन उनकी सेवा और सत्संग में गुजरे।"

छुट्टियों में नंदन भी घर पर आया हुआ था। नंदिनी प्रेग्नेंट थी। श्याम सुंदर बाबू और सावित्री चाहते थे कि पूरा परिवार एक साथ रहे। उन दोनों ने चंदन को बुलाया और कहा, "बेटे, मैं चाहता हूँ कि तुम दोनों का परिवार एक साथ ही रहे।"

नंदन ने भी कहा, "ठीक है पापा, जैसा आप उचित समझें। वैसे भी तो भैया की नौकरी इसी शहर में है। बढ़िया रहेगा, सभी लोग साथ रहेंगे तो आप लोगों की सेवा भी होगी और बच्चों से आप लोगों का मन भी लगा रहेगा। आराध्या और अध्यात्म भी तो आप दोनों के बगैर रह नहीं पाते हैं। मैं भी चाहता हूँ कि मेरा पहला बच्चा आप लोगों के सान्निध्य में ही पैदा हो और दादा-दादी के आशीर्वाद से फले-फूले।"

श्याम सुंदर बाबू बोले, "कितना समझदार है तू नंदू। आज सीना चौड़ा हो गया तेरी बातों से।" जब ज्यादा प्यार दिखाना होता था तो नंदू-चंदू नाम से ही अपने बच्चों को बुलाते थे।

इधर कोरोना महामारी ने अपने पाँव पसारने शुरू कर दिए थे। इस वायरस ने सभी की जिंदगी में उथल-पुथल मचा रखी थी। इधर कुछ दिनों से गायत्री और नंदिनी में खटपट शुरू हो गई थी। क्योंकि घर में काम करने वाले रामू काका अपनी बीमार माँ से मिलने गाँव चले गए थे। काम को लेकर दोनों में सुबह से ही झगड़ा शुरू हो जाता। इस वजह से श्याम सुंदर बाबू और सावित्री चिंतित रहने लगे। बात यहाँ तक पहुँच गई कि चंदन ने उनसे पूछे बगैर घर बेच दिया। जमीन उसके नाम जो थी। जो पैसे मिले, उससे अपने लिए नया घर खरीद लिया। उसके बूढ़े माँ-बाप कैसे रहेंगे, उससे उसे कोई मतलब नहीं था।

श्याम सुंदर बाबू और उनकी पत्नी इस पूरे प्रकरण से अनजान थे। उन्हें जब घर खाली करने का नोटिस मिला, तब पता चला कि घर तो बिक चुका है। उन्होंने कोर्ट में बड़े बेटे के खिलाफ केस कर दिया। परिवार के सभी लोग परेशान रहने लगे। पंचायत हुई। लोकलाज का हवाला देकर लोगों ने श्याम सुंदर बाबू से मुकदमा वापस लेने का दबाव बनाया। वह राजी भी हो गए। इसी बीच एक और धोखा उनका इंतजार कर रहा था। नंदन आया और इस प्रकरण पर मौन रहा। माँ-बाप का कुशल-क्षेम पूछे बगैर नंदनी को लेकर जहाँ नौकरी करता था, चला गया। इसी गम में उनकी पत्नी भी बीमार रहने लगी। इस कोरोना काल में श्याम सुंदर बाबू बिल्कुल अकेले पड़ गए। अपने घर से बेघर। घर में काम करने वाले रामू काका भी अभी तक अपने गाँव से नहीं लौटे थे

और सावित्रीजी से घर का काम होता नहीं था। ऊपर से वह बीमार पड़ गई, क्योंकि बेटों के विश्वासघात ने उन्हें बिल्कुल तोड़ दिया था। बड़े बेटे के घर में उन लोगों के लिए जगह नहीं थी। वह तो भला हो पंकज कुमार झा का, जिन्होंने उनका मकान खरीदा था और उसी में जिस फ्लोर पर वे रहते थे, उन्हें रहने के लिए दे दिया। वह तो किराया भी नहीं ले रहे थे, लेकिन श्यामसुंदर बाबू नहीं माने। उन्हें बिना किराया दिए रहना मंजूर नहीं था। वह बोले, "पंकज बेटा, यह आपका बड़प्पन है कि मकान खरीदने के बाद भी, जिसमें हम रहते थे आपने उसी फ्लोर को हमें रहने के लिए दिया। इसके लिए आपका तहे दिल से शुक्रिया। जब अपनों ने मुँह मोड़ लिया तो आपने हमें रहने के लिए आश्रय दिया। आपका अहसान हम कैसे चुका पाएँगे।"

"अहसान चुकाने का एक तरीका है, यदि आप बुरा न मानें तो।" पंकज ने नम्रता के साथ कहा।

"आप दोनों का खाना मेरे ही घर से आएगा। ऐसी हालत में माताजी खाना कैसे बनाएँगी?"

"नहीं-नहीं पंकज बेटा, जब तक रामू नहीं आ जाता, तब तक मैं दूसरे नौकर का इंतजाम कर लूँगा और मुझे पेंशन तो मिलती ही है।"

"जब तक रामू नहीं आ जाता, तब तक आप मेरे यहाँ ही खाना खाएँगे। इस कोरोना काल में आपको कोई नौकर-नौकरानी कहाँ मिलेगा।"

उन दोनों ने पंकज की बात मान ली। अपने ही घर में उन्होंने एक फ्लैट किराए पर ले रखा है, उसी में दोनों प्राणी चुपचाप रहते हैं। यह उनकी बदकिस्मती है कि जिस घर के कभी मालिक हुआ करते थे, उसी घर में किराएदार बनकर रह रहे हैं।

पत्नी भी कोरोना काल में भगवान् को प्यारी हो गई। बड़े बेटे को उन्होंने खबर भिजवाई, लेकिन वह अपनी माँ की अरथी को कंधा देने तक नहीं आया। बेटी सुगंधा तो विदेश चली गई थी, वह चाहकर भी नहीं आ पाई। नंदन तो सात-आठ सौ किलोमीटर दूर रहता है। लेकिन उसने भी अपने पिता से नाता तोड़ लिया है। बेचारे श्याम सुंदर बाबू अस्सी साल की अवस्था में निस्सहाय अकेले रह गए हैं। वह तो भला हो पंकज बाबू का, जिन्होंने उनका मकान खरीदा और जिसके वह किराएदार हैं। वही इनकी देखभाल करते हैं।

साअ

संजय गांधी नगर रोड, नं.-१० ए,
हनुमान नगर, पटना-८०००२६ (बिहार)
दूरभाष : ८२१०७८१९४९

साहित्य अमृत (मासिक)

(फॉर्म नं. ४, नियम ८ के अनुसार स्वामित्व संबंधी विवरण)

समाचार-पत्र का नाम	:	साहित्य अमृत
प्रकाशन अवधि	:	मासिक
भाषा जिसमें प्रकाशित होनी है	:	हिंदी
प्रकाशन स्थान	:	४/१९, आसफ अली रोड, नई दिल्ली-११०००२
संपादक का नाम	:	लक्ष्मी शंकर वाजपेयी
नागरिकता व पता	:	भारतीय, ४/१९, आसफ अली रोड, नई दिल्ली-११०००२
प्रकाशक का नाम	:	पीयूष कुमार
नागरिकता व पता	:	भारतीय, ४/१९, आसफ अली रोड, नई दिल्ली-११०००२
मुद्रक का नाम व पता	:	न्यू प्रिंट इंडिया प्रा.लि., ८/४-बी, साहिबाबाद इंडस्ट्रियल एरिया, साइट-IV, गाजियाबाद-२०१०१०
उन व्यक्तियों के नाम व पता, जो समाचार-पत्र के स्वामी हों तथा जो समस्त पूँजी के एक प्रतिशत से अधिक के साझीदार या हिस्सेदार हों	:	पीयूष कुमार, ४/१९, आसफ अली रोड, नई दिल्ली-११०००२

मैं, पीयूष कुमार, एतद् द्वारा घोषित करता हूँ कि मेरी अधिकतम जानकारी के अनुसार दिए गए विवरण सत्य हैं।

नई दिल्ली, २० मार्च, २०२४ — पीयूष कुमार

व्यथा बोझ से व्याकुल पतझर

● विनय मिश्र

: एक :

तेरी यादों में खोया वक्त निकला
बुरा जितना हो अच्छा वक्त निकला

मैं अपनी जिंदगी में मर चुका हूँ
मेरे हिस्से में मुर्दा वक्त निकला

उलझकर रह गया बेचैनियों में
बताऊँ क्या कि कैसा वक्त निकला

वो आशा की किरण कैसे दिखे जब
कोई डूबा सितारा वक्त निकला

मेरे ही सामने से देखता हूँ
किसी इक अजनबी-सा वक्त निकला

कभी वापस नहीं आना है कहकर
न जाने कब पुराना वक्त निकला

समझता था समंदर को ही गहरा
समंदर से भी गहरा वक्त निकला

तुम्हारे हाथ मेरे हाथ में थे
मेरे हाथों से भी क्या वक्त निकला

नमी लेकर मेरी आँखों की सारी
मेरे जख्मों-सा ताजा वक्त निकला

: दो :

उसी की राह तकता हूँ निरंतर
मैं जिसकी याद में रहता हूँ अकसर

तुम्हीं से छत है, दीवारें हैं, दर है
रहेगा क्या तुम्हारे बाद ये घर

बहुत बेचैनियों में जी रहा हूँ
मैं अपनी जिंदगी खामोश होकर

उमीदों की फसल ही लहलहाए
अभी धरती कहाँ है इतनी उर्वर

इन्हीं वीरानियों में जागते हैं
कई अनुभूतियों के नाद निर्झर

चमकते चाँद से पूछा है मैंने
रखा किसने तुम्हारा नाम सुंदर

वो मौसम आने वाला है खुशी का
व्यथा के बोझ से व्याकुल है पतझर

: तीन :

काम आती है मेरे दिल की लगन
जब बहुत होता है कुछ लिखने का मन

एक सोने का हिरन है जिंदगी
और मेरी जिद है सीता का वचन

इस उदासी में भी हँसती है बहुत
भूली-बिसरी तेरी यादों की छुअन

बोलने का रास्ता मिलता नहीं
चुप्पियों का एक जंगल है सघन

अर्थ कोई एक अभिनव दे गया
मेरे अनुभव और शब्दों का चयन

कितनी ही चीजें हैं शामिल क्या कहूँ
इस हवा में घुल रही है जो घुटन

हौसलों की जेब खाली देखकर
एक दु:ख करने को बैठा हरि भजन

: चार :

कितने छल अपनी मुसकान में रखता है
वो जो मुझको हरदम ध्यान में रखता है

एक नफा-नुकसान से ज्यादा क्या हूँ मैं
सोच के वो मुझको सामान में रखता है

मेरे पास जो मेरा है, वो कितना है
यह भी वो अपने अनुमान में रखता है

एक मसीहा जिसने खुद को मान लिया
कब अपने को वो इनसान में रखता है

अपनी भाषा का कवि कहकर कौन मुझे
तुलसी-मीरा और रसखान में रखता है

ख्वाब अलग है, तुम सचमुच में कैसे हो
मन तुमको जो इक वरदान में रखता है

जाने-माने रचनाकार। 'सच और है', 'बनारस की हिंदी गजल' (संपादित गजल-संग्रह); 'समय की आँख नम है' (गीत-संग्रह); 'सूरज तो अपने हिसाब से निकलेगा' (कविता-संग्रह); 'इस पानी में आग' (दोहा-संग्रह); 'पलाश वन दहकते हैं' स्व. मंजु अरुण की रचनावली का संपादन। प्रतिष्ठित पत्र-पत्रिकाओं में निरंतर रचनाएँ प्रकाशित। संप्रति राजकीय कला महाविद्यालय, अलवर (राज.) के हिंदी विभाग में कार्यरत।

दु:ख सारे, आँखों में रखने वाला शख्स
खुशियों को दिल के वीरान में रखता है

: पाँच :

हुआ जो रात के बीते पहर में
उसी की रोशनी है इस खबर में

मैं किसके मन के हाथों खेलता हूँ
खिलौना भर हूँ मैं किसकी नजर में

हजारों झूठ के स्वर एकजुट हैं
मगर सच लड़ रहा है एक स्वर में

मोहब्बत है किसी को बिन बताए
यूँ रख लेना ज्यों चुपके से नजर में

न केवल काफिया है जिंदगी का
मेरा दु:ख भी है गजलों की बहर में

इसी गहरे धुँधलके में रहा है
चमकती धूप-सा कोई सफर में

अभी है दूर आँखों से सवेरा
अभी दुनिया है ख्वाबों के असर में

बी-१६१, हसन खाँ मेवाती नगर
अलवर-३०१००१ (राज.)
दूरभाष : ०९४१४८१००८३

शिवानी : लोकप्रिय सर्जना का पुनर्पाठ

● वेदप्रकाश अमिताभ

शिवानी को हिंदी के आलोचकों से कोई सकारात्मक मंतव्य शायद नहीं मिला। सामान्य पाठकों का भरपूर स्नेह मिला, सराहना मिली, उनके सभी उपन्यासों के कई-कई संस्करण उनकी लोकप्रियता के प्रमाण हैं। यह लोकप्रियता ही उनकी बैरन बन गई, क्योंकि अकादमिक जगत् में इसे गुणवत्ता का विलोम माना गया है। हिंदी के एक प्रबुद्ध कथालोचक डॉ. गोपाल राय ने 'चौदह फेरे' उपन्यास से उपन्यास-यात्रा प्रारंभ करने वाली शिवानी को 'सामान्य पाठकों के समक्ष कुशवाहा कांत, प्यारे लाल आवारा आदि की तुलना में एक बेहतर विकल्प' प्रस्तुत करने का श्रेय दिया है (हिंदी उपन्यास का इतिहास, पृ. ३४०)। किसी अन्य कथालोचक को शिवानी के संदर्भ में गुलशन नंदा भी याद आ गए होंगे। 'कृष्णकली', 'भैरवी', 'विषकन्या', 'करिए छिमा', 'श्मशान चंपा', 'किशुनली', 'सुरंगमा' आदि उपन्यासों को पढ़ते हुए साफ पता चलता है कि वे कुशवाहा कांत की श्रेणी की उपन्यासकार नहीं हैं। स्त्री, विशेषत: पर्वतीय स्त्री के संघर्ष, यातना और विद्रोह को उन्होंने भलीभाँति संप्रेषित किया है। विचित्र बात है कि महिला लेखन के शुरुआती दौर में स्त्री-अस्मिता की इस पक्षधरता को सर्वथा नजरअंदाज किया गया। स्त्री-विमर्श के पैरोकार भी उनका उल्लेख प्राय: नहीं करते हैं। डॉ. गोपाल राय अंतत: इस निष्कर्ष पर पहुँचे हैं कि 'अपने समय की अभिव्यक्ति की दृष्टि से इन कथाकृतियों को उपन्यास कहने का कोई औचित्य नहीं है।' यह बहुत कठोर टिप्पणी है और शिवानी के साथ न्याय नहीं करती है। शिवानी के कई उपन्यास धर्मयुग जैसी व्यावसायिक पत्रिकाओं में धारावाहिक छपे हैं, प्रतिबद्ध समीक्षकों की अरुचि और उपेक्षा का एक यह भी कारण हो सकता है।

अपने समय की प्रामाणिकता से शिवानी के उपन्यास रहित नहीं हैं। सभी उपन्यास 'स्त्री' के शोषण और छले जाने के उदाहरणों से भरे पड़े हैं। 'कृष्णकली' में पुरुषों की वासनाकुल भूखी दृष्टि स्त्री के अंतरंग सौंदर्य तक नहीं पहुँच पाती है, कृष्णकली का यह अनुभव अयथार्थ नहीं है—'कोई मुग्ध दृष्टि से उसकी बड़ी-बड़ी आँखों को देखता रहता है, कोई निर्लज्ज दृष्टि का अदृश्य भाला उसके सुडौल वक्ष के आरपार

सुपरिचित लेखक। विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में रचनाएँ प्रकाशित। 'वसंत के इंतजार में', 'कितनी अग्नि परीक्षाएँ' (कविता-संग्रह), 'दुख के पुल से', 'दूसरी शहादत' (कहानी-संग्रह), 'तीसरी आजादी का सपना' (व्यंग्य) प्रकाशित। साहित्यश्री सम्मान, विश्वविद्यालय स्तरीय लेखन पुरस्कार से सम्मानित।

भेदकर उसकी बैकलेस चोली के बंधन शिथिल कर देता है। जितने ही लोलुप पुरुष, उतनी ही विचित्र विभिन्न दृष्टियाँ। क्या आज तक भी दृष्टि में उसे सच्चे निश्छल स्नेह की ऐसी झलक मिल सकी है?'

प्रौढ वय के संभ्रांत कहे जाने वाले पुरुष भी स्त्री को 'भोग्या' ही मानते हैं, चाहे वह दिनकर (सुरंगमा) हो या राजकमल सिंह (चल खुसरो घर आपने)। 'भैरवी' में फौजी अफसर चंदन के लिए भूखे भेड़िए बन गए हैं। चलती गाड़ी से कूदकर चंदन अपने शील को बचा पाती है। क्या स्त्रियों के साथ हो रहे छल, अपवाद, यौन शोषण, बलात्कार आदि हादसों में 'समय की अभिव्यक्ति' नहीं मानी जाएगी? सामाजिक रूढ़ियों और राजनीतिक विसंगतियों के अनेक संदर्भ इन उपन्यासों में हैं और शिवानी को समय-सजग, परिवेश-संपृक्त लेखिका के रूप में रेखांकित करते हैं। पर्वतीय परिवेश में जात-पाँत, ऊँच-नीच की गुंजलक कितनी मजबूत है, यह इन उपन्यासों में स्पष्ट है। 'भैरवी' में राजेश्वरी की माँ अपनी लड़कियों को मिशन स्कूल में पढ़ाने के पक्ष में नहीं है, तब ही तो तेरे बाबूजी से मैंने कहा था, 'लड़की को ईसाइयों के स्कूल में भेज रहे हो, वहाँ तो ऊँची-नीची सभी जातियों की लड़कियाँ एक साथ बैठकर पढ़ती हैं। क्या हमारे ऊँचे खानदान की बेटियाँ ऐसे ऐरे-गैरे घरों की लड़कियों के साथ बैठकर पढ़ती हैं।' उनके इस पूर्वग्रह में बाबूजी का यह तर्क 'ईश्वर के यहाँ तो सब एक ही हैं' दबकर रह जाता है। जहाँ साथ पढ़ने में ऐसी वर्जना है, वहाँ जाति से इतर विवाह-संबंध तो कल्पना से भी परे होंगे।

राजनीतिक कदाचार शिवानी के अधिकतर उपन्यासों में ध्यान खींचता है और वितृष्णा जगाता है। कभी जनसाधारण में गांधी टोपीधारी

नेता के प्रति यह सर्वसम्मत धारणा थी—'यह टोपी जिसके सिर पर भी सधती, वह उसकी श्रद्धा का पात्र हो ही नहीं सकता था।' 'सुरंगमा' में एक समझदार पिता ने बेटी को समझाया है—'किसी भी बड़े प्रतिष्ठित होनहार राजनीतिज्ञ की भी किसी क्षण हो गई अकाल मृत्यु का एकमात्र कारण होता है, उसके चरित्र का दुर्बल पक्ष'। प्रौढ़ावस्था के मंत्री दिनकर इस सत्य को न समझकर अपवाद के शिकार और अपनी पत्नी के रोष का कारण बनते हैं। दिनकर ने 'नीतिशतक' के एक श्लोक की जो व्याख्या की है, वह उसके और उस जैसे राजनेताओं पर सर्वथा सटीक है, 'सत्य वक्ता भी हूँ, झूठा भी, कठोर वचन भी बोलता हूँ और मधुर भाषी भी हूँ, हिंस्र भी हूँ, दयालु भी'''वेश्या की भाँति मेरी नृपनीति के भी अनेक रूप हैं।' ऐसे बहुरूपियों के हाथों जनतंत्र का वर्तमान और भविष्य है।

'चल खुसरो घर आपने' में इस वर्ग का चरित्र और खुलकर सामने आया है। अपने भाइयों के विषय में राजकमल सिंह ने कुमुद को सावधान करते हुए कहा है, 'हैं तो दोनों विधायक किंतु आई एम एशेम्ड टु से परले सिरे के लंपट, विलासी, अविवेकी, नारीलोलुप गुंडों का ही जमघट वहाँ नित्य जमा रहता है। दिन-रात यहाँ डाकुओं की मेजबानी निभाई जाती है। भिंड, मुरैना के दस्युदलों का विश्रामगृह ही समझिए इसे।' एक बाँह को खो चुका कृष्ण कमल सिंह मरियम के साथ बलात्कार करता है, जो मरियम को आत्मघात के लिए बाध्य करता है। ये सभी संदर्भ लेखिका के कथासंसार को सीमित या समाज निरपेक्ष न सिद्ध करने के लिए पर्याप्त हैं। इनसे 'कृष्णकली' के पांडेजी का यह कथन निरर्थक लगता है कि 'प्रजातंत्र अब शासक वर्ग के लिए सजा तंत्र होकर रह गया है।' वस्तुत: जन चेतना के उभार और प्रतिरोध की मानसिकता से कुलीन वर्ग, अफसरशाही और राजनीतिज्ञ सहमे हुए हैं, इसलिए उन्हें लगता है कि इस निराले प्रजातंत्र में न्यूसेंस वैल्यू बढ़ गई है।

इन विसंगतियों को पढ़ते हुए क्या डॉ. रामचंद तिवारी के इस मंतव्य पर विश्वास किया जा सकता है—"शिवानी की सबसे बड़ी कमजोरी यह है कि वे अपने उपन्यासों में आधुनिक जीवन के खुरदुरे, जटिल, चुनौती भरे यथार्थ को महत्त्व नहीं देती हैं। इसलिए लोकप्रियता के बावजूद प्रथम श्रेणी की लेखिकाओं में उन्हें स्थान नहीं मिल सका?" स्वयं शिवानी ने डॉ. विजयानंद के साथ संवाद में लेखन के समाज से जुड़ने और सोद्देश्य होने की अपेक्षा की है, "हम लोगों को जनमानस की मानसिकता से संबद्ध होकर प्रेरणाप्रद साहित्य की सर्जना करनी होगी। दिशाहीन साहित्य का आज के युग में कोई महत्त्व नहीं है।" उनके अधिकतर उपन्यास न तो दिशाहीन हैं, न जनमानस से कटे हुए हैं। चाहे समय की प्रामाणिकता की दृष्टि से देखें या अनुभूति की प्रामाणिकता को निकष बनाएँ, उनके चर्चित उपन्यास पाठकों को आश्वस्त करते हैं। लेकिन कुछ आलोचकों के लिए उनकी पाठकों में लोकप्रियता अपराध जैसी थी। क्षमा शर्मा का यह कथन उचित है कि 'एक लेखक को अपने जीवन में यदि प्रशंसा मिलती है तो आलोचना का भी सामना करना पड़ता है। निंदक उन बातों की भी पड़ताल करने लगते हैं, जो लेखक या लेखिका का मंतव्य नहीं होता।' (हिंदुस्तान, १५ अक्तूबर, २०२३, पृ. ११)।

यद्यपि सभी उपन्यास स्त्री-केंद्रित हैं, लेकिन उनका कथ्य वैविध्यपूर्ण है। कोढ़ग्रस्त नारी पार्वती, अध्यापिका राजेश्वरी, पिता की मृत्यु के बाद परिवार का बोझ ढो रही कुमुद, माँ की मृत्यु और पिता के पलायन के बाद अकेली अनेक समस्याओं से जूझती सुरंगमा, संन्यासिनी माया दीदी, देह व्यवसाय में अभिशप्त पन्ना, वाणी आदि, तस्करी जैसे अपराध में बेटी का इस्तेमाल करती लोरीन, सब पर अपना ममत्व बिखेरने वाली डॉ. रोजी—ये सब नारीत्व की अलग-अलग छवियाँ हैं। पर्वतीय अंचल में भूख, अभाव, जातिभेद, ऊँच-नीच, शोषण के दंश झेलती स्त्रियों के बीच से कुछ पढ़ी-लिखी, अपने पैरों पर खड़ी जुझारू और जागरूक युवतियाँ निकल रही हैं। उनके सौंदर्य, प्रेम, स्वावलंबन, संघर्ष की प्रीतिकर, मार्मिक स्थितियाँ, मन:स्थितियाँ विशेषत: ध्यान आकर्षित करती है। उनमें सर्वोपरि है कृष्णकली, जो अपने कोढ़ी पिता, कोढ़ी माँ के विषय में जानकर घर छोड़ देती है। चोरी, तस्करी जैसे पड़ावों से गुजरकर मॉडलिंग की दुनिया तक पहुँचती है। उसका अप सामान्य आचरण, दुस्साहस—ये सब अतीत को भुला देने के निमित्त हैं। डुबकी लेने की क्रिया के माध्यम से वह सभी परिचितों से एकदम असंपृक्त और अलग हो जाना चाहती है? उसका आत्म-विश्लेषण है कि अब वह न तो किसी को अपना पता देगी, न चिट्ठी लिखेगी। श्रीलंका के नए परिवेश में गहरी डुबकी लेकर ऐसी छुप जाएगी कि कोई उसे पा न सके। यह चौथी डुबकी होगी उसके जीवन की, 'ऐसी ही पहली डुबकी दी थी, स्वयं उसकी जन्मदायिनी जननी ने, जब उसका नन्हा गला घोंटकर उसे एक अनजानी गोदी में पटक दिया था। दूसरी डुबकी खिलाई थी नियति ने, जब पीली कोठी, बड़ी माँ, वाणी मौसी और काका तुआ का पिंजरा सब हाथ हिलाकर एक साथ किसी धुँधले परदे के पीछे छिप गए थे। तीसरी डुबकी उसने स्वयं ली थी, इस महानगरी में, जहाँ न फिर अम्माँ उसे ढूँढ़ पाई थी, न रोजी आंटी। पर इस डुबकी को किसी पेशेवर गोताखोर के चातुर्य से ही लेना होगा। उसकी सारी चातुरी धरी रह जाती है। नियति उसे इलाहाबाद पहुँचा देती है, कैंसरग्रस्त काया के साथ।

कृष्णकली ही नहीं पन्ना, कुमुद, चंदन, राजेश्वरी, सुरंगमा सबकी नियति 'पलायन' है। अलग-अलग कारणों से वे पुरुष-शासित व्यवस्था की रूढ़ियों, जकड़नों और वर्जनाओं से मुक्त होने के लिए कभी घर से तो कभी अपने आपसे दूर जाना चाहती हैं। प्राय: उनकी परिणति त्रासद और कारुणिक है। छल, दु:ख, विछोह, अवसाद और कभी-कभी मृत्यु भी उनके हिस्से में आती है। कुल मिलाकर 'अबला जीवन हाय तुम्हारी यही कहानी' की ध्वनि है, इनकी जीवनगाथा में। ऐसा नहीं है कि ये जूझती नहीं हैं, भरसक संघर्ष करती हैं, लेकिन अंतत: हार जाती हैं। जिन स्थितियों और मन:स्थितियों से वे गुजरती और टकराती हैं, उनकी बुनावट में शिवानी ने भाषा और कहन की क्षमता का अच्छा परिचय दिया है। 'भैखी' में राजेश्वरी अलमोड़ा में अपने अतीत से बार-बार गुत्थमगुत्था होती है। कभी उसे लगता है कि 'स्मृतियों के प्रेत-कंकाल उसे घेरकर मंडलाकार नृत्य में घूमने लगे हैं', तो कभी 'कंठ में अटक गईं कुनैन की गोलियों की ही भाँति' स्मृतियाँ उसके मुँह का स्वाद कड़वा कर जाती हैं। वह

अपनी लड़की से अपने पूर्वराग और पलायन को ओझल रखना चाहती है। उसकी कल्पित आशंका को लेखिका ने कुछ इस तरह प्रस्तुत किया है, किंतु पग-पग पर चोट खाया राजेश्वरी का दुर्बल चित्त, पागलखाने में बिजली के झटकों से सहमाए गए किसी रोगमुक्त रोगी के चित्त की भाँति सामान्य निर्मूल आशंका से ही त्रस्त हो उठता था।

कृष्णकली के व्यक्तित्व को शिवानी ने बहुत मनोयोग से रचा है। प्रवीर उसके लिए बार-बार स्मरण करने लगता था—तन्वंगी गजगामिनी चपल दृक् संगीत शिल्पान्विता। उसे तमाम अवगुणों के बाद उसका सौंदर्य 'दिव्य' लगा। उसका 'दुरूह गोरखधंधे सा व्यक्तित्व' प्रारंभ में समझ से परे लगा था, बाद में वह उसके वास्तविक सौंदर्य को पहचान पाया। कृष्णकली, पन्ना, प्रवीर आदि के अनुभावों, हाव-भावों, कथनों की अभिव्यक्ति में शिवानी अर्थग्रहण के साथ बिंबग्रहण कराने के प्रति सचेष्ट हैं। 'कमनीय कपोलों की मदमस्त मलय-कस्तूरी की पिचकारी', 'उसका कंठस्वर ट्रांसमीटर फेल हो गए रेडियो के विलीन स्वर की भाँति', 'तीव्र पहाड़ी नाले के वेग में बहे जा रहे कठोर शिलाखंड-सा' जैसे अवतरण एक ही पृष्ठ पर देखे जा सकते हैं। सूक्ष्म-से-सूक्ष्म अनुभूति लेखिका की दृष्टि से अछूती नहीं है। कृष्णकली स्तनपान कराने वाली पन्ना और विवियन की आंटी की नीली आँखों के अंतर को अनायास पढ़ लेती है—'एक दृष्टि थी नीले आकाश सी ही उदार और दूसरी में थी चित्रांकित आकाश की-सी ही नीलाभशून्यता। एक ने उसकी अभिशप्त नन्ही देह को ठोकर लगाने पर दया की भीख देकर गोदी में लिया था, दूसरी ने अनजान होने पर भी बिना कुछ पूछे ही अपनी उदार बाँहें फैला दी थीं।' किसी गुलशन नंदा या कुशवाहा कांत से ऐसे सूक्ष्म विश्लेषण की उम्मीद नहीं की जा सकती है। बड़े कहे जाने वाले लेखकों-लेखिकाओं में भी ऐसे स्थल कम होंगे। कृष्णकली का नामकरण रवींद्रनाथ ठाकुर की कविता 'कृष्णकली आमी तारेई बोली' के आधार पर हुआ है और समापन संस्कृत श्लोक 'एकाग्र प्रयतो भूत्वा'···से। इस उपन्यास के सातवें सजिल्द संस्करण की भूमिका 'श्रेय मेरी लेखनी को नहीं' में शिवानी ने कृष्णकली नामक चरित्र से पाठकों के 'एकत्व' की चर्चा की है, जब उसका दु:ख और अपमान पाठकों को वेदनाविह्वल कर जाते हैं। केवल कृष्णकली ही नहीं, चौदह फेरे, भैरवी, सुरंगमा, रति-विलाप आदि उपन्यासों के केंद्रस्थ चरित्रों को भी पाठकों का भरपूर स्नेह और एकत्व मिला है। फुटपाथी या लुगदी लेखन के लिए संवेदनशील पाठकों का ऐसा सम्मान अर्जित कर पाना संभव नहीं है। इतना अवश्य है कि शिवानी के उपन्यासों में यात्रा संवेदना की है और उनका गंतव्य भी संवेदना का शिखर ही है। इसलिए भी वे पाठकीय संवेदना को स्पर्श करने और उसे समृद्ध बनाने में सफल रही हैं। अपने समय से असंपृक्त कोई रचनाकार पाठकों में गहरी पैठ बनाने में इतना सफल और सक्षम नहीं हो सकता है।

सा.अ.
डी-१३१, रमेश विहार, अलीगढ़-२०२००१
दूरभाष : ९८३७००४११३

कविता

भारतवासी

• शरद नारायण खरे

भारतवासी माटी पूजें, तुमको बात बताता हूँ।
बहती है गंगा-यमुना, मैं गीत वहाँ के गाता हूँ॥
पर्वतराज हिमालय जिसके हर संकट को हरता है।
तीन ओर का सागर, जिसकी चरण-वंदना करता है॥
भारतवासी परम वीर हर, नित्य शहादत वरता है।
गगन तिरंगा फहराता है, हर विपदा को हरता है॥

बच्चो जानो, भारत माँ को, जिसका कण-कण सुंदर है।
शस्य श्यामला मातृभूमि है, पर्वत-नदियाँ अंदर है॥
ताल-तलैया, मैदानों की, आभा बहुत लुभाती है।
मेरे बच्चो! दुर्ग-महल में, इतिहासों की थाती है॥
खुशियों के मेले लगते हैं, हर्ष निरंतर झरता है।
गगन तिरंगा फहराता है, हर विपदा को हरता है॥

लक्ष्मीबाई, वीर शिवा से, दमकी नित्य जवानी है।
महाराणा ने चेतक के सँग, रच दी नवल कहानी है॥

दीवाली, होली की आभा, ईद खुशी को लाती है।
भारत को बच्चो जानो तुम, जिसकी हवा सुहाती है॥
रहे सुरक्षित नित्य धरोहर, 'शरद' कामना करता है।
गगन तिरंगा फहराता है, हर विपदा को हरता है॥

पूरब-पश्चिम-उत्तर-दक्षिण, सभी ओर हरियाली है।
हर मुखड़े पर हर्ष दिख रहा, सभी ओर खुशहाली है॥
बच्चो! जानो मातृभूमि को, जो हम सबकी माता है।
भारत माता की जय बोलो, तो मस्तक उठ जाता है॥
धरती है जन्नत के जैसी, हर कोई नित तरता है।
गगन तिरंगा फहराता है, हर विपदा को हरता है॥

सा.अ.
शासकीय जेएमसी महिला महाविद्यालय
मंडला-४८१६६१ (म.प्र.)
दूरभाष : ९४२५४८४३८२

जंगल वाली लड़की

● **बद्री प्रसाद वर्मा 'अनजान'**

बहुत समय पहले की बात है, एक लड़की जंगल में घास काटने गई, मगर लौटने पर वह घर जाने का रास्ता भूलकर जंगल में इधर-उधर भटकने लगी।

तभी उसकी मुलाकात एक भालू से हो गई, भालू उसके पास आकर उसका पैर चाटने लगा, मानो कह रहा हो—मैं तुमसे दोस्ती करना चाहता हूँ और अपने पास रखना चाहता हूँ।

भालू लड़की का हाथ पकड़कर अपने साथ गुफानुमा घर में ले गया। वहाँ उसने लड़की को जंगल के फल खाने को दिया।

लड़की भालू द्वारा दिए फल खाकर गुफा में सो गई। अगले दिन जब लड़की जाने लगी तो भालू ने उसका हाथ पकड़कर कहा, "तुम हमारे पास रहो, कहीं मत जाओ।" ऐसा कहकर फिर भालू लड़की का पाँव चाटने लगा, मानो कह रहा हो—तुम कहीं मत जाओ, हमारे साथ रहो। लड़की भालू के साथ रहने लगी।

भालू के साथ रहते-रहते लड़की को कई साल गुजर गए। लड़की जब भी घर जाने की इच्छा भालू को बताती, तब भालू उसे साथ छोड़कर न जाने की विनती करने लगता।

अब रोज भालू लड़की को साथ लेकर जंगल घुमाने ले जाता और दूसरे जानवरों से मिलवाता। धीरे-धीरे जंगल के सारे जानवरों से लड़की की जान-पहचान हो गई। सब लड़की को अपना दोस्त मानने लगे।

एक रोज लड़की भालू के साथ नदी के तट पर पानी पीने गई तो उसकी मुलाकात उसके पिता से हो गई, जो नदी में नाव से मछलियाँ पकड़ रहे थे।

पिताजी को देखकर लड़की बोली, "पिताजी, आपने हमें पहचाना नहीं, मैं आपकी बेटी रूपा हूँ। बहुत साल पहले जंगल में घास काटने आई थी। रास्ता भटक जाने से मैं जंगल में भटकती रही, तभी हमें यह भालू मिल गया और मेरा हाथ पकड़कर अपनी गुफा में ले गया और अपने साथ रखने लगा।"

रूपा की बात सुनकर उसके पिताजी बोल उठे, "तुम रूपा बेटी हो, तुम कितनी बड़ी हो गई हो, मैं तो तुम्हें पहचान भी नहीं पाया, मगर तुमने मुझे पहचान लिया, हमें तो विश्वास हो गया था कि तुम्हें जंगल के हिंसक जानवरों ने मार खाया होगा। तुम्हारी माँ को भी विश्वास हो गया था कि तुम जिंदा नहीं होगी। आज तुम्हें पाकर मैं तो खुशी से गद्‌गद हो गया हूँ। आज तुम्हें तुम्हारी माँ, भाई, बहन देखेंगे तो कितना खुश होंगे। गाँव वाले भी तुम्हें जिंदा देखकर आश्चर्य में पड़ जाएँगे।" इतना कहकर रूपा के पिता ने उसको गले लगा लिया।

सुपरिचित बाल-साहित्यकार। देश और विदेश की बाल-पत्रिकाओं में रचनाएँ प्रकाशित। विदेशी रेडियो के हिंदी प्रसारणों पर रचनाएँ प्रचारित। कई पुरस्कार प्राप्त।

रूपा ने भालू को सारी बात बताकर अपने घर जाने की इच्छा बताई तो भालू ने सिर हिलाकर रूपा को उसके घर जाने की इजाजत दे दी।

रूपा अपने पिता के साथ नाव में बैठ गई और भालू से हाथ हिला-हिलाकर विदा लेने लगी। भालू भी अपना हाथ उठाकर रूपा को प्यार से विदाई दे रहा था और कह रहा था कि तुम हमसे मिलने आती रहना। रूपा 'हाँ' में सर हिलाकर भालू की आँखों से ओझल हो गई।

रूपा जब घर पहुँची तो उसकी माँ, भाई, बहन उसको जिंदा देखकर भगवान् को लाख-लाख धन्यवाद देने लगे। रूपा के जंगल से जिंदा आने की खबर सारे गाँव में आग की तरह फैल गई। गाँव वालों की भीड़ रूपा को देखने के लिए आने लगी।

रूपा के जिंदा होकर जंगल से आने की खबर टी.वी., रेडियो, अखबारों में आने लगी। रूपा का इंटरव्यू भी पत्रकार लेकर टी.वी., रेडियो, अखबारों में देने लगे।

वर्षों से माता-पिता के चेहरे पर छाई उदासी पल भर में खुशी में बदल गई। सारे देश में रूपा 'जंगल वाली लड़की' के नाम से मशहूर हो गई।

साअ
गल्ला मंडी, गोला बाजार
गोरखपर-२७३४०८ (उ.प्र.)
दूरभाष : ९८३८९११८३६

नंदू रंगलाल की होली, चिंतन के रंगीन रंगताल में

● आलोक सक्सेना

होली आते ही नंदू रंगलाल के साथ मैं भी अपने साथी व्यंग्यकारों और नंदू के रंगीन रंगताल में डूब जाता हूँ। मैं किसी भी होली पर पछतावा नहीं होने देना चाहता। मेरे हिंदी शब्दकोश में तमाम सारे होली के शब्द व मुहावरे हैं, लेकिन 'चिड़िया चुग गई खेत' वाला मुहावरा मैंने अपने हृदयपटल से हटा दिया है। 'जंगल में मोर नाचा किसने देखा' मुहावरे से भी मैं बहुत दूर का वास्ता रखता हूँ। मैं जंगल में मोर को नाचता हुआ इसलिए नहीं देख पाता हूँ, क्योंकि मैं जंगल की ओर न कभी सुबह-सुबह पानी भरा लोटा लेकर गया और न कभी दिन में शिकारी बंदूक लेकर। अब इस बार होली पर जंगल में कोई मोर नाचे या कोई सरदार अपने सांभा से पूछे, "अरे ओ सांभा, होली कब है ? कब है होली ?"

चिंतन के रंगीन रंगताल में डूबा मैं अपने वरिष्ठ व्यंग्यकार श्रीमान हरिशंकर परसाईजी से मिला तो वे बोले, "आदमी को समझने के लिए सामने से नहीं, कोण से देखना चाहिए। आदमी कोण से ही समझ में आता है।" हमने उन्हें बताया, "सर, विश्वभर की भयाभय स्थिति को मद्देनजर रखते हुए मुझे जनवरी २०२४ से लेकर अब तक भयानक सपने आ रहे हैं। सपने में अपने भारतीय जाँबाज सुखोई फाइटर योद्धा दिखाई देते हैं। मुझे अपने भारतीय वायु योद्धा अपने स्क्वाड्रन से निकल फाइटर प्लेन के थ्रोटल और स्टिक थामे अंडरकैरिज लीवर की सँभाल करते हुए हमेशा युद्ध करते नजर आते हैं।" हर फाइटर पायलट योद्धा अपनी माँ की आँख का तारा होता है। उसकी माँ ही उसे भारतीय फौज में भेजकर यानी सम्मान से कहा जा सकता है, "माँ ने रंग दिया बसंती चोला। अपने देश और देशवासियों को सुरक्षित रखने की खातिर फौज में भेज दिया अपना प्यारा दुलारा।" हकीकत में देखा जाए तो भारत के किसी-किसी क्षेत्र में रोजाना ही दुश्मनों से लड़ते हैं हमारे फाइटर योद्धा, तब अपना देश और हमसब देशवासी सुरक्षित हैं। वरना··· भारत में भी सबकुछ रंग में भंग होता नजर आ रहा है। इस बार तो एडजस्ट करके ही होली मनानी पड़ रही है।

वह बोले, "एडजस्ट करना कोई नई बात नहीं। सदियों से एडजस्ट किया जा रहा है, भई। किसी भी आदमी के लिए एडजस्टमेंट पर सबसे

सुपरिचित साहित्यकार। प्रयोगधर्मी व्यंग्यकार के रूप में ख्याति प्राप्त। अनेक वर्षों से हिंदी भाषा एवं व्यंग्य साहित्य के संरक्षण एवं संवर्धन में प्रयासरत।

अच्छी खबर तो यह होती है, जब कोई उसे खबर दे कि अमुक आदमी तुम्हारी बीवी को भगा ले गया है तो वह धीरे से कह देता है, 'ले जाने दो।' हम तो एडजस्ट करके चलते हैं।"

आदरणीय परसाईजी से मिलकर मैंने अपने चिंतन के रंगीन रंगताल में होली के रंगों से भरी पिस्तौल पिचकारी भर दूसरी डुबकी लगाई और बाहर निकला तो मेरे हृदयपटल पर श्रीमान शरद जोशीजी उभरे। वह बोले, "प्यारे, खबरें हर किस्म की हैं और वे हर दिशा से आती हैं। दूसरों को तंग करने, उसे नष्ट करने का एक दर्शन देश में विकसित हो गया है। हर व्यक्ति के पास पिस्तौल नहीं है सौभाग्य से, मगर उसका दिमाग धीरे-धीरे पिस्तौल हो रहा है। वह लगा भले ही न पाए, मगर एक निशाना हर एक के दिमाग में है।"

मैंने तुरंत अपनी रंगों से भरी पिस्तौल पिचकारी छिपाते हुए कहा, "जी, आप ठीक कह रहे हैं।" वह मुझसे उम्र में काफी बड़े न होते तो धो देता, मगर होली का त्योहार होने पर भी मैं उन्हें धो नहीं पाया। चुप होकर मैंने अपने चिंतन के तीसरे रंगताल में डुबकी लगाई तो पाया कि मेरे सामने श्रीलाल शुक्लजी खड़े हुए मुसकरा रहे थे। उनके व्यंग्य शब्दबाण मुझे तार-तार कर गए। उन्होंने मुझसे कहा, "प्रयोगधर्मी सक्सेना साहब, जो खुद कम खाता है, दूसरों को ज्यादा खिलाता है; खुद कम बोलता है, दूसरों को ज्यादा बोलने देता है; वही कम बेवकूफ बनता है, दूसरों को ज्यादा बेवकूफ बनाता है।"

"साहब, हमारे जमाने में तो कर्ज लेना अच्छा नहीं माना जाता था। होली पर हुरियारे यदि चादर फाड़ होली खेलें तो भी पैबंद लगा काम

चलाया जाता था। वैसे भी उस जमाने में मान्यता थी कि जितनी चादर हो, उतना ही पैर फैलाना चाहिए। आजकल उलटा हो गया है। खूब पैर फैलाओ चादर छोटी पड़े तो बैंक से लोन लेकर अपनी चादर दूसरों से बड़ी और बड़ी कर लो। होली पर हुरियारे फाड़ दें तो रंगताल में तुरंत फेंक दो। आजकल अब सबकुछ कर्ज लेकर बेहतर बनाया जा सकता है। स्टेटस नहीं हो तो भी स्टैंडर्ड का रंग तो जमा ही सकते हो। घर छोटा हो, मगर गाड़ी बड़ी होनी चाहिए। हर बात के लिए बैंक-लोन लो और ईएमआई भरो। असमय गुजर जाओ, तो पत्नी-बच्चे ईएमआई भरें। बड़ा लोन चुकाएँ। यह जमाना आ गया है।"

साहब, होली समझदारों को रंग में डुबो कर उत्साहित करने का त्योहार है। हम किसी को बेवकूफ बनाने की बातों पर विश्वास नहीं करते। हाँ, होली आते ही हम अपनी अक्ल को चारागाह से निकाल होली की स्थिति और रंगों के टारगेट पर चिंतन शुरू कर देते हैं। हमारी प्रिय बनी पत्नी महोदया रसोई गृह में होली के तमाम व्यंजन बनाती हैं और हम अपने लेखन की डेस्क के सामने बैठकर होली के तमाम सारे रंगीन हास्य-व्यंग्य। इस बार हम होली के अवसर पर अपने हसीन चिंतन के रंगीन रंगताल में कागज-कलम लिये हुए नए-नए व्यंग्य लिखने की जुगत में लगे ही हुए थे कि निद्रा देवी ने हमें घेर लिया।

निद्रा देवी की गोद में हमें इतना आनंद मिला कि हमें सपने आने शुरू हो गए। हमने देखा, "होली रंगों के झटकों और लोगों को रंग लगा कीचड़ की नाद में पटकने का त्योहार है, लेकिन इस बार इसका वोल्टेज रंगीन झटकों के भय से अति प्रभावित है। ओमिक्रोन के बाद कोरोना का नया स्ट्रेन 'बीएफ-७' आया और अब मुआँ नया स्ट्रेन 'जेएन-१' दस्तक दे गया। फिर दे मारो पिचकारी दो गज की दूरी वाली का सबक दे गया। ऐसे में नंदू रंगलालजी की नई-नई शादी हुई थी। पत्नी ने सुहागरात के दिन ही अपना पलंग उनके पलंग से दो गज दूर सरका लिया और बोली, "पहले सैनिटाइजर से शरीर धोकर आओ और मास्क भी लेकर आओ।" होली-२०२४ आ गई, मगर जुकाम होते ही और छींक आते ही कोरोना का भय न गया। सैनिटाइजर याद आ ही जाता है। इसलिए होली खेलने से तौबा करने का विचार है, साहब।

नंदू रंगलालजी कहने लगे, "अरे प्रिया, मेल-मिलाप के लिए तो हम पहले भी फीमेल नहीं, इ-मेल से काम चला लेते थे। सात फेरे लेकर पत्नी बन आई हो, ऊपर से सौंदर्यवान हो, अब भीतर न सिमटो, तनिक स्त्री रंग-अंग तो दिखाओ, इतना न सताओ। अभी तो झटपट अंग लग जाओ। अंग-अंग मल जाओ। होली है तन रंग जाओ, मन रंग जाओ और जोगीरा सारारारा···जोगीरा सारारारा···गाओ। मेरी जानेमन मेरी प्रिया, वैक्सीन की डबल डोज के साथ तीसरी डोज भी लगवा रखी है तो काहे का डर···आओ मल-मल रंग लगाते हैं।" फिर भी जब वह नहीं मानी तो नंदू रंगलालजी मन-ही-मन गाने लगे, 'कर न अब और बेकरार, खोल के तन-मन द्वार, मना ले अपनी सुहागरात आज की रात। फिर होगी होली-रंग की रंगीन बरसात।'

नंदू रंगलालजी के साथ व्यंग्यकार भी बैठा रहा अपने नव जोश भरे रंगीन चिंतन का लिए रंगीन रंगताल··· । फिर सब भूलभाल होली की धुन में सब मिल गा उठे, "होली का आया रे त्योहार। जोगीरा सारारारा···रे, जोगीरा सारारारा···रे।"

सा अ

जेडी-१८-ई/सी, तृतीय मंजिल (नारायणी सदन)
खिड़की एक्सटेंशन, मालवीय नगर
नई दिल्ली-११००१७
दूरभाष : ९८१८५१०४८४

पाठकों से निवेदन

- जिन पाठकों की वार्षिक सदस्यता समाप्त हो रही है, कृपया वे सदस्यता का नवीनीकरण समय से करवा लें। साथ ही अपने मित्रों, संबंधियों को भी सदस्यता ग्रहण करने के लिए प्रेरित करने की कृपा करें।
- सदस्यता के नवीनीकरण अथवा पत्राचार के समय कृपया अपने सदस्यता क्रमांक का उल्लेख अवश्य करें।
- सदस्यता शुल्क यदि मनीऑर्डर द्वारा भेजें तो कृपया इसकी सूचना अलग से पत्र द्वारा अपनी सदस्यता संख्या का उल्लेख करते हुए दें।
- चैक **साहित्य अमृत** के नाम से भेजे जा सकते हैं।
- ऑन लाइन बैंकिंग के माध्यम से बैंक ऑफ इंडिया के एकाउंट नं. 600120110001052 IFSC–BKID 0006001 में **साहित्य अमृत** के नाम से शुल्क जमा कर फोन अथवा पत्र द्वारा सूचित अवश्य करें।
- आपको अगर **साहित्य अमृत** का अंक प्राप्त न हो रहा हो तो कृपया अपने पोस्ट ऑफिस में पोस्टमैन या पोस्टमास्टर से लिखित निवेदन करें। ऐसा करने पर कई पाठकों को पत्रिका समय पर प्राप्त होने लगी है।
- सदस्यता संबंधी किसी भी शिकायत के लिए कृपया फोन नं. 011-23257555, 8448612269 अथवा sahityaamritindia@gmail.com पर इ-मेल करें।

कहानी

गोपनीय मिशन

● सुरेश बाबू मिश्रा

होली के त्योहार में अब केवल तीन दिन शेष रह गए थे। रंजना की अपनी ससुराल में यह पहली होली थी। पिछले वर्ष ही उसकी शादी हुई थी।

उसके पति विक्रम सिंह भारतीय सेना में सेकेंड लेफ्टीनेंट थे और उनकी तैनाती कश्मीर में पाकिस्तानी बॉर्डर पर थी। विक्रम होली पर घर आ रहे थे। रंजना ने अपनी ससुराल में होली मनाने की काफी प्लानिंग की थी। उसकी ननद भी अपने मायके आई हुई थी। इस बार घर पर धूम-धाम से होली मनाने की तैयारियाँ चल रही थीं। सबको विक्रम के आने का इंतजार था।

रंजना अतीत की यादों में खो गई। बरबस उसकी आँखों के सामने वह घटना घूमने लगी, जब वह विक्रम से पहली बार मिली थी। रंजना के पापा सरकारी अधिकारी थे। रंजना उनकी बड़ी बेटी थी। उनका छोटा बेटा आईएएस की तैयारी कर रहा था और उससे छोटी बेटी बीटेक कर रही थी। रंजना पोस्ट ग्रैजुएशन कर चुकी थी, इसलिए उसके पिताजी उसकी शादी के लिए बहुत चिंतित थे।

उसकी शादी के सिलसिले में ही आज विक्रम और उसका परिवार रंजना के घर उसे देखने के लिए आ रहा था। घर में उत्सव जैसा माहौल था। पापा, मम्मी, छोटा भाई और छोटी बहन, सभी मेहमानों के स्वागत की तैयारी में लगे हुए थे।

तभी एक गाड़ी हमारे घर के दरवाजे पर आकर रुकी। मेहमान आ गए थे। पापा सबको आदरपूर्वक ड्राइंग रूम में लेकर आए।

मैं ऊपर कमरे में बैठी हुई थी। मेरा दिल बुरी तरह धड़क रहा था। मेरे कान ड्राइंग रूम में हो रही बातचीत की ओर लगे हुए थे। तभी माँ की आवाज आई—'रंजना, मेहमानों के लिए चाय-नाश्ता लेकर आओ।' मैंने और मेरी छोटी बहिन ने मिलकर चाय बनाई। मैं और मेरी छोटी बहिन ड्राइंग रूम में चाय-नाश्ता लेकर पहुँचीं। माँ ने हम दोनों का परिचय सभी से कराया।

सबकी नजर मेरी ओर उठ गई। मैंने उड़ती-उड़ती एक नजर विक्रम पर डाली और फिर अपनी नजरें नीची कर लीं। विक्रम ने भी मेरी तरफ देखा। चाय-नाश्ते के साथ सभी लोग आपस में बातचीत भी कर रहे थे। इसी बीच विक्रम की माँ ने मेरी माँ के कान में फुसफुसाकर कुछ कहा। माँ मुसकराई और मेरी ओर देखते हुए बोली, 'रंजना जाओ, विक्रम को अपना स्टडी रूम तो दिखा दो।'

मैं उठकर चल दी। विक्रम भी मेरे साथ चल दिए। मेरी छोटी बहिन भी चलने लगी, मगर माँ ने इशारे से उसे रोक दिया।

मैं और विक्रम स्टडी रूम में पहुँच गए। हम दोनों के बीच में औपचारिक बातचीत शुरू हो गई। अब मैंने विक्रम को ध्यान से देखा,

सुपरिचित लेखक। विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में रचनाएँ प्रकाशित। आकाशवाणी तथा दूरदर्शन से कहानी, वार्त्ता एवं नाटक प्रसारित। कथा श्री सम्मान, नीरज वाला स्मृति सम्मान, पांचाल साहित्य शिरोमणि सम्मान सहित कई सम्मान प्राप्त। संप्रति प्रधानाचार्य के पद से सेवा-निवृत्त।

लंबा छरहरा बदन, स्ट्रांग मसल्स, उन्नत ललाट और गोरा रंग। कुल मिलाकर वह बेहद हैंडसम था। यही है मेरे सपनों का राजकुमार, रंजना ने मन-ही-मन सोचा।

वह इस बात से बेखबर थी कि विक्रम एकटक उसी की ओर देखे जा रहा था। रंजना को चुप देखकर विक्रम ने पूछा, 'कहाँ खो गईं?'

'नहीं ऐसी कोई बात नहीं है।' रंजना झेंपते हुए बोली।

'एक बात कहूँ आपसे!' विक्रम ने रंजना की ओर देखते हुए कहा।

'हाँ-हाँ, कहिए।' रंजना बोली, 'आप बहुत सुंदर हैं।" उसकी बात सुनकर रंजना का चेहरा शर्म से लाल हो उठा। उसने अपनी नजरें नीची कर लीं।

कुछ देर तक विक्रम रंजना की ओर एकटक देखता रहा, फिर उसने पूछा, 'क्या आप मेरा दूसरा प्यार बनना स्वीकार करोगी?'

यह अजीब सा प्रश्न सुनकर रंजना अचकचा गई, फिर उसने विक्रम की ओर देखते हुए पूछा, 'मैं कुछ समझी नहीं। आप क्या कहना चाहते हैं?'

'देखिए रंजनाजी, मैं एक फौजी हूँ। हर फौजी का पहला प्यार उसकी मातृभूमि होती है। तो इस तरह आप मेरा दूसरा प्यार हुईं न।' विक्रम ने बड़े भोलेपन से कहा।

उसकी बात सुनकर रंजना मुसकरा उठी। वह बोली, "हाँ, मैं आपका दूसरा प्यार बनने को तैयार हूँ।"

यह सुनकर विक्रम का चेहरा किसी फूल की तरह खिल उठा। वह बोला, 'आप केवल सुंदर ही नहीं, बेहद समझदार भी हैं। मुझे ऐसा ही जीवनसाथी चाहिए। मेरी ओर से इस रिश्ते के लिए हाँ है।'

'और मेरी ओर से भी हाँ।' रंजना मुसकराते हुए बोली।

फिर दोनों नीचे उतर आए। विक्रम की माँ उसे एक ओर ले गई और उसके कान में कुछ पूछा, विक्रम ने स्वीकृति में सिर हिला दिया। उसकी माँ का चेहरा खुशी से दमक उठा। उन्होंने पति की ओर देखकर कुछ इशारा किया।

विक्रम के पिताजी ने रंजना के पिताजी से कहा, 'भाई साहब, मुझे यह रिश्ता मंजूर है।'

यह सुनते ही सब खुश हो गए और इस प्रकार रंजना शादी के बाद विक्रम के घर आ गई।

रंजना अपनी ससुराल में बहुत खुश थी। प्यार करने वाला पति उसकी कल्पना से भी अधिक सुंदर बँगला, बेटी की तरह चाहने वाले सास-ससुर और बड़ी बहिन जैसी ननद, और क्या चाहिए एक लड़की को।

शादी के कुछ दिन बाद ही विक्रम की छुट्टियाँ खत्म हो गई थीं और वह अपनी ड्यूटी पर चला गया था। उसके जाने के बाद कुछ दिन तक तो रंजना को घर बहुत सूना-सूना लगा था, मगर शीघ्र ही उसने अपने आपको घर के कामों में व्यस्त कर लिया था।

लगभग सात-आठ महीने बाद विक्रम होली पर घर लौट रहा था। इसलिए रंजना का मन खुशी से फूला नहीं समा रहा था। वह इन्हीं विचारों में खोई हुई थी, तभी उसकी ननद उसके कमरे में आ गई। "यह क्या भाभी, अभी से भइया की यादों में खोई हुई हो।" वे रंजना को छेड़ते हुए बोली।

"ऐसी कोई बात नहीं है, दीदी।" रंजना नजरें नीची करते हुए बोली, मगर उसकी आँखें कुछ चुगली कर रही थीं।

वे दोनों बातचीत कर रही थीं, तभी रंजना के मोबाइल की घंटी बज उठी। "लगता है भइया का फोन है, आप बात करो, मैं अभी आती हूँ।" यह कहकर उसकी ननद मुसकराते हुए बाहर चली गई। रंजना ने फोन अटैंड किया। फोन उसकी माँ का था। माँ काफी देर तक फोन पर उससे बात करती रही। उसके बाद रंजना ने विक्रम को फोन किया, मगर विक्रम का फोन लगातार नॉट रिचेबल आ रहा था। उसने सोचा कि शायद ट्रेन में सिगनल नहीं आ रहे होंगे, इसलिए फोन नहीं लग रहा है।

विक्रम की ट्रेन ग्यारह बजे आने वाली थी। इसलिए घर के सब लोग जाग रहे थे। सब लोग सेंट्रल हॉल में बैठकर टी.वी. देख रहे थे। जब साढ़े ग्यारह बजे तक विक्रम नहीं आया तो सबको चिंता होने लगी। विक्रम का फोन लगातार आउट ऑफ नेटवर्क कवरेज एरिया बता रहा था।

रंजना के पास विक्रम के ड्राइवर का मोबाइल नंबर था। अपनी सासु माँ से पूछकर रंजना ने उसे फोन लगाया, कुछ देर ट्राई करने के बाद उसका फोन लग गया। रंजना ने उससे कहा कि मैं लेफ्टीनेंट विक्रमजी की पत्नी रंजना बोल रही हूँ। आपने विक्रम साहब को सुबह ट्रेन में बैठा दिया था। वे अभी तक घर आए नहीं पहुँचे हैं, इसलिए हम लोगों को चिंता हो रही है।"

"मैडम, साहब तो आज घर गए ही नहीं। वे तो एक गोपनीय ऑपरेशन पर हैं। एक खाली बिल्डिंग में कुछ आतंकवादी छिपे हुए हैं। साहब के नेतृत्व में सेना की एक टुकड़ी ने बिल्डिंग को चारों ओर से घेर रखा है। दोनों ओर से रुक-रुककर फायरिंग हो रही है। अब यह ऑपरेशन कब तक चले, कुछ कहा नहीं जा सकता है, मैडम।" यह कहकर उसने फोन काट दिया था।

जब रंजना ने यह बात सबको बताई तो सब लोग घबरा उठे।

विक्रम के पापा सबको समझाते हुए बोले, "घबराओ नहीं, जो कुछ होगा, अच्छा ही होगा। रात काफी हो गई, इसलिए सब लोग अपने कमरे में जाकर सो जाओ। अब सुबह तय करेंगे कि हमें इन परिस्थितियों में क्या करना चाहिए।"

सभी लोग अपने-अपने कमरे में चले गए। रंजना बेड पर आकर लेट गई। वह सोने का प्रयास करने लगी, मगर नींद उसकी आँखों से कोसों दूर थी। उसे रह-रहकर विक्रम की याद सता रही थी। उसने कई बार विक्रम और उसके ड्राइवर को फोन किया, मगर दोनों का मोबाइल स्विच ऑफ आ रहा था। तरह-तरह के खयाल उसके मन में आ रहे थे। सुबह पाँच बजे के बाद उसकी आँख लग गई।

सुबह किसी के दरवाजा खटखटाने की आवाज सुनकर उसकी आँख खुली। उसने उठकर दरवाजा खोला। सामने उसकी ननद खड़ी थी।

"उनका कोई फोन आया, दीदी?" रंजना ने पूछा।

"नहीं, अभी तक तो कोई फोन नहीं आया। हम सबने भी फोन किया, मगर विक्रम का मोबाइल लगातार स्विच ऑफ आ रहा है। ऐसा करो, फ्रेश होकर नीचे आ जाओ। हम लोग नाश्ते पर तुम्हारा इंतजार कर रहे हैं।" उसकी ननद बोलीं।

फ्रेश होने के बाद रंजना नीचे पहुँची। उसकी ननद ने टेबल पर सबके लिए नाश्ता लगा दिया था। सब लोग नाश्ता शुरू करने ही वाले थे कि डोर बेल बज उठी। "इतनी सुबह कौन हो सकता है?" उसकी सासु ने कहा।

उसकी ननद दरवाजा खोलने चली गई। उसने जैसे ही गेट खोला, सामने विक्रम को देखकर आश्चर्य से बहिन चिल्लाई—"मम्मी, भइया!"

सब लोग उठकर खड़े हो गए। तब तक विक्रम अंदर आ चुका था। रंजना का चेहरा किसी फूल की तरह खिल उठा था। विक्रम की माँ ने उसे बाँहों में भर लिया।

उसके पापाजी ने पूछा, "विक्रम, तुम इतनी सुबह कैसे आ गए?"

पापाजी! ऑपरेशन चार बजे तक चला। ऑपरेशन में पाँच आतंकी मारे गए और बाकी चार गिरफ्तार कर लिए गए। मेरी टुकड़ी के चार सैनिक भी गंभीर रूप से घायल हुए। एक गोली मेरे कंधे को छूती हुई निकल गई।

मुझे मिलिट्री हॉस्पिटल ले जाया गया। मेरा जख्म ज्यादा गहरा नहीं था, इसलिए छह बजे मेरी छुट्टी कर दी गई। जब मैंने अपने लेफ्टिनेंट साहब को बताया कि सर! शादी के बाद मेरी पहली होली है, तो उन्होंने दिल्ली तक मुझे मिलिट्री के हैलीकॉप्टर से छुड़वा दिया। तीन घंटे में मैं दिल्ली आ गया और फिर दिल्ली से टैक्सी द्वारा घर।

सबके चेहरे खुशी से चमक उठे थे। रंजना लगातार विक्रम को देखे जा रही थी। उसकी आँखों में विक्रम के लिए गहरा प्यार उमड़ रहा था। विक्रम भी उसी की ओर देख रहा था। वे दोनों इस बात से बेखबर थे कि सब उन दोनों की ओर देखकर मुसकरा रहे हैं और आँखों ही आँखों में एक-दूसरे को इशारा कर रहे हैं।

ए-९७९, राजेंद्र नगर
बरेली-२४३१२२, (उ.प्र.)
दूरभाष : ९४११४२२७३५

प्रकृति-संरक्षण में साहित्य की भूमिका

● भावना शेखर

आए दिन हम कोई-न-कोई विश्व दिवस मनाते हैं। विश्व पर्यावरण दिवस, विश्व जल दिवस, विश्व वानिकी दिवस, विश्व आर्द्रभूमि दिवस, विश्व पृथ्वी दिवस, विश्व गौरैया दिवस, आदिवासी दिवस, विश्व बाघ दिवस, विश्व स्वास्थ्य दिवस आदि-आदि। ये सारे दिवस प्रत्यक्ष रूप से प्रकृति और प्रकृति-संरक्षण से जुड़े हैं।

वन यानी हमारे ऑक्सीजन चैंबर, जिनका सीधा संबंध हमारी सेहत से है, पर अफसोस की बात है कि ये ऑक्सीजन चैंबर खाली होते जा रहे हैं। यही स्थिति जल की है। माना गया है कि पृथ्वी पर कुल जल का ९७.३ प्रतिशत खारा जल है। केवल २.०७ प्रतिशत ही पीने योग्य शुद्ध जल है। जो अनियंत्रित पानी की खपत के चलते तेजी से सतह के नीचे जा रहा है।

जल और जंगल खतरे में होना वैश्विक चिंता का विषय है। इसी के मद्देनजर 'पहला अंतरराष्ट्रीय जल दिवस' १९९३ में और 'पहला वानिकी दिवस' २०१३ में मनाया गया। यह विशेष दिवस कोई समारोह नहीं है, ये चिंता करने के दिवस हैं, ऐसी चिंता, जिस पर गंभीर चिंतन होना चाहिए।

आँकड़े बताते हैं कि पृथ्वी पर कुल भूमिक्षेत्र का लगभग ३० प्रतिशत जंगल है। भूटान की ६० प्रतिशत भूमि पर जंगल है, जबकि भारत की केवल २४ प्रतिशत भूमि पर जंगल है। पिछले कुछ दशकों में जल और जंगल का प्रतिशत तेजी से गिरा है। इसके कारणों की फेहरिस्त में बढ़ती आबादी, बढ़ता विकास और मानव का बढ़ता लालच सबसे ऊपर हैं। यह मानव मात्र के लिए एक गंभीर चेतावनी है। सर से पानी ऊपर हो जाए, इससे पहले हमें सोचना है कि इसका उपाय क्या है। मुझ कलमकार की दृष्टि में उपाय एक ही है, मुड़ो प्रकृति की ओर।

मनुष्य के लिए प्रकृति ईश्वर का अन्यतम उपहार है, जिससे वह हवा, पानी, अन्न, ईंधन, औषधि सबकुछ प्राप्त करता है। हमारी सनातन संस्कृति ने सिखाया है कि प्रकृति और मनुष्य के बीच माता और पुत्र के समान अन्योन्याश्रय संबंध है, दोनों एक-दूसरे के पूरक हैं। जब भी हमें ठोकर लगती है अनायास मुख से निकलता है—ओह माँ!

आसन्न नाजुक स्थिति में भी प्रकृति ही हमारी तारणहार है, जिसने हमेशा अपने शिशु की तरह मानव का पोषण किया। मानव का दायित्व है, प्रकृति रूपी माता की रक्षा। माता शिशु की पहली गुरु होती है।

सुपरिचित लेखिका। अब तक आस्तिक दर्शनों में प्रतिपादित मीमांसा सिद्धांत, सत्तावन पँखुड़ियाँ, साँझ का नीला किवाड़, मौन का महाशंख, जुगनी, खुली छतरी, जीतो सबका मन, मिलकर रहना एवं अनेक कविताओं का जापानी भाषा में अनुवाद। 'मधुबन संबोधन पुरस्कार', 'साहित्य-सेवी एवं शताब्दी पुरस्कार'। संप्रति ए.एन. कॉलेज पटना में अध्यापन।

प्रकृति ने इस भूमिका का भी बखूबी निर्वाह किया है। हमारे लिए प्रकृति से अच्छा कोई गुरु नहीं। आज तक हमने जो कुछ हासिल किया, वह सब प्रकृति से सीखकर ही किया है। न्यूटन जैसे महान् वैज्ञानिकों को गुरुत्वाकर्षण समेत कई पाठ प्रकृति ने सिखाए। जीवन जीने की कला से लेकर जीवन दर्शन की समझ प्रकृति के सान्निध्य में रहकर ही विकसित होती है। साहित्यकारों के लिए प्रकृति उनके सृजन की आधारभूमि है। इतना ही नहीं, कवियों ने प्रकृति को लेकर एक से बढ़कर एक कविताएँ लिखीं।

कबीर से लेकर तुलसीदास, रवींद्रनाथ टैगोर से लेकर महादेवी वर्मा तक सबने प्रकृति के माध्यम से जीवन की सीख दी है। यदि साहित्य के इतिहास को खँगालें तो सबसे पहले हमारे वेदों में प्रकृति की स्तुतियाँ हैं। ऋग्वेद के १०२८ सूक्तों में प्रकृति को ही ईश्वर मानकर पर्यावरण-संतुलन का निर्देश दिया गया है। जीवन के सुचारु यापन के लिए तत्त्वदर्शी ऋषियों ने पंचभूतों की बात की है। उन्होंने पृथ्वी, जल, वायु, तेज, आकाश के प्रति असीम श्रद्धा प्रकट की है। ऋषि-मुनियों ने पृथ्वी का आधार ही जल और जंगल को माना है। वेदों में कहा गया है—

"वृक्षाद् वर्षन्ति पर्जन्य: पर्जन्यादन्न सम्भव:", अर्थात् वृक्षों से बादल···बादलों के जल···जल से अन्न···अन्न से जीवन है। यदि जीवन को बचाना है तो वृक्षों को बचाना होगा।

मत्स्य पुराण में एक वृक्ष को सौ पुत्रों के समान बताया गया है। इसी कारण हमारे यहाँ वृक्ष पूजने की परंपरा रही है। पुराणों में कहा गया है कि जो मनुष्य नए वृक्ष लगाता है, वह स्वर्ग में उतने ही वर्षों तक फलता-फूलता है, जितने वर्षों तक उसके लगाए वृक्ष फलते-फूलते हैं। पर्यावरण संरक्षण को महत्त्व देते हुए तुलसीदास लिखते हैं—

रीझि-खीझि गुरुदेव सिष सखा सुविहित साधू।
तोरिडदम न व्यक्ति खाहु फल होई भलु तरु काटे अपराधू॥

अर्थात् वृक्ष से फल खाना तो उचित है, लेकिन वृक्ष को काटना अपराध है।

भगवान् रामचंद्र के राज्याभिषेक की तैयारी के अवसर पर गुरु वसिष्ठ ने "सफल रसाल पूगफल केरा। रोपहु बीथिन्ह पुर चहुँ फेरा॥" कहकर अयोध्या नगरी में सभी जगह सुमन वाटिकाएँ, लताएँ लगाए जाने का निर्देश दिया। वनवास काल में भी सीताजी एवं लक्ष्मण ने वृक्षारोपण किया—

"तुलसी तरुवर विविध सुहाए।
कहुँ कहुँ सियँ कहुँ लखन लगाए॥"

रामचरित मानस के सुंदरकांड में लंका के प्राकृतिक सौंदर्य का मोहक वर्णन मिलता है। इन सब उद्धरणों से स्पष्ट होता है कि तुलसीदास ने पर्यावरण-संरक्षण के साथ मानव के अटूट संबंध को दरशाया है।

महाभारत काल में भी मनीषियों ने प्रकृति की महिमा का गान किया है। भगवान् श्रीकृष्ण का बाल्यकाल प्रकृति की गोद में बीता। उन्होंने तो पग-पग पर पर्यावरण संरक्षण के संकेत दिए। गीता कहती है कि मानव का अस्तित्व पर्यावरण पर निर्भर करता है। उसकी रक्षा करनी चाहिए।

साहित्य का प्रभाव है कि आम आदमी प्रकृति के तमाम गुणों को समझकर अपने जीवन में सकारात्मक बदलाव लाता है। प्रकृति हमें कई महत्त्वपूर्ण पाठ पढ़ाती है, जैसे पतझड़ का मतलब पेड़ का अंत नहीं है। इस संदेश को जिस व्यक्ति ने जीवन में आत्मसात् किया, उसे असफलता से कभी डर नहीं लगा। इसी तरह फलों से लदे मगर नीचे की ओर झुके पेड़ हमें सफलता और प्रसिद्धि मिलने या संपन्न होने के बावजूद विनम्र और शालीन बने रहना सिखाते हैं। प्रकृति की सबसे बड़ी खासियत यह है कि वह अपनी चीजों का उपभोग स्वयं नहीं करती, जैसे— नदी अपना जल स्वयं नहीं पीती, पेड़ अपने फल खुद नहीं खाते, फूल अपनी खुशबू पूरे वातावरण में फैला देते हैं। आशय यह है कि प्रकृति किसी के साथ भेदभाव या पक्षपात नहीं करती। यह बात मनुष्य को निष्पक्ष होने का सबक देती है।

साहित्य का प्रभाव है कि आम आदमी प्रकृति के तमाम गुणों को समझकर अपने जीवन में सकारात्मक बदलाव लाता है। प्रकृति हमें कई महत्त्वपूर्ण पाठ पढ़ाती है, जैसे पतझड़ का मतलब पेड़ का अंत नहीं है। इस संदेश को जिस व्यक्ति ने जीवन में आत्मसात् किया, उसे असफलता से कभी डर नहीं लगा। इसी तरह फलों से लदे मगर नीचे की ओर झुके पेड़ हमें सफलता और प्रसिद्धि मिलने या संपन्न होने के बावजूद विनम्र और शालीन बने रहना सिखाते हैं। प्रकृति की सबसे बड़ी खासियत यह है कि वह अपनी चीजों का उपभोग स्वयं नहीं करती, जैसे—नदी अपना जल स्वयं नहीं पीती, पेड़ अपने फल खुद नहीं खाते, फूल अपनी खुशबू पूरे वातावरण में फैला देते हैं। आशय यह है कि प्रकृति किसी के साथ भेदभाव या पक्षपात नहीं करती। यह बात मनुष्य को निष्पक्ष होने का सबक देती है।

उपन्यासकार प्रेमचंद के मुताबिक साहित्य में आदर्शवाद का वही स्थान है, जो जीवन में प्रकृति का है। सबसे महत्त्वपूर्ण बात यह कि प्रकृति में हर किसी का अपना महत्त्व है। छोटे से छोटा कीट-पतंग भी प्रकृति के लिए उपयोगी है।

साहित्यकारों का प्रकृति के प्रति अनुराग स्तुत्य है। काका कालेलकर का विलक्षण सौंदर्य-बोध अचंभित करता है। उन्हें कीचड़ में भी काव्य के दर्शन होते हैं (कीचड़ का काव्य)। शस्य श्यामला धरती की उदारता से अभिभूत हो सुमित्रानंदन पंत कह उठते हैं, "आ: धरती कितना देती है।" बाबा नागार्जुन वात्सल्य के वशीभूत होकर पंकलिप्त शूकरी को 'मादरे हिंद की बेटी' की संज्ञा दे बैठते हैं। अज्ञेय अपनी प्रेयसी के सौंदर्य के लिए चाँद-सितारे या फूलों के बरक्स बाजरे की कलगी का उपमान चुनते हैं (कलगी बाजरे की), 'नदी के द्वीप' जैसी कविता रचते हैं। केदारनाथ अग्रवाल को भी नदी से प्यार है (मुझे नदी से प्यार है), अपने गाँव से लौटते हुए वे खेतों के सौंदर्य में खो जाते हैं (चंद्रगहना से लौटती बेर)। नागार्जुन अकाल की विभीषिका के बाद खुशहाल प्रकृति के उत्सव की बात कुछ इस तरह करते हैं—

दाने आए घर के अंदर कई दिनों के बाद,
कौए ने खुजलाई पाँखें कई दिनों के बाद

(अकाल और उसके बाद)

'कामायनी' संभवत: पहली रचना है, जिसमें प्रकृति और पर्यावरण में असंतुलन की समस्या पर विचार किया गया है। इस अनुपम कृति में प्रसाद ने प्रकृति के रम्य और विकराल दोनों रूपों का वर्णन किया है। प्रसाद कहते हैं, देवताओं की अकर्मण्यता और प्रकृति के असंतुलित दोहन के कारण देव-सभ्यता नष्ट हो गई। देवताओं की लालची प्रवृत्ति से क्षुब्ध होकर प्रकृति ने विकराल रूप धारण किया, जिससे जलप्लावन हुआ और देव-सभ्यता नष्ट हो गई। मनु भीगे नयनों से इस जल प्रलय को देख रहे हैं—

हिमगिरी के उत्तुंग शिखर पर बैठ शिला की छाँह,
एक पुरुष भीगे नैनों से देख रहा था प्रलय प्रवाह।

जयशंकर प्रसाद लिखते हैं—

प्रकृति रही दुर्जेय, पराजित, हम सब थे भूले मद में
भोले थे, हाँ तिरते केवल सब विलासिता के नद में।

प्रकृति का औदार्य अपरिमित है, लेकिन जब मनुष्य उससे अनावश्यक खिलवाड़ करता है, तब वह आक्रोशित हो उठती है। सूखा, बाढ़, सैलाब, तूफान के रूप में रोष व्यक्त करते हुए मनुष्य को सचेत करती है। प्रकृति के पास ध्वंस के बाद पुनर्निर्माण की व्यवस्था भी है। अपने भीतर हुई टूट-फूट और नुकसान की भरपाई वह स्वयं करती है, एक प्रकार की सेल्फ हीलिंग की ताकत है, बशर्ते कि उसमें पुन: उसके घावों को कुरेदा न जाए। मनुष्य का अनधिकार हस्तक्षेप बार-बार के ध्वंस का कारण बनता है। प्रकृति के साथ तालमेल हो तो वह हमारे सुख-दु:ख की साथी है। हमें बंधन से मुक्ति की ओर अग्रसर करने वाली प्रेरक शक्ति है। फिर चाहे वह सांसारिक मुक्ति हो या आध्यात्मिक।

१९३० के दौर में भारत औपनिवेशिक गुलामी के बंधन में छटपटा रहा था। माखनलाल चतुर्वेदी ने प्रकृति को साधन बनाकर प्रसिद्ध कविता

लिखी—'कैदी और कोकिला'। कविता में कोकिला के बंधनहीन उन्मुक्त जीवन से स्वतंत्रता सेनानियों की दारुण दशा की तुलना की गई है, जो अंग्रेजों द्वारा काला पानी की भयावह सजा भोग रहे थे। कवि द्वारा दरशाई गई प्रकृति की उन्मुक्तता, बंधनहीनता, आत्मीयता घनघोर निराशा झेल रहे कैदियों में उम्मीद जगाती है, ऊर्जा का संचार करती है। सुमित्रानंदन पंत, गोपाल सिंह नेपाली, महादेवी वर्मा की अनेक रचनाओं का प्रतिपाद्य प्रकृति है।

प्रकृति-संरक्षण में बाल-काव्य की भी महती भूमिका है। कवियों ने कहानी, कविता, बालगीतों के माध्यम से विभिन्न रूपों में अपने प्रकृति प्रेम का परिचय दिया है। धरती, आकाश, वायु, समुद्र, पर्वत, सूरज चाँद सितारे, वृक्ष, लता, ऋतु, जीव-जंतु आदि का वर्णन करके रचनाकारों ने प्रकृति का चारु चित्रण किया है, जो पर्यावरण के प्रति उनकी निष्ठा का प्रमाण है।

धरती से अंतरिक्ष तक कब्जा कर लेने, चाँद को अगला टूरिस्ट स्पॉट बना देने, दिल माँगे मोर जैसी प्रवृत्तियाँ भोगवादी संस्कृति की उपज हैं। ये मानव और मानवीयता के लिए खतरनाक हैं। साहित्य ऐसे लोगों को सदा से प्रकृति-प्रेम और उसकी रक्षा के लिए प्रेरित करता है। साहित्य की तमाम विधाओं में लेखक पर्यावरण के प्रति अपनी चिंता दरशाते रहे हैं।

ग्रामीण लोक-संस्कृति प्रकृति की गोद में पली-बढ़ी है और इसमें मानव की भूमिका प्राकृतिक संसाधनों के संरक्षक के रूप में मानी गई है। इसमें पेड़ों की पूजा से लेकर धरती व नदियों को माँ के पवित्र संबोधन से नवाजने का संस्कार है। बिहार में छठ पर्व प्रकृति का पर्व है। शास्त्रीय साहित्य में कार्तिक मास में स्नान की महत्ता का बखान किया गया है। हमारा पुरातन साहित्य व्रत-त्योहार और लोकगीतों में प्रकृति का ही गुणगान करता है, प्रकृति की रक्षा का संदेश देता है।

आधुनिक साहित्यकार भी उतनी ही शिद्दत से प्रकृति को केंद्र में रखकर लिख रहे हैं। सविता सिंह ने प्रकृति संबंधी स्त्री-कविता-शृंखला का संयोजन किया है। यह शृंखला अपनी तरह की पहली इको पोएट्री है। केदारनाथ अग्रवाल (बाघ), नरेश मेहता (नदी), चंद्रकांत देवताले, लीलाधर मंडलोई (समुद्र), रत्नेश्वर सिंह की 'एक लड़की पानी-पानी' और 'रेखना मेरी जान', काशीनाथ सिंह का 'जंगल जातकम्' इस संदर्भ में उल्लेखनीय नाम हैं। बलराम कांवट की 'मोरीला' राजस्थान की प्रकृति पर प्रकाश डालती है। उषा किरण खान बिहार के कोसी तटबंध, बाढ़ जैसी प्राकृतिक आपदाओं पर और राकेश कुमार सिंह झारखंड के जंगलों, वनस्पतियों पर लंबे समय से लिख रहे हैं।

आदिकाल से आज तक और मेरे विचार में अनंत काल तक साहित्य मनुष्य और प्रकृति के बीच सेतु का काम करता रहेगा। जब तक कलमकार जीवन, मृत्यु, प्रेम और युद्ध के बारे में अपनी भावनाओं को समझाने के लिए प्रकृति का उपयोग करते रहेंगे, तब तक प्रकृति का महत्त्व बना रहेगा। महत्त्वपूर्ण और मूल्यवान वस्तुओं को सहेजा जाता है, उनकी रक्षा की जाती है। प्रकृति की रक्षा भी होती रहेगी।

सा.अ.

सी-४३ जगत अमरावती अपार्टमेंट
बेली रोड, पटना-८००००१
दूरभाष : ८८०९९३१२१७

लघुकथा

क्या बुराई है

• डोली शाह

राहुल और समीर दो सगे भाई थे, लेकिन पिता के देहांत के बाद दोनों परिवारों में हो रही अनबन को देख अलग रहने का फैसला किए। दोनों ही अपनी दुनिया में मस्त थे।

अचानक एक दिन राहुल की पत्नी की तबीयत बिगड़ गई। अस्पताल पहुँचते-पहुँचते वह दुनिया छोड़ कर चली गई। अब राहुल बिल्कुल अकेला पड़ गया।

बेटे-बहू दोनों के दफ्तर जाने के बाद उसकी देख-रेख के लिए एक मीरा कुक रख दिया गया। वह पूरे दिन उसका खयाल रखती, जिससे राहुल को भी अपनी बात बताने के लिए एक जगह मिल गई। काम के बीच में ही दोनों थोड़ी-बहुत हँसी-मजाक भी कर लेते, जिससे दोनों के बीच एक अपनत्व की भावना जग गई। अब राहुल मीरा से कुछ भी कहने से नहीं हिचकिचाता। मीरा भी अपनी परेशानियों से भरी जिंदगी की सारी बातें उसको बताने लगी, जिससे दोनों में सहानुभूति की एक ऐसी कड़ी आई, जिससे दोनों···।

जिस तरह कहा जाता है, ऐसी बातें नहीं छुपती। एक दिन बातों-ही-बातों में समीर से व्यंग करते हुए एक सज्जन पूछ बैठे।

"···क्या बात है, भैया राहुल की क्या खबर।"

"···नहीं, बस ठीक ही है। बेचारे अकेले जिंदगी की लड़ाई लड़ रहे हैं।"

"···अरे, अकेले कैसे, अभी तो मीरा कुक के साथ···"

समीर बोला, "अरे साहब, रहने दो यार!"

"भाभी को मरे लगभग दस साल हो गए, वह अकेले ही···। बहु तो सारा दिन दफ्तर चली जाती है। वह मीरा ही है, जिसके वहाँ रहने के कारण उन्हें दो वक्त की रोटी समय पर मिल पाती है, और जिस मीरा की आप बात कर रहे हैं, वह बिल्कुल असहाय है। पति बहुत पहले ही दुनिया छोड़ चुका था और बेटा का तो कोई अता-पता ही नहीं, ऐसे में यदि दोनों साथ हैं भी तो क्या बुराई है?" सज्जन मौन हो सबकुछ सुनते रहे। फिर बोले, "शायद तुम सही कह रहे हो। उम्र के उस मोड़ पर यदि किसी का साथ मिल जाए तो जिंदगी भी आसान बन जाती है और बेसहारो को सहारा भी···।"

सा.अ.

निकट-पी.एच.ई., पोस्ट-सुल्तानी छोरा
जिला-हैलाकंदी
दूरभाष : ९३९५७२६१५८

रीत

मूल : **मधुकर धर्मापुरीकर**

अनुवाद : **शैलजा माहेश्वरी**

मराठी कथालेखक, अनुवादक, कहानीकार, व्यंग्यचित्रकला के अभ्यासक-संग्राहक। आस्वाद-विषय पर किताबें प्रकाशित। इसके अलावा ललित लेखन, उर्दू शायरी पर आस्वाद पर लेखन प्रसिद्ध। कहानियों के हिंदी, गुजराती, मल्याळम भाषा में अनुवाद। 'मालगुडी डेज' का मराठी अनुवाद प्रसिद्ध। कहानी-संग्रह को अनेक पुरस्कार प्राप्त हुए। शासन के वित्त विभाग में लेखा अधिकारी पद से सेवानिवृत्त।

बड़ी सुबह अचानक आजम की बीबी की नींद टूट गई थी; अजीब सपने से वह घबराई, उठी और पलभर यह समझ नहीं पाई कि वह कहाँ है···सपने का प्रभाव जैसे कम हुआ, सारी बात उसकी समझ में आ गई।

आजम की माँ चलबिचल करते हुए जाग गई थी। चार दुबले से बच्चे गहरी नींद सो रहे थे, जो अस्तव्यस्त और डरावने लग रहे थे। एक बच्चे की अधखुली आँखें उससे देखी नहीं गईं, उसने उठकर गुदड़ी उठाई और चारों बच्चों पर ठीक से डाल दी, वह उठी।

आजम को अपने बीबी-बच्चों को यहाँ लाए हुए महीना होने को आया। वह गया तो आजतक लौटा नहीं था। बूढ़ी माँ और विक्षिप्त बाप आजम की बीबी को खोद-खोदकर उसके बारे में पूछते, तो वह झट से कह देती—"कामां रयते उनके वहाँ! ट्रेजरी बोले तो हिसाब-किताब के कामां रयते, मामूली रहयता क्या रात-रात नै आते थे घर कू!" कहते हुए अनजाने में ही उसकी आवाज ऊँची हो जाती। वह बारीकी से सारी बातें बताने लगती, कि वहाँ मकान रखना कितना मुश्किल हो गया था, ऑफिस के काम की वजह से बच्चों की तरफ ध्यान नहीं दे पाता था, बच्चे बिगड़ने लगे थे, इसलिए बच्चों को इधर के स्कूल में शरीक किया था।

पर आजम का बाप इन बातों पर अविश्वास जतलाते हुए कहता—"अब लोग क्या नौकरी नहीं करते क्या? के इसकोच दुनिया का काम है? ऐसा कौन सा तुर्रम खाँ है ये, कि सब जिम्मेदारी इस पर है, आं? और पूछा तो बोलता भी नई!"

"और मदरसे में कब शरीक करना बच्चों को?" आजम की माँ पूछती। "बच्चे वैसेच जा रे मदरसे में।"

"वोईच कागजात—वो टीसी लाना पड़ता न, अब इनको फुर्सत मिलनाऽऽऽ फिर वो टीसी लानाऽऽऽ" आजम की बीबी का कहना बहुत देर तक चलता रहता और फिर से आजम के काम के बारे में वह कहती रहती—"जोखिम है भोत उनको, पैसे के कामां है, नौ-नौ हजार रुपिया कभी ला के मीरे हवाले करते थे! जिम्मेदारी की नौकरी बोले तोऽऽऽ"

पर आजम के बाप को उसके व्यवहार की भनक लग गई थी, "जिम्मेदारी!···की जिम्मेदारी! मटका खेलने कू टाईम मिलता, शराब की तो बू आती भड़वे की!" वह बड़बड़ाता।

आजम की बीबी आँगन में ज्वार साफ करने बैठी। उसी में अपना ध्यान लगाने लगी। घर की याद आने के लिए उसे कोई भी बहाना काफी होता, तुरंत वह घर याद आता! ऐसे में आजम का उसको प्यार करना, बच्चों को प्यार करना भी याद आने लगता, पर इन दिनों आजम घर आया ही नहीं था। जाते वक्त खर्चापानी के लिए पाँच-पच्चीस माँगते ही जेब से नोटों का बंडल निकालकर बिना गिने ही उसने दिया था। खूब सारे रुपए देखते ही आजम की बीबी का दिल बैठने लगता और इनका क्या करे, समझ में नहीं आता था। एक बार तो सौ रुपिया की चूड़ियाँ ही ले आई वह···आजम ने खूब गालियाँ दी थीं तब।

मख्दूम की खाला कब आई, इसका आजम की बीबी को पता ही नहीं चला, वह नीचे देखकर ज्वार साफ करने में लगी थी।

"आए नहीं क्या आजम मियाँ?" मख्दूम की खाला के पूछने पर उसका ध्यान गया, हर रोज उन्हीं बातों की चर्चा से ऊबने लगी थी वह।

पर आज मख्दूम की खाला एक नई खबर लाई थी। सास-बहू का अंदाज लेते हुए, चेहरे पे चिंता जताते, पर सर्तकता के साथ उसने बातचीत शुरू की—

"मख्दूम बोल रहा था, आजम मियाँ नायगाँव के बसस्टैंड पर दिखे थे।"

"किस कू ?" आजम की अम्मा ने पूछा; आजम की बीबी देखने लगी।

"वो नै क्या सुलतान, उसका दोस्त है, वो बोल रहा था···"

"गए होंगे वहाँ, उनके कामा रहयते।" तुनककर आजम की बीबी ने कहा, उसके आसपास दाने बीनकर खाने वाली बच्चेवाली मुरगी झट से दूर हो गई।

आजम की बीबी के कानों में ऐसी ही खबरें आने लगी थीं। कोई कहता, पिछले एक महीने से वह ऑफिस में गया ही नहीं। कोई कहता, उसने बड़ी छुट्टी ले रखी है। कोई कहता, उसके नाम नोटिस जारी किया गया है। कोई कुछ कहता, कोई कुछ। कल आजम का बाप खबर लाया था, "आजम ने पैसे का घपला किया बोलते, बड़ा!" उस वक्त आजम के बीबी का गुस्सा उबल पड़ा, "घपला ? घपला क्यूँ करेंगे वो ? वो क्या चोर है क्या, फूटी कौड़ी भी नहीं माँगी हमने किसी को, हम क्या शर्मिंदे है क्या किसी के ? ऊपरवाला हैच न देखने कु सबको; वो क्यूँ करेंगे घपला ? जिम्मेदारी की नौकरी है उनकी, लोगों का क्या, ऐसे जलने वाले भोत रहयते!"

आजम की बीबी का आज का नूर देखकर आजम की बातों की चर्चा बंद हो गई, पर चोरी, मारपीटी की चर्चा चलती रही। मख्दूम के एक रिश्तेदार को पीछे पुलीस ने कैसे गिरफ्तार किया था, यह चर्चा छिड़ी··· चार दिन हवालात में बंद रखा था उसे, खूब पिटाई की, बेदम मार··· आगे का दाँत टूट गया था उसका, ऐसी बातें होती रहीं। "खर्चे, पानी कु पुलिसवालों को पैसे दिए, तब छोड़ दिया था।"

मख्दूम के खाला की बातचीत आजम की बीबी सह नहीं पा रही थी। सपने की याद आते ही गुस्से में उसने ज्वार पटकी, ऊँचे स्वर में बोल पड़ी—"देखो खाला, जो बुरे काम करता, उसको डर रहयता, समझे! सीदे काम करने वालों को अल्लामियाँ देखताच, क्यों किसी को डरना ?"

आजम की अम्मा कहने लगी, "हमारा आजम वैसा नहीं···भोत सीधा है···" उस पर मख्दूम की खाला ने कहा, "नहीं, मैं थोड़ीच बोल रही हूँ ऐसा-वैसा, आजम मियाँ हम को मालूम नै क्या, बहोत शरीफ है, हमारी रुखसाना की शादी में आए थे न! अच्छेच है···"

दिन भर के काम खत्म होने लगे, आजम की बीबी ने काम में मन लगाने का प्रयास किया, लंबी पट्टी के हरे बस्ते लेकर दो बच्चे स्कूल में गए थे, दो घर में ही खेल रहे थे, बच्चों की किसी भी शिकायत पर आजम की बीबी का एक ही जवाब होता—"ठेर, अब्बा आन दे! आपन लाएँगे!" कहकर उनका मन बहलाती, अँधेरा होने लगा और आजम आया।

"अम्मीऽऽ, अब्बा आएऽऽ" बच्चे फटी आवाज में चिल्लाए और रोटी बनाते हुए आजम की बीबी जल्दी से झुककर बाहर आई, सिर का पल्लू ठीक किया, आजम की तरफ देखने लगी, उसका अपना शौहर, आँखों से ओझल रहने पर मन में पूर्ण रूप से जिसकी तसवीर उभरती है, वह शौहर···बातें करनेवाला, गालियाँ देने वाला, बच्चों को काँधे पर बिठाने वाला···अपना शौहर···!

जल्दी से उसने हाथ धोए आजम ने साथ लाई डबल रोटी, टोस्ट बच्चों के हवाले किए। वह आँगन के चबूतरे पर बैठ गया। आदतन

सुपरिचित अनुवादक। प्रताप महाविद्यालय में हिंदी भाषा की एसो. प्रोफेसर। लेखन, अनुवाद और संपादन। पी-एच.डी. मार्गदर्शक; कला-ललित कला शाखा सदस्य।

कमीज की बाहों को ऊपर सरकाया, कलाई के निचे खिसकने वाली घड़ी को पीछे किया···बैठा रहा।

आजम की अम्मा उसके पास गई। स्नेह से पीठ पर हाथ फेरकर उसने पूछा, "कब आया ?"

"ये क्या, अब्बीच।"

आजम के बीबी ने बच्चे को पैसे देकर चाय की पत्ती लाने के लिए दौड़ाया। "चाय करती मैं," कहते हुए आजम से उसने पूछा, "मटन का सालन बनाऊँ क्या अब्बी।"

आजम ने जवाब नहीं दिया। आजम की अम्मा कहने लगी, "वो मख्दूम बोल रहा था, तू दफ्तर में नहीं है बोल के···"

आजम की आवाज तेज हो गई, वह बोला, "वो भड़वे कु कौन बोला वहाँ जाने कू ?"

"नई, मैंच बोल रही थी, तू आया नहीं पंद्रह-बीस दिन हो गए, क्या हुआ, क्या नई···"

"अरे वो मख्दूम को क्या करने का, अपना धंधा-पानी सँभाले, बोलना!"

आजम की बीबी चाय लेकर बोलती हुई आई—"मैं बोल रही थी इनको, के नको भेजों, उनको कामां रहयते, दौरे रहयते···" बीबी की बात तोड़ते हुए आजम ने झट से पूछा, "और वो गलसर कहाँ है ?"

आजम की बीबी ने अपना सूना गला टटोलते हुए कहा, "इनोच बोले, वो रख दे संदूक में, चोरी-मारी का डर रहयता बोलके!"

"हाँ, मैइच बोली, क्या करने का, इतना भारी, चार तोले का···" अम्मा कहने लगी।

रात को बच्चे आजम से खेलने लगे। खोई नजर से आजम उन्हें कह रहा था, "चुप बैठो, चुप बैठो···"

आजम का बाप खाली बैठा था, इधर-उधर की बातें निकालकर आजम की अम्मा उससे बातें निकालने लगी, आजम 'हाँ-हूँ' करने लगा।

"तबीयत ठीक नै क्या रे आजम ?" माँ ने पूछा।

"तबीयत को क्या हुआ ?" तुनककर आजम ने कहा।

अचानक बिजली गई। बार-बार जाने वाली बिजली की शिकायत करते हुए आजम का बाप उठा। शीशे की चिमनी लगाई। आजम की बीबी एक तरफ बच्चों से बोल रही थी और दूसरी तरफ मन-ही-मन सोच रही थी, आजम से क्या बोले, कैसे बोले···बोल पड़ी—

"वो मख्दूम की खाला कुछ भी बोल रही थी···"

लेकिन इतने में आजम के घर के सामने से बारात जाने लगी। उसे देखने के लिए बच्चे भाग गए। वह भी बारात को देखने लगी। दिल की

धड़कन रुक जाए, इतनी कर्कश आवाज में बजता हुआ बैंड···ट्यूबलाइट की लाठियाँ लेकर जानेवाले लोग, बड़ा जमघट और फूलों में छुपा हुआ दूल्हा···रोशनी के टुकड़े घर में से गुजरने लगे···आजम, आजम का बाप, अम्मा, आजम की बीबी के शरीर पर से सरकने लगे, फिर अँधेरा होने लगा। एक-दूसरे की आवाज सुनना भी दूभर हो गया। 'रहेमान सेठ के बच्चे की शादी है···' अम्मा की आवाज किसी के कानों तक नहीं पहुँची। आजम की बीबी ने बात रोक दी थी। वह कहने वाली थी, मख्दूम के रिश्तेदार को पुलिस पकड़कर ले गई थी, बेदम पीटा था उसे।

पर बारात की वजह से उसका बोलना रुक गया। वह आजम के बाप की तरफ देखने लगी। आजम के साथ उसकी खास बातचीत न होने की वजह से शंका-आशंका को मन में दबाए वह वैसा ही बैठा था, पर चेहरे पर तनाव साफ नजर आ रहा था। गुजरने वाली बारात की तरफ आजम देख रहा था। आजम की बीबी को आजम के देखने का अहसास हो रहा था···बारात जाते ही वह बोली, "वो मख्दूम की खाला···"

इतने ही में आजम ने तुनककर पूछा, "तू क्यूँ मरी थी वहाँ?" और गुस्से में आकर उस ने बीबी के मुँह पर थप्पड़ जड़ दिया। उससे बचने के प्रयास में आजम की बीबी की चूड़ी टूट गई, हाथ की प्याली गिर गई, चूड़ी के कारण उसके गाल पर निशान पड़ गया। गाल सहलाते वह बोली, "मैं नई गई थी···"

आजम की अम्मा कहने लगी, "अरे वो खाला अपने ह्यां आई थी।" आजम की बीबी ने चाय की प्याली के टुकड़े उठाए, चूड़ी के टुकड़े भी समेटे और घर के अंदर चली गई। आजम थूककर आया। बच्चे के बस्ते पर पड़ी कॉपी हाथ में लेकर बैठा।

रात में आजम की गाली-गलौज सुनाई आने लगी। बाहर सोया हुआ आजम का बाप जाग गया। उसके पास सोई आजम की बच्ची आवाज से डर गई। आजम की माँ भी उठ बैठी। आजम बीबी को पीट रहा था। चूड़ियों की आवाज, खटपट सुनाई आने लगी। आजम गालियाँ देते हुए पीट रहा था।

"मत मार बोलना भड़वे कू!" आजम के बाप ने बूढ़ी से कहा। माँ उठी। बंद किवाड़ के पास खड़ी रही। आजम की बीबी आजम से कुछ कह रही थी, आजम उसे पीट रहा था, मार खाकर भी आजम की बीबी का न रोना माँ की समझ में आ गया। वह वापिस अपने बिस्तर पर आकर लेट गई।

इस अंक के चित्रकार

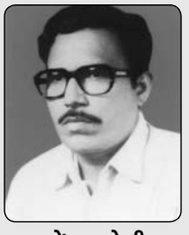

राजेंद्र परदेसी

राजेंद्र परदेसी सुपरिचित लेखक एवं चित्रकार हैं। इनके रेखांकन विभिन्न लघु पत्रिकाओं में लगातार प्रकाशित हो रहे हैं। इनके रेखांकनों में भारतीय कला-परंपरा और यूरोप की आधुनिक कला-दृष्टि का खूबसूरत समावेश दिखाई पड़ता है।

संपर्क : ४४ शिव विहार, फरीदी नगर
लखनऊ-२२६०१५ (उ.प्र.)
दूरभाष : ९४१५०४५५८४

सुबह होते ही आजम का बाप बाहर चला गया। आजम कमरे से बाहर निकला, कुल्ला किया, आजम की बीबी ने चाय लाकर उसके सामने रख दी।

गरदन झुकाकर आजम चाय पीने लगा। उसकी बीबी ने उसे टोस्ट देते हुए पूछा, "जा रे क्या ड्यूटी कू?"

आजम ने कोई जवाब नहीं दिया। पल भर वह आजम की तरफ देखती रही; फिर तुरंत अंदर चली गई, बाहर आई। आजम चप्पलें पहनकर जाने के लिए निकला था।

"जा तूँ···" रूखे स्वर में उसने कहा और जाने लगा।

आजम की बीबी आगे आई, "ये देखो," उसने आवाज दी, आजम मुड़ा।

"ये गलसर रखते क्या? मुझे क्या करने का···रखो, तुमको खर्चेपानी को काम आएगा, नहीं तो यहाँ जोखिमीच है न!"

···कहते हुए आजम की बीबी को धीरज आने लगा, आवाज समझ आने लगी।

स.अ.
१०, सुनंदा पार्क, धुलिया रोड
अमलनेर-४२५४०१ (महा.)
दूरभाष : ९४२२२८११०९

सुधी पाठकों, लेखकों एवं विज्ञापनदाताओं को
'साहित्य अमृत' परिवार की ओर से
रंगों के पर्व होली
की हार्दिक शुभकामनाएँ!

इंडोनेशिया की यात्रा

• शेफालिका सिन्हा

नई जगहों को देखना और घूमना किसे अच्छा नहीं लगता। नई जगहों को देखने से जानकारी भी बढ़ती है। मैंने खुद भूगोल पढ़ा और पढ़ाई के दौरान कॉलेज से शॉर्ट और लांग ट्रिप पर गई थी। हम बहुत बारीकी से मौसम, पेड़-पौधे, वहाँ की मिट्टी-बालू को देखते, क्योंकि देखी गई जगहों के बारे में रिपोर्ट तैयार करनी होती और उससे संबंधित प्रैक्टिकल परीक्षा में सवाल पूछे जाते। यह सही ही कहा जाता है, जितना ज्ञान घूमकर, देखकर पा सकते हैं, उतना किताबों से नहीं। विद्यालय में पढ़ाने के दौरान भी बच्चों को विभिन्न देशों की भौगोलिक विशेषताएँ, विभिन्न प्रकार की कृषि प्रणाली, जंगल, खनिज, तरह-तरह के खदानों के बारे पढ़ाती तो लगता कि काश उन्हें घुमाकर दिखाया जाता। अब तो स्कूलों में स्मार्ट बोर्ड लगे हैं, पढ़ने-पढ़ाने का ढंग बदला है। फिर भी आभासी दर्शन और प्रत्यक्ष दर्शन में बहुत अंतर होता है। इसलिए व्यक्ति को जब मौका मिले, बाहर घूमने निकले, अपने बाल-बच्चों को नई जगहों को दिखाए। ये जगहें घर के आसपास हो सकती हैं या देश के अंदर या देश के बाहर, सभी कुछ न कुछ सिखाते हैं, नई दृष्टि देते हैं।

मुझको भी नई जगहों को देखना और घूमना पसंद है। पति की नौकरी बैंक में थी, जहाँ हर तीन वर्ष पर घूमने की सुविधा थी। लेकिन घर परिवार, बच्चे, स्कूल के कारण हमेशा तो नहीं निकल पाई। मन में इच्छा रही कि देश के बाहर घूम लूँ। पति के रिटायरमेंट के समय एक मौका मिला तो हमने इंडोनेशिया की सैर की। एक कारण यह भी था कि वहाँ जाने के लिए टूरिस्ट वीजा आसानी से मिल जाता है।

इंडोनेशिया पाँच प्रमुख द्वीप समूह एवं कई छोटे-छोटे द्वीप समूह से बना दक्षिण-पूर्वी एशिया का प्रमुख देश है। यह देश अपनी प्राकृतिक सुंदरता से सैलानियों को अपनी ओर आकर्षित करता रहा है। इस यात्रा में हमने जावा द्वीप में स्थित जोग जकार्ता (योग्य कार्ता) और बाली द्वीप का भ्रमण किया। इन दो जगहों के दर्शनीय स्थलों की चर्चा होगी। यहाँ आने के लिए भारत से सीधी फ्लाइट नहीं है। जाते समय हम बैंकॉक होते हुए गए और वापसी क्वालालंपुर होकर हुई। फिर भी यहाँ तक की यात्रा आसान है।

बाली द्वीप

इंडोनेशिया का बाली द्वीप हमारा पहला डेस्टिनेशन था। यह

सुपरिचित लेखिका। भूगोल में एम.ए. तथा बी.एड.। लंबे समय तक अध्यापन, अब सेवानिवृत्त। 'ये बड़ी बात है' कविता संकलन और एक कहानी संकलन 'वंश बेल' तथा रचनाएँ विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित।

इंडोनेशिया का द्वीप प्रांत है, जिसके अंतर्गत बाली द्वीप और कुछ निकटवर्ती द्वीप भी सम्मिलित हैं। हम लोग दक्षिण में स्थित तटीय शहर कुटा में ठहरे। बाली के दर्शनीय स्थलों में हमने इसके प्राकृतिक सौंदर्य जैसे खूबसूरत समुद्र-तट, ज्वालामुखी, मंकी फॉरेस्ट देखा। कई मंदिरों का अवलोकन किया। इसके अलावा पहाड़ों पर धान की सीढ़ीदार खेती और कॉफी की खेती और उसकी प्रोसेसिंग भी देखी।

इंडोनेशिया वैसे तो मुसलिम बहुल देश है, पर बाली हिंदू बहुसंख्यक प्रांत है। यहाँ की लगभग ८५ प्रतिशत आबादी बालानी हिंदू धर्म मानती है। इसलिए हमने यहाँ स्थित बहुत सारे मंदिरों को देखा। हर एक मंदिर की बनावट, पत्थर पर की आकृतियाँ और मूर्तियों में बहुत समानता भी देखने को मिली। हर एक मंदिर के प्रवेश द्वार पर एक खास पैटर्न है, हिंदू देवी-देवताओं की मूर्तियाँ हैं, जैसे जामवंत, विष्णु, गणेश इत्यादि। यहाँ गणेश ज्ञान, विद्या, बुद्धि के प्रमुख देवता माने जाते हैं। ग्यारहवीं शताब्दी में बना Goa Gajah, जिसे 'एलिफैंट केव' कहते हैं। गुफा के अंदर गणेश की मूर्ति है और इसके उत्तरी एवं दक्षिणी भाग में शैव और बौद्ध धर्म का दर्शन होता है। वहाँ होली वाटर टेंपल भी देखा, जहाँ झील के पवित्र जल में स्नान कर लोग पूजा (अर्पण) कर रहे थे।

एक बात है, बाली के कुछ पुराने मंदिरों को व्यवस्थित एवं साफ-सुथरा रखा गया है। वहाँ जाने के लिए टिकट लेना होता है, कमर से नीचे तक ढकने के लिए एक कपड़ा, जिसे (sarango) 'सारंगो' कहा जाता है, उसे पहन कर जाना होता है। मंदिर के प्रवेश द्वार पर ये कपड़े मिल जाते हैं, मंदिर के दर्शन करने के बाद ये कपड़े वापस करने होते हैं।

हरेक मंदिर में किचेन है, जहाँ वहाँ के स्थानीय लोग भोजन तैयार करते हैं और उनको देवता को चढ़ाया जाता है। ऐसा जान पड़ा कि वहाँ के लोग धार्मिक हैं, उनके घरों में भी मंदिर होता है।

काम या दिन शुरू करने के पहले वे एक नारियल के पत्ते से बने

दोने में उसके चारों कोनों में फूल, बीच में कुछ हरी दूब की तरह और टॉफी भोग की तरह रख, उसे अपने घर के सामने, दुकान में, अपनी गाड़ी में सजाते हैं।

मंदिर के अलावा यहाँ हमने बातुर ज्वालामुखी देखा, जो एक सक्रिय ज्वालामुखी है। इसके दो स्पष्ट मुख, जिसे कॉलडेरा कहते हैं, देखा जा सकता है। इस पर्वत के एक तरफ झील है, जिसे बातुर लेक कहते हैं। इस तरह का लैंडस्केप बिल्कुल नया था हमारे लिए। हिंद महासागर के तटीय क्षेत्र में समुद्री लहरों से कटकर बनी आकृतियाँ समुद्री क्लिफ और समुद्री आर्क भी हमने देखा, जिसके बारे में हम पढ़ते और पढ़ाते हैं। जंगलों से घिरे विभिन्न प्रकार के बंदरों की भरमार वाला एक क्षेत्र है मंकी फॉरेस्ट।

बाली में बहुत बड़े इलाके में कॉफी की खेती और पहाड़ों पर सीढ़ीदार धान के खेत भी देखने लायक हैं। कॉफी बीन्स को भूनकर कैसे कॉफी तैयार करते हैं और विश्व की सर्वोत्तम किस्म की कॉफी भी तैयार करने की प्रक्रिया का पता चला। यहाँ कॉफी और चॉकलेट की अनगिनत वेराइटी देखने को मिलीं। इसके अलावा यहाँ के कुटीर उद्योग, जिसमें सोने व चाँदी के काम, लकड़ी का काम और बाटिक प्रिंट का काम भी देखा।

बाली का रामायण का मंचन बहुत प्रसिद्ध है, इसके लिए ओपन थियेटर भी हैं। हालाँकि हम इसका आनंद नहीं ले पाए। बाली में यों तो हरेक उम्र के पर्यटक मिल जाएँगे, पर नवविवाहित जोड़ों का यह पसंदीदा डेस्टिनेशन है। बाली एक ऐसा द्वीप है, जिसकी ८५ प्रतिशत कमाई टूरिज्म से होती है, जो देश की अर्थव्यवस्था को सुदृढ़ करती है।

योग्यकार्ता या जोगजकार्ता

जावा द्वीप पर स्थित यह शहर शाही शहर के रूप में जाना जाता है। यह इंडोनेशिया का एकमात्र शहर है, जहाँ अभी भी राजतंत्र है, २० प्रतिशत शासन का अधिकार राजा के पास है। यहाँ सुल्तान के महल का कुछ भाग दर्शनार्थियों के लिए खुला रहता है। महल के एक भाग में म्यूजियम है, इससे शासक के परिवार, उनके रीति-रिवाज और तौर-तरीकों का पता चलता है। उनके रिक्रिएशन के लिए वाटर पैलेस भी है, जहाँ राजा-रानी कभी स्नान किया करते थे, अब दर्शनार्थियों के लिए खुले हैं।

योग्य कार्ता के दो स्मारक विश्वप्रसिद्ध हैं, जिसे हमने देखा, दसवीं शताब्दी का एक पुराना हिंदू मंदिर है प्रमबनन मंदिर। कहा जाता है कि यहाँ छह प्रमुख मंदिर और २१४ छोटे-छोटे मंदिर थे, पर दो-तीन भूकंप में बहुत कुछ नष्ट हो गया। फिर भी छह मंदिर अभी भी खड़े हैं। ये मंदिर पत्थर से निर्मित हैं, जिनकी नक्काशी और मूर्तियाँ दर्शनीय हैं। यहाँ शिव, विष्णु, दुर्गा, ब्रह्मा और गरुड़ आदि देवताओं के मंदिर हैं। हर एक मंदिर के द्वार पर द्वारपाल हैं। ऐसी मान्यता है कि पूरे विश्व में भारत के पुष्कर के बाद यही जगह है, जहाँ ब्रह्माजी का मंदिर है।

यहाँ बोरोबुदुर में विश्व का सबसे बड़ा बुद्ध मंदिर है। यह मंदिर गोलाकार है और इमारत सात मंजिली है। यहाँ ५१०० स्तूप हैं। इंडोनेशिया के ये दोनों स्मारक धरोहर कहे जा सकते हैं। बोरोबुदुर और प्रमबनन कला और शिक्षा के केंद्र माने जाते हैं। इसलिए शायद दोनों स्मारकों को देखने के लिए बड़ी संख्या में विद्यार्थी आए थे। ऐसा मालूम होता था, कुछ प्रोजेक्ट की तैयारी में हैं और कुछ अंग्रेजी सीखने के लिए यहाँ आते हैं, जैसा कि हमारे गाइड ने बताया। अंग्रेजी सीखने के लिए हमारे गाइड के साथ ही तीन लड़कियाँ हो लीं, जिनसे हमारी भी अच्छी दोस्ती हो गई। इंडोनेशिया की प्राथमिक भाषा (Bahasa) बहासा है, जो यहाँ की ऑफिशियल भाषा भी है।

इसके अलावा मेरापी ज्वालामुखी को देखने के लिए ऊबड़-खाबड़ रास्ते को जीप के द्वारा पार करते हुए बहुत ऊँचाई पर जाना पड़ा। २०१० में इस ज्वालामुखी से विस्फोट हुआ था। कभी आबाद रहा जंगलों से भरा यह क्षेत्र विस्फोट के बाद बरबाद हो गया। यहाँ एक छोटे से म्यूजियम में विस्फोट के कारण लोगों की चीजें, जैसे कपड़े, बरतन, टेलीविजन, घर के अवशेष देखने को मिले, जानवरों की हड्डियों के ढाँचे भी थे। परंतु मेरापी ज्वालामुखी बादल के कारण अच्छी तरह नहीं दिखा। फिर वहाँ से नीचे उतरते निचले इलाके में धान की खेती के साथ-साथ पपीता, केला, नारियल इत्यादि के बगीचे दिखे।

योग्य कार्ता इंडोनेशियाई शिक्षा का केंद्र है। यहाँ दर्जनों स्कूल और विश्वविद्यालय हैं। उच्च शिक्षा का देश का सबसे बड़ा संस्थान गदजा माडा विश्वविद्यालय यहीं पर है। यह कला और संस्कृति का भी केंद्र है। यहाँ के संगीत और कठपुतली प्रस्तुति की झलक सुल्तान के पैलेस में देखने को मिली, जहाँ कलाकार की प्रस्तुति देखने के लिए बैठने की व्यवस्था रहती है।

इंडोनेशिया की इन दो जगहों को देखकर वहाँ की प्राकृतिक सुंदरता के साथ वहाँ की संस्कृति से रूबरू होने का मौका मिला। यह भी पता चला कि सरकार पर्यटन स्थलों के विकास और पर्यटकों की सुविधा के लिए बहुत सजग है।

मैं झारखंड में रहती हूँ और जानती हूँ कि यहाँ प्राकृतिक सुंदरता, दर्शनीय स्थलों एवं मंदिरों की कमी नहीं है। यह देश का प्रमुख पर्यटन स्थल बन सकता है। हमारी सरकार इसके लिए प्रयत्नशील है। पर्यटन यहाँ के लोगों को रोजगार के अवसर भी दे सकता है और सरकार को अधिक राजस्व की भी प्राप्ति हो सकती है।

साअ

बी-२०२, उमिया वूड्स
ईसीसी रोड, डोड्सवर्थ लेआउट
बैंगलुरु-५६००६६
दूरभाष : ९९५५३४६५६६

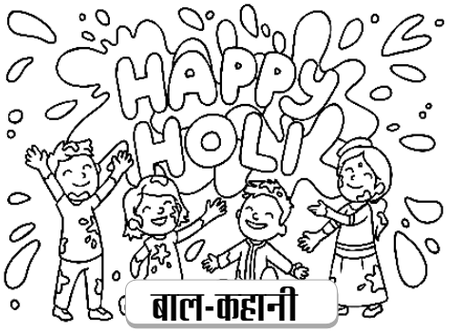

बाल-कहानी

रंग-बिरंगी होली

● मंजरी शुक्ला

"मुझे तो होली बिल्कुल भी पसंद नहीं है।" इशिता ने अपने दोस्तों से कहा। दोस्त थे—पूसी बिल्ली, शेरू कुत्ता, नानू बँदरिया और चुन्नू कबूतर। उसके दोस्त भी उसकी बात कितनी समझे या नहीं समझे, पर वे एकटक इशिता को देखे जा रहे थे। याद है, पिछली बार किसी ने शेरू के ऊपर ठंडा पानी डाल दिया था, बेचारा कितने दिनों तक डर के मारे इधर-उधर छिपता फिर रहा था। शेरू को समझ में आ गया कि उसके बारे में बात हो रही है, इसलिए वह खुशी के मारे अपनी पूँछ हिलाने लगा।

इशिता ने आगे कहा, "और पूसी तो पेड़ के नीचे चुपचाप बैठी थी, तब भी किसी शैतान बच्चे ने पूसी के ऊपर पानी भरा गुब्बारा इतनी जोर से फेंककर मारा था कि वह दर्द के मारे बिलबिला गई थी। अब बारी थी पूसी के खुश होने की। उसे इशिता पर बड़ा प्यार आया। उसे तो लगा था कि इशिता उसके गुब्बारे वाली बात भूल गई है। वह उछली और सीधे जाकर इशिता के कंधे पर कूद गई।

"और चुन्नू कबूतर तो गोलू के फ्लैट की बालकनी के कोने में कितना डरा हुआ बैठा था, तब भी कुछ शैतान बच्चों ने उसे ढूँढ़ निकाला और उसके ऊपर ठंडा रंगीन पानी डाल दिया।"

इशिता चुन्नू को दयाभाव से देखते हुए बोली, "होली तो कितनी सारी खुशियाँ लेकर आती है, पर कुछ लोगों ने इसे सिर्फ जानवरों को सताने और हुड़दंग मचाने का ही त्योहार बना डाला है।"

नानू बँदरिया इशिता के पैरों के पास उदास सी बैठ गई। पिछली होली में उसको कमरे में बंद करके लोगों ने खिड़की से इतने गुब्बारे फेंककर मारे थे कि कई दिन तक उसके पूरे शरीर में दर्द रहा था। उसे इनसानों से इतना डर लगने लगा था कि वह कई दिनों तक भूखी-प्यासी पड़ी रही, पर कूड़े के ढेर में खाना ढूँढ़ने नहीं गई।

इशिता आँसू भरी आँखों से बोली, "कितना अच्छा होता, अगर तुम सब बोल पाते और उनके साथ वैसा ही कर पाते, जैसा उन लोगों ने तुम्हारे साथ किया है। उन्हें भी तो पता चलना चाहिए कि सच्ची खुशी दूसरों को सताने में नहीं, बल्कि दूसरों का दर्द दूर करने में होती है।" पेड़ पर बैठी झिलमिल परी बहुत देर से इशिता की बातें बड़े ध्यान से सुन रही थी। उसने चमचमाते हुए सितारों से जड़ी हुई छड़ी को हवा में लहराया।

सुपरिचित बाल-साहित्यकार। अब तक बाल-साहित्य की बाईस पुस्तकें तथा देश की विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में लेख, कहानियाँ आदि प्रकाशित। अनेकानेक सम्मान एवं पुरस्कार प्राप्त। वर्तमान में विद्या भारती शिक्षा संस्कृति संस्थान कुरुक्षेत्र की अखिल भारतीय कार्यकारिणी की सदस्य एवं आकाशवाणी प्रयागराज में उद्घोषक।

रोशनी से दमकते सितारे हवा में बिखर गए और इशिता के दोस्तों के ऊपर गिर गए। उन्हें ऐसा लगा, जैसे बर्फ के नन्हे फाहों ने उन्हें छुआ हो। उन्होंने एक-दूसरे को आश्चर्य से देखा और खिलखिलाकर हँस दिए और खुशी के मारे उछलने-कूदने लगे।

इशिता को समझ में नहीं आया कि सब अचानक इतने खुश क्यों हो गए। पर उसे यह देखकर अच्छा लगा कि सब खुश हैं।

उसने शेरू की पीठ पर हाथ फेरते हुए कहा, "कल होली है और मुझे तुम सबकी बहुत चिंता हो रही है।" शेरू इशिता का प्रेम देखकर भावुक हो गया और पूँछ हिलाता हुआ इशिता का हाथ चाटने लगा।

इशिता बोली, "अब मैं घर जा रही हूँ और तुम सबका खाना मैं रात को ही ज्यादा सा रख दूँगी, क्योंकि कल होली है और तुम लोगों के बाहर निकलते ही सब लोग तुम्हें परेशान करेंगे।"

इशिता के जाते ही नानू बोली, "वे शैतान बच्चे इस समय एक साथ इकट्ठा होकर गुब्बारे भर रहे होंगे, हम चलकर उन्हें मजा चखाते हैं।"

चुन्नू बोला, "अगर मार खाने का मन हो तो चलो।"

"डरपोक कबूतर, चुपचाप हमारे साथ चलो, वरना कल फिर तुम्हारे ऊपर कोई ठंडा पानी डालेगा।"

पिछली होली के बर्फ के ठंडे पानी की याद आते ही चुन्नू चुपचाप उनके साथ चल दिया।

वे सभी मोनू के घर के सामने जा पहुँचे। गेट के बाहर ही कुछ साइकिलें खड़ी थीं। चुन्नू बोला, मैं अभी देखकर आता हूँ। ये बच्चे अब क्या शैतानी करने वाले हैं और यह कहकर चुन्नू तेजी अपने पंख

फड़फड़ाता हुआ उड़ चला। कुछ ही पलों बाद वह लौट आया और घबराते हुए बोला, "इस बार तो पिछली बार से भी ज्यादा गुब्बारे हैं।"

वे आपस में बात कर रहे हैं कि चाहे बड़ा हो या छोटा, इस बार वे किसी को भी नहीं छोड़ेंगे और कुत्तों व बिल्लियों को तो दौड़ा-दौड़ा कर गुब्बारे मारेंगे, क्योंकि जानवर तो उनकी शिकायत किसी से कर नहीं सकते।"

पूसी का डर देखकर सभी को बहुत दु:ख हुआ। शेरू ने पूसी को समझाते हुए कहा, "तुम डरो मत। हम अपने साथियों को भी आगाह कर देंगे, ताकि उन्हें कोई चोट न पहुँचे।"

शेरू की बात सुनकर पूसी का डर कुछ तो कम हुआ, पर तब भी रह-रहकर वह काँप उठती थी। "चलो, अब गेट के अंदर कूदते हैं, वरना कोई आ जाएगा।" शेरू बोला। नानू उछलकर गेट के अंदर चला गया, पूसी दीवार पर छड़ी और सीधा गेट के अंदर, शेरू ने एक ऊँची कूद लगाई और सीधा गेट के अंदर और चुन्नू उड़ता हुआ उनके पीछे चला गया। वहाँ कोई नहीं था। गेराज का दरवाजा खुला था। गेराज के अंदर सफेद रंग की कार थी और एक कोने में बहुत सारी किताबें और पुराने कपड़े पड़े हुए थे। चारों दोस्त कपड़ों के ढेर के पीछे छुपकर बैठ गए। वे जानते थे कि पिछले साल की तरह पानी के गुब्बारे और रंग गेराज में ही लाकर रखेंगे। उस रात चारों दोस्तों ने डर के मारे खाना नहीं खाया।

वे जानते थे कि इशिता उनका रास्ता देख रही होगी, पर उन्हें डर था कि अगर वे गेट से बाहर जाएँगे तो शायद वापस अंदर न आ पाएँ। इसलिए पूरी रात भूखे-प्यासे बैठे रहे।

अगली सुबह चारों तरफ से कानफोड़ू गानों की आवाज आने लगी। सड़क पर जैसे भगदड़ मची हुई थी। लोगों के चिल्लाने की आवाजें आ रही थीं। "अरे, उसे जल्दी से रंग डालो, वो बचकर भागना नहीं चाहिए।" दूसरी आवाज आई, "इस बार कोई बचना नहीं चाहिए।"

लोगों के हँसने-बोलने की भी आवाज गेट के पास से आ रही थी। पर इन चारों को तो इंतजार था मोनू और उसके दोस्तों का, और तभी गेट खुला और पाँच लड़के अंदर आ गए। उनको देखकर ही चुन्नू का दिल धड़क उठा। वे सभी ऊपर से नीचे तक रंग में सराबोर थे। पर शेरू पहचान गया कि ये वही लड़के हैं, जिन्होंने पिछले साल उन सबको बहुत सताया था। उन लड़कों ने गेट के अंदर आते ही मोनू का नाम लेकर चिल्लाना शुरू कर दिया। पल भर में ही मोनू ने बालकनी से झाँका और हँसते हुए बोला, "आ रहा हूँ।" सीढ़ियों से मोनू उतरकर आया या उड़कर आया, क्योंकि पलक झपकते ही वह उन दोस्तों के पास खड़ा था। मोनू को देखकर सभी के चेहरे खुशी से चमक उठे।

सभी खुशी के मारे चीखते-चिल्लाते हुए गेराज के अंदर चले गए। पूसी ने डर के मारे आँखें बंद कर लीं। नानू तो अपनी चोट याद करते ही रोने लगी। शेरू ने धीरे से उसकी पीठ पर अपना पंजा रख दिया। चुन्नू तो डर के मारे एक छोटे से कपड़े के अंदर घुस गया। तभी मोनू बोला, "इस बार तो हमारे पास पिछली बार से बहुत ज्यादा गुब्बारे हैं।"

लाल रंग से पुता हुआ एक लंबा सा लड़का बोला, "पिछली बार वो बड़े वाले काले कुत्ते पर गुब्बारे फेंकने के बाद तो मजा आ गया था।"

"कैसे कूँ-कूँ करता हुआ भागा था।" मोनू हँसा।

"हाहा, कैसे दुम दबाई थी न!" हरे रंग से रँगा हुआ लड़का बोला। पहली बार शेरू ने स्वयं को इतना असहाय महसूस किया। न चाहते हुए भी उसकी आँखों से आँसू टपक पड़े।

वह रुँधे गले से बोला, "मेरे भी बहुत सारे भाई-बहन थे। हम सब अपनी माँ के साथ एक नाली के नीचे रहते थे। कुछ बच्चों ने मुझे प्यार करने के लिए उठाया और उसके बाद कहीं बहुत दूर ले जाकर छोड़ दिया। कितना डरता था मैं अकेला!"

मोनू बोला, "ऐसा करते हैं, एक झोले में सिर्फ वे गुब्बारे रखते हैं, जो पशु-पक्षियों को फेंककर मारने वाले हैं।"

अब नानू से नहीं रहा गया। वह रोते हुए बोली, "क्या बिगाड़ा है हमने इनका। हमारे माँ-बाप भी हमारे साथ नहीं हैं। बेचारे तार का करंट खाकर मर गए। इन्हीं इनसानों ने हमारे जंगल काट डाले और अब उनके बच्चे हमें सताकर खुश हो रहे हैं। हम यहाँ-वहाँ छुपकर रहने के लिए कितना मजबूर हैं। हम कहाँ जाएँ? ये हमें मारकर खुश होते हैं, क्या हमें दर्द नहीं होता, क्या हमें चोट नहीं लगती?"

पुन्नू बोला, "मैं भी अपने मम्मी-पापा के साथ एक फ्लैट में रहता था, पर उन लोगों ने एक दिन नुकीले पतले तार जैसे लगा दिए। शाम को जब हम सब लौटे तो मेरे मम्मी-पापा सीधे उन तारों में बिंध गए। मैं बहुत रोया और तब से अकेले ही इधर-उधर रहने की जगह ढूँढ़ा करता हूँ।"

तुम चाहो तो अभी इन सबको जाकर काट सकते हो। जब सबको दर्द होगा, तब पता चलेगा कि बेजुबानों को बिना कारण सताना नहीं चाहिए। नानू बोली, "नहीं, हम तो सबको बहुत प्यार करते हैं। अगर हम भी इन्हें तकलीफ पहुँचाएँगे तो इनमें और हममें क्या अंतर रह जाएगा?" शेरू ने भर्राए स्वर में कहा। चारों दोस्तों की बात सुनते हुए गुब्बारों के पास बैठे लड़के सन्न बैठे थे। वे जमीन देख रहे थे और शर्म से उनकी आँखें झुकी जा रही थीं।

टप-टप करते आँसू उनकी आँखों से होते हुए उनके चेहरों को भिगो रहे थे। उन आँसुओं में जैसे वे सब धुले जा रहे थे, जैसे एक नए रूप में आने के लिए। उन्होंने सारे गुब्बारे फोड़ दिए और बाल्टी का रंगीन पानी फेंक दिया।

मोनू बोला, "हम अबीर और गुलाल से होली मनाएँगे। मैं अभी घर से लेकर आता हूँ।" चारों दोस्त खुशी के मारे गले लग गए।

मोनू जब उतरा तो उसके हाथ में एक प्लेट थी, जिसमें रोटियाँ, दूध, दही और अनाज के दाने थे। उसने गेराज में थाली रख दी और धीरे से बोला, "हो सके तो हमें माफ कर देना।"

गेराज में एक साथ ही गुलाबी, हरा, पीला, नारंगी, लाल और भी न जाने कितने रंग अचानक ही बिखर गए, दूर खड़ी झिलमिल परी मुसकारा रही थी।

साअ

ए ब्लॉक, फ्लैट नंबर-१०२, तुलसीयानी स्क्वायर
भगवती अपार्टमेंट के सामने, गर्ल्स हाईस्कूल के पास
क्लाइव रोड, सिविल लाइंस, प्रयागराज-२११००१
दूरभाष : ९६१६७९७१३८

ठंडा तेल

• हरिशंकर राढ़ी

आज सिर में दर्द कुछ ज्यादा ही हो रहा था। शायद बहुत दिनों बाद एक बेहतर जलवायु से बदतर में आने का असर हो। वैसे भी हमारे महानगरों के विलासितापूर्ण जीवन में जलवायु है ही कहाँ? न जल और न वायु। देखें तो वायु या तो जल रही है या गल रही है। चलिए, उसे ही जलवायु मान लेते हैं। लेकिन ये निगोड़ा शरीर माने तब तो! दो दिन कहीं गाँव-देहात का जल और वायु मिली नहीं कि इसके मिजाज ही बदल जाते हैं। शुद्धता का रोग लग जाता है, ठीक वैसे ही जैसे किसी-किसी को सफाई का रोग लग जाता है। लेकिन समस्या तो यही है कि आजकल शुद्धता के चक्कर में पड़ें तो जिएँ कैसे? जो भी हो, सिरदर्द तो होने लगा। टनटन घंटी जैसा कुछ बज रहा था और माथा टप-टप टपक रहा था। जैसे माथा पूरी तरह सूख गया हो। यहाँ से वहाँ तक ऐसी दरारें फट गई हों, जैसी अकालग्रस्त क्षेत्रों में फटती हैं। क्या करूँ?

याद आया, कोई सिर थोड़ा सा दबा दे तो राहत मिल जाएगी। कुछ दबाने से, कुछ स्पर्श के सुख से और कुछ किसी के मेरी परवाह करने के अहसास से। लेकिन दबाएगा कौन? माँ तो रही नहीं। होती तो बिना बताए ही जान जाती कि इसके सिर में दर्द है। परवाह और माँ सबसे नजदीकी पर्यायवाची होते हैं। वह अब तक बिना कहे ही किसी ठंडे तेल की आधी शीशी मेरे सिर पर ढलका चुकी होती। अरे भाई, इतने अधिक की आवश्यकता नहीं थी कि माथे और कनपटी से होकर पनाले की भाँति बहने लगे। मैं मना करता रह जाता, लेकिन वह कहाँ मानने वाली! माँ का हाथ और ठंडा तेल मिलकर न जाने कितने दुःखों-संतापों को ठंडा कर देते। लेकिन यक्षप्रश्न तो यह है कि अब उसकी जगह कौन सा हाथ आएगा?

दर्द को एक किनारे रखकर मन माँ की ओर लौट गया। कभी-कभी दवा न हो तो दवा का अहसास भी दर्द को दूर कर देता है, भले ही थोड़ी देर के लिए। भूखा शिशु भी दो मिनट झुनझुना बजा लेता है। उन दिनों घर में ठंडे तेल की कई प्रकार की शीशियाँ रखी होती थीं। दर्द की गहनता और तेल की तासीर के आधार पर यथोचित उपयोग होता था। हलकी-फुलकी जरूरत हो तो आँवले या नारियल का तेल लगता था। आँवले का तेल केवल दर्द दूर करने के लिए ही नहीं, थोड़ा महकाने के लिए भी होता था। नहा-धोकर कहीं किसी वजनी जगह के लिए निकलना हो तो आँवले का तेल बालों में हलका सा लगा लिया। बाल सेट हो गए और गमकने लगे। आखिर गाँव के सौंदर्य प्रसाधन कुछ तो अलग और मौलिक होंगे। नारियल का तेल औरतें लगातीं और हमारे मन में बैठा था कि यह औरतों का तेल है। अब अगर हमारा जन्म पुरुष के रूप में हुआ है तो नारियल का तेल लगाकर बेवजह अपना महिलाकरण क्यों करें? हम स्वयं को उस जाति में क्यों बदल लें, जो सदियों से कमतर मानी गई है? वह तो बाद में समझ में आया कि तेल से किसी की जाति नहीं बदलती! बदलती तो अब तक कितने दुखियारों ने बदल ली होती।

सुपरिचित लेखक। अनेक प्रतिष्ठित साहित्यिक एवं व्यावसायिक पत्र-पत्रिकाओं में व्यंग्य, कहानियाँ, लेख, यात्रा-वृत्तांत, समीक्षाएँ और कविताएँ प्रकाशित। संप्रति अध्यापन एवं साहित्यिक त्रैमासिकी 'समकालीन अभिव्यक्ति' में सह-संपादक।

लेकिन आँवले का तेल भयानक सिरदर्द में कारगर नहीं होता। वह भी तब, जब आपकी आर्थिक स्थिति कुछ ठीक हो और आप कुछ महँगे तेल खरीद सकें। जिनके पास आँवले की औकात नहीं होती थी, उनका सिरदर्द मँगनी के आँवले के तेल से ही ठीक हो जाया करता था। खैर, थोड़ा सा तेल सिर पर लगाया और थोड़ा कनपटी पर मालिश कर ली। यह बात अलग है कि आँवले का तेल ठंडे तेल की बिरादरी में पूरी तरह शामिल नहीं था।

ठंडे तेल की श्रेणी में वे तेल थे, जिनके नाम के पहले 'हिम' लगा हो। इनकी बहुत सारी प्रजातियाँ थीं। नाम में बहुत कुछ रखा है। आदमी के नाम में भले न कुछ रखा हो, सामान के नाम में तो रखा ही है। विश्वास न हो तो देख लीजिए, न जाने कितनी कंपनियाँ हैं, जो अपने नाम की कमाई खा रही हैं। नामी बनिया का तो पता नहीं क्या-क्या बिक जाता है। सो अगर तेल के नाम में हिम लगा है तो वह हिम जैसा ठंडा होगा। टपकते-टनटनाते सिर को कुछ तो ठंडा चाहिए। गरम चीजों में भले ही कितना स्वाद क्यों न हो, तसल्ली ठंडे से ही होगी। जो अभी गरम है, कितना भी मजा दे रहा है, वह कुछ देर में ठंडा तो होगा ही। सो कुछ भी गरमा-गरम देखकर सीत्कार मत करो। पहले मुँह जलेगा, फिर पूरा बदन। जल जाने के बाद ठंडा ही होना है। ठंडई मूल स्वभाव है। जनाब, जब आग ठंडी हो जाती है, तो बाकी के ठंडे होने में क्या संदेह?

वैसे तेल ठंडा ही ठीक होता है। एक तो तेल, ऊपर से गरम! फिर तो जला ही देगा। चाहे वह लगाने का हो या खाने का। थोड़ा शीत-गरम हो तो चोट के लिए मुफीद रहता है। चोट चीज ही ऐसी होती है। गरम पर भी दु:खी करती है और ठंडी हो तब भी। ठंडी चोट तो पूछिए मत। अंदर-ही-अंदर बरफ बना देती है। अकड़ जाता है आदमी। उससे सीधा नहीं हुआ जाता। जोड़ खुलते ही नहीं, चाहे वे तन के हों या मन के। मन की ठंडी चोट तो कई बार सुन्न कर जाती है। वहाँ कुछ शीत-गरम की जरूरत होती है। हलका सा गरम तेल लेकर कोई फाहे जैसे हाथों से लगाए तो कुछ राहत मिलती है। यह बात अलग है कि मन नहीं होता कि कोई ठंडी चोट को छुए।

गरम चोट की बात अलग होती है। गरम चोट पर ठंडा तेल उतना काम नहीं करता। कुछ वैद टाइप लोग कहते हैं कि गरम को गरम ही काटता है। कई बार देखा गया है, गरम लोग गरम लोगों से ही दोस्ती करते हैं, उन्हीं से संबंध बनाते हैं, उन्हीं से चलाते हैं। नजदीक कोई ठंडा आ जाए तो छनछना उठते हैं, जैसे गरम तवे पर पानी के छींटे। लेकिन ठीक होते हैं ठंडे से ही।

मुझे पता नहीं कि ठंडा तेल कब से चला आ रहा है। तेल का ही पता नहीं तो ठंडे तेल का पता कहाँ से चले? कभी-कभी सोचता हूँ कि तेल से पहले की दुनिया कैसी रही होगी? फिर तो तेल लगाने वाले भी नहीं रहे होंगे। यों भी तेल लगाना आदमी ने तभी सीखा होगा, जब सभ्य हुआ होगा। आज भी असभ्य आदमी तेल नहीं लगाता। दूसरे शब्दों में कहें तो आज तेल न लगाने वाला आदमी असभ्य माना जाता है। वह कितनी भी मेहनत क्यों न कर ले, उसका कोई काम सही नहीं होता! लेकिन जब तेल नहीं था तो क्या मनुष्य में स्निग्धता नहीं रही होगी? स्निग्धता या स्नेह तो तेल से ही आता है। भाषाविद् स्नेह की उत्पत्ति स्निह, यानी तेल से मानते हैं। ऐसा कैसे होगा कि तेलयुग से पहले का मनुष्य किसी को स्नेह नहीं करता रहा होगा? स्नेह या प्यार करने के लिए तो सभ्य होना जरूरी नहीं होता! क्या माताएँ तेल के बिना अपने लाल के माथे को नहीं सहलाती रही होंगी? क्या युवतियों की केशराशि अपने सौंदर्य से पुरुष को नहीं बाँधती रही होगी?

तब तेल पेरने की मशीनें रही नहीं होंगी। मशीनों की छोड़िए, तेली का कोल्हू और तेली का बैल भी नहीं रहा होगा। न था कोई बाँस, न बजती थी बाँसुरी! कोल्हू के बैल ने आदमी को कहीं का नहीं छोड़ा। अब वह अपने बड़े-बड़े कोल्हुओं में नधा हुआ है। आँख पर पट्टी बँधी हुई है और वह गोल-गोल घूमे जा रहा है। शाम होगी तो नाँद में लग जाएगा और फिर खूँटे पर बँध जाएगा। हो सकता है, एकाध नींद पूरी होने के बाद खाया-पीया जुगाली करने लगता हो। बहुत तेल पेर लिया, तेल की नदियाँ बह गईं। उसका मालिक तेल का व्यापारी हो गया है। तेल का एक हिस्सा कुछ मिलावट करके खाने के काम आ रहा है। फिर पेराई की मशीन बनाई, तब से स्वयं की पेराई होने लगी। पिसाई की मशीन बनाई तो आदमी पिसने लगा।

शायद उसे प्राकृतिक तेल से संतोष नहीं हुआ होगा। तिल, सरसों, अलसी, मूँगफली, नारियल, महुआ, नीम और सूरजमुखी तक को निचोड़ने से मन नहीं भरा तो उसमें सत्यानाशी और अगड़म-बगड़म मिलाने लगा। उसके पास लौंग, इलायची, धनिया, लहसुन सहित न जाने क्या-क्या था। इनमें थोड़े से रसायन मिलाकर लगाने का ठंडा तेल बना दिया। बाकी बचा हुआ शुद्ध तेल बड़े और धनवान लोगों की मालिश में चला जा रहा है। इधर मालिश वाले तेल की माँग कुछ घटी है, क्योंकि बड़े लोग अब नवनीत के आदती हो गए हैं।

अच्छा है कि मैं किसी संस्कृत भाषाविद् या आयुर्वेदाचार्य से बात नहीं कर रहा हूँ, वरना वह तेल शब्द की उत्पत्ति बताने लगता। भाषाविदों की आदत होती है कि ज्ञान बघारने के चक्कर में शब्दों की उत्पत्ति जरूर बताएँगे, वस्तु की उत्पत्ति का ज्ञान भले न हो। उन्हें लगता है कि सारी दुनिया व्याकरण और शब्दों की उत्पत्ति से ही चल रही है। अब वे इसी मामले में असंतोष से बताते कि तेल संस्कृत के तैल शब्द का तद्भव है। तिल से निकलने के कारण इस द्रव पदार्थ को तैल कहा गया। कालांतर में शुद्ध भाषा के पतन से तैल का तेल हो गया। विडंबना तो यह है कि बाद में हर चिकने या प्रायः समान पदार्थ को तेल कहा जाने लगा, भले ही वह सरसों या सूरजमुखी से निकला हो। और तो और, धरती के गर्भ से निकलने वाले गंधयुक्त जीवाश्मी द्रव पदार्थ को भी तेल कहा गया। अब कहाँ वह तेल और कहाँ यह तेल!

अच्छा है कि मैं किसी संस्कृत भाषाविद् या आयुर्वेदाचार्य से बात नहीं कर रहा हूँ, वरना वह तेल शब्द की उत्पत्ति बताने लगता। भाषाविदों की आदत होती है कि ज्ञान बघारने के चक्कर में शब्दों की उत्पत्ति जरूर बताएँगे, वस्तु की उत्पत्ति का ज्ञान भले न हो। उन्हें लगता है कि सारी दुनिया व्याकरण और शब्दों की उत्पत्ति से ही चल रही है। अब वे इसी मामले में असंतोष से बताते कि तेल संस्कृत के तैल शब्द का तद्भव है। तिल से निकलने के कारण इस द्रव पदार्थ को तैल कहा गया। कालांतर में शुद्ध भाषा के पतन से तैल का तेल हो गया। विडंबना तो यह है कि बाद में हर चिकने या प्राय: समान पदार्थ को तेल कहा जाने लगा, भले ही वह सरसों या सूरजमुखी से निकला हो। और तो और, धरती के गर्भ से निकलने वाले गंधयुक्त जीवाश्मी द्रव पदार्थ को भी तेल कहा गया। अब कहाँ वह तेल और कहाँ यह तेल!

इस भाषायी बहस में मैं ठंडा तेल भूल ही गया। बहस में ऐसा ही होता है। बहस कैसी भी हो, बाद में गरम हो जाती है। ऐसी स्थिति में ठंडा तेल कहाँ याद रहता है। हाँ, उस बहस से जब सिर गरम हो जाता है तो ठंडे तेल की जरूरत पड़ती है। न जाने उस ठंडे तेल में कौन-कौन से मसाले पड़े होते हैं! वैसे उसके निर्माता तो कहते हैं कि उसमें हिमालय की दुर्लभ जड़ी-बूटियाँ पड़ी हैं। उसका पूरा प्रभाव ओषधीय है। हिमालय का प्रभाव हमारे मन में न जाने कब से बसा हुआ है। संभवत: रामायण काल से है। लंका में लक्ष्मणजी के मूर्च्छित होने पर हनुमानजी हिमालय से कोई जड़ी-बूटी ले गए थे, जिसका नाम संजीवनी था। लक्ष्मणजी मरणासन्न स्थिति से जीवित हो उठे थे। जीवित ही क्यों, अगले युद्ध में उन्होंने इंद्रजीत, यानी मेघनाद का वध कर दिया था। तब से हिमालय हमारे लिए

संजीवनी का स्रोत है। न जाने वह विश्वास इस ठंडे तेल में कितनी गहराई तक समाहित है। हालाँकि इसमें संदेह नहीं कि इस ठंडे तेल में हिमालय की कोई जड़ी-बूटी नहीं है। वह तो शायद हिमालय के विश्वास की ठंड है, जो सिरदर्द को ठीक कर देती है।

सच कहूँ तो मुझे हिमालय और जड़ी-बूटियों, दोनों पर ही संदेह होने लगा है कि इनमें दर्द को दूर करने की काबिलीयत है। दरअसल, जब से माँ नहीं रहीं, इन ठंडे तेलों ने असर करना बंद कर दिया है। माँ थी तो करता था। सिर को अजीब सी ठंडक पहुँचाता था। संभवत: पिपरमिंट और कपूर की गंध और शीतलता अंदर तक चली जाती थी। अब माँ के न रहने पर सिरदर्द में तेल रखता ही कौन है; दूसरे रख भी लिया जाए तो उतना फायदा नहीं पहुँचाता। कभी-कभी तो मन को खराब कर देता है और दशकों पीछे धकेल देता है। इतनी मुश्किल से तो यहाँ तक चलकर आया हूँ, फिर ले जाकर वहीं पटक देता है। जिन हाथों का स्पर्श स्मृतिमात्र बनकर रह गया हो, उनसे दर्द दूर करने की अपेक्षा कहाँ तक न्यायोचित है? दर्द तो उन यादों से ही पैदा हो जाता है; और ऐसा दर्द, जिसे दुनिया का कोई ठंडा तेल दूर नहीं कर सकता।

एक जमाना ठंडे तेल से पहले का भी था, जब घर में केवल दो तरह के तेल हुआ करते थे। एक तो सरसों का तेल, दूसरा मिट्टी का तेल। एक चूल्हे में जलता था तो दूसरा दीये में। सरसों ने बहुत साथ दिया था उन दिनों। हम किसानों की बहुत बड़ी हितैषी हुआ करती थी मिट्टी के तेल वाले युग में। उगते ही साग बनकर पेट भरने आ जाती, वसंत में फूलकर सौंदर्यबोध कराती और पक जाने पर कोल्हू में आत्मोत्सर्ग करके तेल व खली में बदल जाती। तरकारी की छौंक से लेकर बचवा के तेल-बुकवा में बस उसी सरसों का तेल। घुटनों के दर्द, शरीर की मालिश से लेकर अधकपारी तक की एकमात्र ओषधि सरसों का तेल। दादी बतातीं कि सरसों का तेल गरम होता है, लेकिन पेट से लेकर शरीर तक की सारी गरमी इसी से शांत होती थी।

दादी घर की बैद थीं। दवाइयों का उनका अपना कुटीर उद्योग था। प्राय: सबकी दादी के कुटीर उद्योग थे। पैर में काँटा चुभा है तो मदार, यानी आक का दूध लगा लो। कब्ज हुआ है तो अजवाइन और काला नमक मिलाकर रखा हुआ है, खा लो। दर्द किसी प्रकार है तो अपनी सरसों का तेल है ही। सरसों के तेल की एक-दो बोतलें आँगन में ऐसी जगह गाड़ देतीं, जहाँ पानी रुकता हो। तीन-चार महीने बाद वह खोदकर निकाला जाता। एक ठंडा तेल वह भी होता।

ठंडा तेल बाजार में आज भी है। अब तो बड़े-बड़े अभिनेता इसका प्रचार करते हैं। आँवले का भी है और बादाम का भी। बहुत कुछ होगा। बहुतेरे तो झड़े हुए बालों को उगाने का दावा करते हैं। क्या पता इनके उत्पादकों के बाल उग आते हों। किसी भी साधन से पैसे उग आएँ तो क्या नहीं उग जाएगा! लोगबाग खरीदते भी होंगे, लेकिन अपनी आलमारी से ठंडे तेलों का वनवास हो गया है। अब कौन जाता है तेल चुपड़ने! अम्मा नहीं रहीं, उनके स्नेह सने हाथ नहीं रहे, तो ससुरे तुम ठंडे तेल का क्या करूँगा? तुम वहीं-कहीं ठंडे पड़े रहो!

बी-५३२ (दूसरा तल)
वसंतकुंज एन्क्लेव (बी-ब्लॉक)
नई दिल्ली-११००७०
दूरभाष : ९६५४०३०७०१

दोहे

नीति के दोहे

● हरदान हर्ष

सत्तासुख हो वासना, मानव भक्षी शेर।
खून लगे जब दाढ़ को, फेर-फेर अरु फेर॥
रहे पेट की जुगत में, सिंह न जाने छेम।
मारे खावे सो रहे, जंगल का यह नेम॥
शेर न झपटे झुंड पे, विधि से करे शिकार।
इक छाँटे इकला करे, एका को ले मार॥
चीं-चींकर चिड़ियाँ उड़े, चिंघाड़े गजराज।
हर्ष मोर कुरला पड़े, विपद काल आवाज॥
घोड़ों को काबू किया, खोजी जबहु रकाब।
खेलें छल का खेल जो, ओढ़े रहत नकाब॥
साँप केंचुली छोड़ता, रहे साँप का साँप।
हर्ष तजे न जहर को, हो जहरीला साँप॥
एक विष ग्रंथि साँप में, हर अंग जहर न होय।
जहर भरा मन दुष्ट का, विषमय हर अंग होय॥

जिस घट में हो जो भरा, हर्ष सो ही देय।
विषधर ग्रंथि जहर की, छोह परे डस लेय॥
दूध पिलाना साँप को, दुष्ट से मेल-मिलाप।
बिगड़े तो दोनों बुरे, बन जाते अभिशाप॥
मैं छेड़े फुफकारता, भीतर बैठा नाग।
हर्षा मारो नाग को, तो ही शोभे पाग॥
मकड़ी सम जाला बुने, रहे फसल जन माँय।
ताना बाना आपका, दोष किसी का नाँय॥
हर्ष जलम से काम पे, कीड़ी कुंजर मीन।
काम छोड़ उत्पात तो, मानो जीवन हीन॥
जीवन बैया घोंसला, उलझे पुलझे तार।
उलझे पुलझे तार से, गजब रचे किरदार॥

ए-३०६, महेश नगर, जयपुर-१५
दूरभाष : ९७८५८०७११५

दोहे-नवगीत

● योगेंद्र वर्मा 'व्योम'

...रंगो से संवाद

मनके सारे त्याग कर, कष्ट और अवसाद।
पिचकारी करने लगी, रंगों से संवाद॥

रिश्तों की शालीनता, के टूटे तटबंध।
फागुन ने जब जब लिखा, मस्ती भरा निबंध॥

गुझिया से कचरी लड़े, होगी किसकी जीत।
एक कह रही है गजल, एक लिख रही गीत॥

सुबह सुगंधित हो गई, खुशबू डूबी शाम।
अमराई ने लिख दिया, खत फागुन के नाम॥

तन-मन में उल्लास के, फूटे अंकुर देख।
सबने पढ़े गुलाल के, गंध पगे आलेख॥

हर चेहरे से हो गई, सभी उदासी दूर।
मन के भीतर जब बजा, फागुन का संतूर॥

मस्ती और उमंग वो, आई जब-जब याद।
रंग सारे करने लगे, होली का अनुवाद॥

फिर से भरने के लिए, रिश्तों में अहसास।
रंगो की अठखेलियाँ, जगा रही विश्वास॥

रंग-बिरंगे रंग से, कर सोलह शृंगार।
खुशी लुटाने आ गया, रंगों का त्योहार॥

क्या अपने क्या गैर सब, खुशियाँ बाँटें संग।
आज मिटे हर शत्रुता, कहते सारे रंग॥

गले मिले मन से सभी, छोड़ पुराने बैर।
एक दूसरे की सदा, प्रभु से माँगे खैर॥

भिन्न-भिन्न पर एक हैं, रंगोली के रंग।
नीला संग पीला सजा, लाल हरे के संग॥

चलो मनाएँ इस तरह, होली अबकी बार।
इस होली में दें जला, मन के सभी विकार॥

तुझमें रंग भरे जीवन के

गुझिया इठलाकर बल खाकर
पिचकारी से बोली
चल आजा
हम खेलें होली

गूँज रहा मस्ती की धुन पर
फागुन का आलाप
लेकिन तू कोने में छिपकर
बैठी है चुपचाप
बुला रही है उम्मीदों की
रंग-बिरंगी टोली

धीरज रख फिर से आएगा
वही पुराना दौर
फूटेगा जब आमों पर फिर
निश्छलता का बौर
यहाँ-वहाँ सब ओर करेगा
टेसू हँसी-ठिठोली

तुझमें रंग भरे जीवन के
मुझमें भरी मिठास
चल मिलकर वापस लाते हैं
रिश्तों में उल्लास
अपनेपन के गाढ़े रंग से
रचें नई रंगोली।

इंद्रधनुष-से रंग

बातचीत की फागुन ने फिर
हुरियारों के संग

राग-द्वेष से ऊपर उठकर
साथ-साथ बहना

भिन्न स्वभावों में भी हरदम
मिल-जुलकर रहना
नए अर्थ-परिभाषा गढ़ते
इंद्रधनुष-से रंग

पतझड़ में भी उम्मीदों
हरा-भरा होना
नए सृजन का जैसे कोई
महक रहा दोना
सिखा रहा गुलमोहर सभी को
जीने का हर ढंग

हावी होना हँसी-ठिठोली का
अवसादों पर
और रीझना टेसू के
मीठे-से वादों पर
देख गुलालों की जीवटता
है अबीर भी दंग।

सुपरिचित कवि। विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में रचनाएँ तथा 'इस कोलाहल में' (काव्य-संग्रह), 'बात बोलेगी' (साक्षात्कार संग्रह), 'रिश्ते बने रहें' (नवगीत-संग्रह) प्रकाशित। शताधिक संस्थाओं से समय-समय पर सम्मानित। संप्रति राजकीय सेवा।

साअ
ए.एल.-४९, उमा मेडिकल के पीछे,
दीनदयाल नगर-१, काँठ रोड,
मुरादाबाद-२४४१०५ (उ.प्र.)
दूरभाष : ९४१२८०५९८१

आधी रात का स्वप्न

मूल : ***विलियम शेक्सपियर***

महान् नाटककार और लेखक विलियम शेक्सपियर का जन्म अप्रैल, १५६४ में स्टेटफोर्ड शहर में श्रीमती मरियम और जॉन शेक्सपियर के घर में हुआ। अपनी शिक्षा के दौरान उन्होंने एक प्रसिद्ध लेखक का नाटक पढ़ा। अतः उनका झुकाव नाटक की ओर हो गया और अंततः वे दुनिया के प्रसिद्ध नाटककार बने। नवंबर, १५८२ में एक किसान की बेटी ऐनी हाथवे से उनका विवाह हुआ। बाद में लंदन आकर एक थिएटर में नौकरी की। यहीं पर उन्होंने लिखना और नाटक खेलना शुरू किया। यहीं पर उन्होंने अपने जीवनकाल में 'रोमियो और जूलियट', 'मैकबेथ', 'हैमलेट', 'द मर्चेंट ऑफ वेनिस', 'जूलियस सीजर' आदि कुल ३७ नाटक लिखे। कविताओं के अलावा उन्होंने १५४ सोनेट भी लिखे। सन् १५९९ में ग्लोब नामक थिएटर स्थापित किया। २३ अप्रैल, १६१६ को स्मृतिशेष। यहाँ उनकी एक चर्चित कहानी का हिंदी रूपांतर दे रहे हैं।

एथेंस नगर में एक सनकी राजा राज्य करता था। उसका स्वभाव बड़ा विचित्र था। यही कारण था कि उसके राज्य के नियम-कानून भी बड़े विचित्र थे। उसके राज्य में यह कानून था कि युवा होने पर कोई भी लड़की कुँवारी नहीं रहेगी। उसे उसके पिता की पसंद के लड़के के साथ विवाह करना होगा। पिता उसका विवाह जिसके साथ चाहे कर सकता था। लड़की की इच्छा या अनिच्छा का कोई महत्त्व नहीं था। जो लड़की इस कानून को मानने से इनकार करेगी या इसका उल्लंघन करेगी, उसे फाँसी पर लटका दिया जाएगा।

मृत्यु के भय से अनेक लड़कियों ने पिता की पसंद के लड़कों के साथ खुशी-खुशी विवाह कर लिये। लेकिन कुछ लड़कियाँ ऐसी भी थीं, जिन्होंने इस प्रकार विवाह करने से इनकार कर दिया। उनकी प्राणरक्षा के लिए पिता ने कोई शिकायत नहीं की। उन्होंने पुत्रियों की पसंद को अपनी पसंद बना लिया।

परंतु एक दिन दरबार में एक ऐसा व्यक्ति उपस्थित हुआ, जो राजा के पास अपनी पुत्री की शिकायत लेकर आया था। उसने राजा को प्रणाम किया और गुहार लगाते हुए बोला, "महाराज, मेरी एक पुत्री है हर्मिया। मैंने बड़े लाड़-प्यार से उसका पालन-पोषण किया है। अब वह विवाह योग्य हो गई है। मैंने उसके लिए डिमिट्रियस नामक एक युवक का चयन किया था, परंतु उसने मेरी पसंद को ठुकरा दिया। वह लाइसेंडर नामक युवक से प्रेम करती है और उसी के साथ विवाह करना चाहती है। इसलिए आप उसे दंडित करें, जिससे मेरे मन को शांति मिल सके।"

राजा ने हर्मिया को बुलवाया। सैनिक उसे दरबार में ले आए। राजा ने पूछा, "हर्मिया, तुम्हारे पिता ने तुम्हारे विवाह के लिए एक योग्य वर का चयन किया है। फिर क्यों तुम उसे ठुकरा रही हो? क्या तुम नहीं जानतीं कि इस राज्य के कानून के अनुसार पुत्री को पिता की पसंद के युवक के साथ विवाह करना पड़ता है। यदि वह ऐसा नहीं करती तो उसे फाँसी पर लटका दिया जाता है।"

हर्मिया बोली, "महाराज, पिताजी ने मेरे जिस युवक का चयन किया है, वह हेलेना नामक लड़की से प्रेम करता है। जब वह मुझसे प्रेम ही नहीं करता तो मैं उसके साथ विवाह कैसे कर सकती हूँ? मैं लाइसेंडर से प्रेम करती हूँ और उसी के साथ विवाह करना चाहती हूँ। वह भी मुझसे प्रेम करता है और विवाह के लिए तैयार है। यदि उसके साथ मेरा विवाह नहीं हुआ तो मैं जीवन भर कुँवारी रहना पसंद करूँगी।"

राजा उत्तेजित हो गया, "हर्मिया, प्रेम में अंधी होने के कारण तुम्हारी सोचने-समझने की शक्ति खत्म हो गई है। इसलिए तुम ऐसी बात कर रही हो। मैं तुम्हें तीन दिन का समय देता हूँ, डिमिट्रियस से विवाह कर लो, वरना फाँसी पर लटकने के लिए तैयार रहो।"

दरबार से निकलकर हर्मिया सीधे लाइसेंडर के पास पहुँची और उसे सारी बात बताई। वह सोच में पड़ गया। कुछ गहरे सोच-विचार के बाद आखिरकार उसे एक उपाय सूझा।

वह उछलते हुए बोला, "हर्मिया, तुम चिंता मत करो। मुझे एक उपाय सूझा है। यदि हम उसके अनुसार चलेंगे तो शीघ्र हमारा विवाह हो जाएगा और तुम फाँसी की सजा से भी बच जाओगी।"

"सच! ऐसा क्या उपाय है, जिससे हमारा विवाह संभव हो सकता है? जल्दी बताओ, हमें क्या करना होगा?" हर्मिया ने उत्सुकता प्रकट करते हुए पूछा।

इस नगर की सीमा पर एक जंगल है। उसे पार करते ही दूसरे राज्य की सीमा आरंभ हो जाती है। वहाँ के नियम और कानून हमारे विवाह में बाधा नहीं डालेंगे। वहाँ मेरी एक मौसी रहती हैं। हम दोनों उन्हीं के पास चलेंगे और वहीं जाकर विवाह करेंगे।" लाइसेंडर एक ही साँस में सब बोल गया।

"ठीक है, हम दोनों आज ही एथेंस छोड़कर वहाँ चले जाएँगे।" हर्मिया ने स्वीकृति देकर उसकी बात पर मुहर लगा दी।

और फिर उसी रात आँखों में भविष्य के सपने सँजोए दोनों प्रेमी दूसरे राज्य की ओर चल पड़े।

संयोगवश उसी रात डिमिट्रियस भी अपनी प्रेमिका हेलेना के साथ वन-भ्रमण के लिए उस जंगल में आया हुआ था। वे जहाँ भ्रमण कर रहे थे, उससे कुछ ही दूरी पर परियों के राजा ओबेरोन का निवास था। उसकी पत्नी का नाम टिटैनिया था। उस दिन किसी बात पर रूठकर टिटैनिया कहीं चली गई थी। ओबेरोन व्याकुल होकर उसके लौटने की प्रतीक्षा में बाहर नजरें गड़ाए था।

बाहर वन-भ्रमण के दौरान हेलेना और डिमिट्रियस बहुत थक गए, इसलिए एक-दूसरे के आगे-पीछे होकर चलने लगे। ओबेरोन उन्हें देखकर सोचने लगा कि शायद वे एक-दूसरे से रूठे हुए हैं, इसलिए कोई ऐसा उपाय करना चाहिए, जिससे वे फिर एक हो जाएँ। उसने उसी समय पंक नामक परी को याद किया। परी प्रकट हुई।

वह परी बड़ी चंचल और शरारती थी। लोगों को मूर्ख बनाने और तंग करने में उसे बहुत आनंद आता था। अकसर वह ग्वालिनों के दूध के मटकों में मेढक का रूप धारण कर बैठ जाती। ग्वालिनें जब दूध पलटने के लिए मटका खोलतीं तो वह टर्राते हुए तेजी से बाहर की ओर छलाँग लगाती। तब भयभीत होकर ग्वालिनें मटके छोड़ देतीं और सारा दूध बिखर जाता। इस प्रकार शरारतों से वह सबको परेशान करती थी।

उसने ओबेरोन से पूछा कि उसे क्यों बुलाया है? वह उसे हरे रंग के द्रव्य की एक शीशी देते हुए बोला, "पंक परी, इस शीशी को सँभालकर अपने पास रखो। यह सम्मोहित करनेवाला द्रव्य है। यदि इसे किसी सोते हुए मनुष्य की दाईं आँख पर लगा दिया जाए तो जागने पर वह जिसे सबसे पहले देखेगा, उस पर मोहित हो जाएगा। पंक, इस समय डिमिट्रियस नामक एक युवक अपनी प्रेमिका हेलेना के साथ वन-भ्रमण पर है। ऐसा लगता है, किसी बात को लेकर उनमें मनमुटाव हो गया है। तुम इस द्रव्य की एक बूँद सोते हुए डिमिट्रियस की दाईं आँख पर लगा दो। जागने पर जब वह हेलेना को देखेगा तो उसके मन में प्यार का स्रोत फूट पड़ेगा। परंतु ध्यान रहे, हेलेना को इस बात का पता न चल पाए।"

"परंतु मैंने तो डिमिट्रियस को देखा नहीं है। मैं उसे कैसे पहचानूँगी?"

"उसने सुनहरे और हरे रंग के वस्त्र पहन रखे हैं। तुम उसे आसानी से पहचान लोगी। अब देर मत करो, जल्दी जाकर अपना काम पूरा करो।" ओबेरोन ने आदेश दिया।

पंक परी शीशी लेकर डिमिट्रियस को ढूँढ़ने चल पड़ी। वह उस स्थान पर पहुँच गई, जिस दिशा से लाइसेंडर और हर्मिया ने जंगल में प्रवेश किया था। थक जाने के कारण वे दोनों एक वृक्ष के नीचे सो रहे थे। लाइसेंडर ने भी सुनहरे और हरे रंग के वस्त्र पहन रखे थे। परी ने उसी को डिमिट्रियस समझकर उसकी दाईं आँख पर वशीकरण द्रव्य लगा दिया। इधर, संयोगवश डिमिट्रियस और हेलेना एक-दूसरे से बिछड़ गए। भटकते-भटकते हेलेना भी उस स्थान पर पहुँच गई, जहाँ लाइसेंडर सो रहा था। कदमों की आहट से लाइसेंडर की नींद टूट गई और उसने उस ओर देखा जिस ओर से हेलेना आ रही थी। द्रव्य के प्रभाव के कारण वह हेलेना को देखते ही उस पर आसक्त हो गया। उसके मन में हेलेना के लिए प्रेम उमड़ आया और उसे प्रेम स्वर में पुकारने लगा।

हेलेना और लाइसेंडर एक-दूसरे को पहले से ही जानते थे। आज तक वह उसे न जाने कितने अपशब्दों से पुकारता आया था। उसकी नजर में वह एक तुच्छ और नीच युवती थी। इसलिए उसके मुँह से अपने लिए ऐसे प्रेम भरे शब्द सुनकर वह विस्मित रह गई। उसने सोचा कि लाइसेंडर उसका मजाक उड़ा रहा है। इसलिए वह उसे आवारा और बेशर्म कहकर वहाँ से चल दी।

द्रव्य का प्रभाव निरंतर बढ़ रहा था। इसके फलस्वरूप लाइसेंडर के मन में हेलेना के लिए प्यार बढ़ता जा रहा था। वह दीवानों की तरह उसके पीछे चल पड़ा।

इधर, हर्मिया की आँख खुली तो उसने इधर-उधर देखा, लाइसेंडर कहीं दिखाई नहीं दिया। जंगल में स्वयं को अकेला पाकर वह भयभीत हो गई और उसे ढूँढ़ते हुए उसी दिशा में चल पड़ी जिस ओर हेलेना व लाइसेंडर गए थे।

एक वृक्ष के पीछे छिपी पंक परी सारी घटना का भरपूर आनंद ले रही थी। हँस-हँसकर उसके पेट में बल पड़ रहे थे। सबके जाने के बाद वह ओबेरोन के पास पहुँची और अपनी हँसी पर काबू पाते हुए बोली, "महाराज, यह द्रव्य वास्तव में बहुत चमत्कारी और प्रभावशाली है। इसके प्रभाव से हरे वस्त्रवाला युवक पास सोई हुई युवती को छोड़कर दूसरी युवती के पीछे दीवाना बना घूम रहा है। जबकि वह युवती गालियाँ देते हुए उससे दूर भाग रही है। मुझे जिंदगी में इतना आनंद कभी नहीं आया।"

ओबेरोन कुछ देर के लिए सोच में पड़ गया। फिर बोला, "पंक परी, तुम्हारी बातों से लगता है कि इस समय वन में प्रेमियों के दो जोड़े हैं, जिन्होंने एक जैसे कपड़े पहने रखे हैं। अवश्य तुमने किसी गलत व्यक्ति की आँख पर द्रव्य लगा दिया है। मैं दो प्रेमियों को मिलाने का प्रयास कर रहा था, लेकिन लगता है कि तुमने दूसरे जोड़े को भी अलग कर दिया। अब तुम जल्दी से जाओ और दोनों जोड़ों के बीच में सुलह करवाकर आओ।"

आदेश पाते ही परी वहाँ से चली गई। इस बार वह सोते हुए

डिमिट्रियस के पास पहुँची और उसकी दाईं आँख पर सम्मोहित करनेवाला द्रव्य लगा दिया।

उधर, लाइसेंडर से बचने के लिए हेलेना तेजी से उस दिशा की ओर भाग रही थी, जिधर डिमिट्रियस सोया पड़ा था। उसके पीछे दीवानों की तरह लाइसेंडर भाग रहा था और लाइसेंडर के पीछे हर्मिया थी। तीनों एक-एक कर डिमिट्रियस के पास पहुँच गए। तभी डिमिट्रियस की आँख खुली और उसने हेलेना को अपनी ओर आते देखा। वह हेलेना से प्यार करता था, लेकिन द्रव्य के प्रभाव के कारण वह उस आर आधिक चाहने लगा। उसने बाँह फैला दी और दीवानों की तरह बोला, "प्रिय, प्राणप्यारी! तुम कहाँ चली गई थीं? तुम्हारे विना क प्रम एक-एक पल काटना मुझे कितना मुश्किल लग रहा था। आओ, मेरी बाँहों में समा जाओ। मैं तुमसे बहुत प्रेम करता हूँ।"

सहसा हेलेना के कदम थम गए। आज तक उसके मुँह से उसने कभी ऐसी बातें नहीं सुनी थीं। वह आश्चर्यचकित थी। एक ओर उसे गँवार और नीच समझनेवाला लाइसेंडर दीवानों की तरह उसके पीछे आ रहा था, दूसरी ओर डिमिट्रियस असभ्य शब्द बोलते हुए उसे बाँहों में लेने के लिए पागलों की तरह आतुर था। दोनों के विपरीत व्यवहार को देखकर वह सोच में पड़ गई।

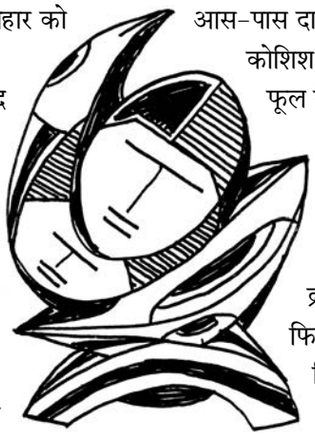

तभी उसे हर्मिया दिखाई दी। उसने सोचा कि शायद उसने उसका उपहास उड़ाने के लिए लाइसेंडर को उसके पीछे लगाया था और स्वयं पीछे-पीछे तमाशा देखने आ गई थी। यह सोचकर वह क्रोध में भर गई और उसने हर्मिया को चुटिया पकड़कर नीचे गिरा दिया। हेलेना को देखकर हर्मिया ने सोचा कि वही लाइसेंडर को बहकाकर अपने साथ ले गई थी, इसलिए वह भी गुस्से में भरकर उससे लड़ने लगी।

उधर, डिमिट्रियस ने लाइसेंडर को हेलेना के पीछे आते देखा तो गुस्से से उसका चेहरा लाल हो गया। उसने सोचा कि हेलेना को छेड़कर वह उसकी हँसी उड़ा रहा है। उसने उसे दडित करने के लिए तलवार निकाल ली और उसे युद्ध के लिए ललकारा। लाइसेंडर भी तलवार लेकर मैदान में कूद पड़ा। हेलेना को कोई और प्यार भरे शब्दों से पुकारे, यह बात लाइसेंडर को चुभ गई। यह सब उस द्रव्य का ही प्रभाव था, जो परी ने उनकी आँखों पर लगाया था। दोनों आपस में उलझ गए।

आकाश में खड़ी पंक परी यह सारा दृश्य देख रही थी। हँस-हँसकर उसका बुरा हाल हो रहा था। ऐसी घटना उसने कभी नहीं देखी थी। वह तेजी से उड़कर राजा ओबेरोन के पास पहुँची और हँसते हुए बोली, "चलिए महाराज, मैं आपको मुर्गों की लड़ाई दिखाती हूँ। उसे देखकर आप भी हँसते-हँसते लोट-पोट हो जाएँगे।"

"तुम इतनी हँस क्यों रही हो? और किस लड़ाई की बात कर रही हो?" ओबेरोन ने उत्सुकतावश पूछा।

"महाराज, आपने मुझे जिन प्रेमी जोड़ों के पास भेजा था, वे आपस में बुरी तरह से झगड़ रहे हैं।" पंक परी ने कहा।

ओबेरोन उसे डपटते हुए बोला, "पंक, तुम्हें इस प्रकार की शरारतें शोभा नहीं देतीं। मैंने तुम्हें प्रेमी जोड़ों में सुलह करवाने के लिए भेजा था और तुम उन्हें लड़वा आईं। अब मैं जैसा कहता हूँ, वैसा करो। दोनों युवकों में एक युवक का नाम लाइसेंडर है, जो हर्मिया से प्रेम करता है। दूसरा युवक डिमिट्रियस हेलेना का दीवाना था। लेकिन तुम्हारी गलती के कारण लाइसेंडर हर्मिया को छोड़कर हेलेना का दीवाना हो गया है। पंक, तुम जल्दी से जाओ और अदृश्य रहकर वहाँ संगीत की मधुर स्वर-लहरियाँ बिखेर दो। इससे मोहित होकर वे लड़ना छोड़ देंगे और नाचने लगेंगे। नाच-नाचकर जब वे धककर सो जाएँ, तब तुम दोनों की बाईं आँख पर दिव्य द्रव्य लगा देना। इससे वे द्रव्य के सम्मोहन से मुक्त हो जाएँगे और पहले की तरह अपनी-अपनी प्रेमिकाओं को प्यार करने लगेंगे। ध्यान रहे, इस बार कोई गलती मत करना।"

पंक परी आज्ञा का पालन करने चली गई।

इसके बाद ओबेरोन उदास मन से टिटैनिया के महल की ओर चल पड़ा। उस समय वह शाही बाग में एक झूले के ऊपर लेटी हुई थी। आस-पास दासी परियाँ लोरियाँ गाते, चैवर डुलाते हुए उसे सुलाने की कोशिश कर रही थीं। ओवेरोन ने भौंरे का रूप धरा और एक फूल के ऊपर बैठकर लोरी सुनता रहा। कुछ देर बाद टिटैनिया को नींद आ गई।

इतने में ओबेरोन को परीलोक का एक शेखचिल्ली दिखाई दिया, जो पास हो एक वृक्ष के नीचे सो रहा था। ओबेरोन को एक शरारत सूझी। उसने दिव्य द्रव्य की कुछ बूँदें टिटैनिया की दाई आँख पर लगा दीं। फिर उसने शेखचिल्ली के सिर को गधे के सिर में बदल दिया। फिर उसने ऐसी व्यवस्था कर दी कि नींद से उठते ही टिटैनिया की नजर सबसे पहले शेखचिल्ली पर पड़े।

थोड़ी देर बाद टिटैनिया ने आँखें खोलीं और शेखचिल्ली को देखा। द्रव्य के प्रभाव के कारण वह उस पर मोहित हो गई। उसने दासियों से कहा, "देखो, देवलोक से कितना सुंदर पुरुष यहाँ आकर सो रहा है। इसका मुख चंद्रमा की तरह चमक रहा है, कान सूर्य की किरणों जैसे सुनहरे हैं। इसे देखकर मेरे मन में प्रेम का सागर उमड़ रहा है।"

एक गधे के लिए टिटैनिया का प्रेम देखकर आसपास खड़ी दासियाँ मंद-मंद मुसकराने लगीं।

द्रव्य के प्रभाव से टिटैनिया के मन में शेखचिल्ली के लिए प्रेम बढ़ता गया। तभी वह 'ढेंचू-ढेंचू' करने लगा। टिटैनिया खुश होते हुए बोली, "वाह! यह दिखने में जितना सुंदर है, इसकी आवाज उतनी ही मधुर है। इसने चारों ओर रस की स्वर लहरियाँ बिखेर दी हैं। जाओ और इसे आदर सहित लेकर मेरे पास आओ। इसे पाकर मैं स्वयं को धन्य समझूगी।"

अभी तक तो दासियाँ इसे मजाक समझकर हँस रही थीं। लेकिन जब टिटैनिया ने गधे को लाने का हुक्म दिया तो वे आश्चर्य से भर उठीं।

फिर भी रानी की आज्ञा थी, इसलिए वे गधे को सम्मानपूर्वक वहाँ ले आई।

टिटैनिया ने आगे बढ़कर गधे को चूम लिया और उसके सिर को गोद में रखकर प्यार करने लगी। ओबेरोन ने शेखचिल्ली पर ऐसा जादू कर दिया था कि वह गधे की तरह सोचने लगा, उसी के समान व्यवहार करने लगा। इसलिए टिटैनिया ने शेखचिल्ली से भोजन के बारे में पूछा तो वह बोला, "मुझे भोजन में हरी घास और चने की दाल चाहिए। मुझे यही पसंद है।"

दासियों ने उसके भोजन का प्रबंध कर दिया। भोजन करने के बाद शेखचिल्ली की फरमाइश पर वे उसकी पीठ खुजलाने लगीं। फिर उसे टाट के कपड़े पहनाए गए।

सब कामों से निबटकर शेखचिल्ली टिटैनिया की गोद में सिर रखकर सो गया। उसे देखकर टिटैनिया को भी नींद आ गई।

ओबेरोन अदृश्य रूप से यह सारा घटनाक्रम देख रहा था। हँसी से उसका हाल बुरा था। दोनों के सोते ही उसने शीघ्रता से रानी की बाई आँख पर द्रव्य लगा दिया।

कुछ देर बाद जब टिटैनिया की नींद खुली तो अपनी गोद में गधे का सिर देख वह भयभीत हो गई। तभी ओबेरोन प्रकट हुआ और हँसते हुए बोला, "यह क्या कर रही हो, रानी? मुझे छोड़कर किससे प्यार कर रही हो?"

टिटैनिया घबराकर उठ खड़ी हुई और गधे को जोर से एक लात मारी।

ओबेरोन पुनः हँसते हुए बोला, "मेरी रानी, मेरी कसम खाकर कहो कि अब तुम मुझसे कभी नहीं रूठोगी?"

"कसम खाती हूँ कि आज के बाद मैं आपसे कभी नहीं रूठूँगी।" टिटैनिया ने दोनों कानों को पकड़कर कहा।

इसके बाद ओबेरोन ने उन्हें सारी बात बताई, जिसे सुनकर हर कोई हँसने लगा।

इतने में पंक परी भी दोनों प्रेमी जोड़ों को लेकर वहाँ आ गई। ओबेरोन ने उन्हें अपना अतिथि बनाया। रात भर सब खान-पान और नाच-गान में डूबे रहे।

अगले दिन सब अपनी-अपनी मंजिल की ओर चल पड़े। सबको ऐसा लग रहा था मानो उन्होंने आधी रात का कोई सपना देखा हो।

सा अ

लघुकथा

कल्पनाओं की दुनिया

● डोली शाह

बचपन से ही साथ पढ़ने के कारण रूपा और अमित दोनों में बहुत अधिक सहानुभूति थी। वे एक-दूसरे को दिल की हर बात बताते। अमित इसे प्यार समझ बैठा और हर पल वह उन्हीं कल्पनाओं में डूबा रहता।

रूपा पढ़ाई को प्राथमिकता देने के कारण आगे निकल गई। उसके चाहने वालों की संख्या भी बढ़ती गई। वह दफ्तर के एक अधिकारी से प्यार करने लगी। दोनों के रिश्ते की भनक ज्यों ही अमित को मिली, वह अंदर से बिल्कुल टूट गया। उसका मानसिक संतुलन भी बिगड़ने लगा, जिस कारण उसका साइकेट्रिस्ट से इलाज कराना जरूरी हो गया।

इलाज के दौरान उसे रूपा की चूड़ियों की आवाज छन-छन करती हुई सुनाई पड़ने लगी।

पत्तों से ढका उसका शरीर नजर आने लगा। वह रूपा को वस्त्रहीन पाने के लिए हर प्रयास करता रहता साथ ही कोई तीसरा व्यक्ति शिकारी के रूप में भाला-बरछा लिये उन दोनों के रिश्ते को काटते हुए आगे की ओर बढ़ता नजर आता।

अमित की मानसिक स्थिति का मुआयना करके डॉक्टर साहब उसे समझाते हुए कहते—"देखो अमित! वह आदिमानव का समय था, तुम्हारे कल्पना में जो आकृति चल रही है। पहले भी स्त्री-पुरुष में प्रेम था, पर वस्त्रहीन होने के बावजूद दोनों ही एक-दूसरे का पूरा सम्मान करते थे, लेकिन आज पूरे कपड़े पहनने के बावजूद आदमी की सोच आदिमानव से भी बदतर हो चुकी है। वह हमेशा नग्न कल्पनाओं में खोना चाहता है। वह अपनी ही नजरों में गिरता रहता है। प्यार तो दोनो की ताकत बनना चाहिए, कमजोरी नहीं। तुम्हारी खुशी रूपा की खुशी होनी चाहिए। फिर तुम ऐसा क्यों सोचते हो? सच्चे प्रेम में पास होना जरूरी नहीं, बल्कि साथ होना मायने रखता है।

"वह हर पल तुम्हारे साथ ही तो है। फिर गम क्यों?" धीरे-धीरे अमित सँभलने लगा।

एक दिन वह डॉक्टर साहब से बोल ही पड़ा—"आप सही कह रहे हैं, वह मेरे साथ है। वह मेरी जीवन की उपलब्धि भी है। मैं उसी की यादों के साथ हमेशा खुश रखने का प्रयास करूँगा।"

सा अ

निकट-पी.एच.ई., पोस्ट-सुल्तानी छोरा
जिला-हैलाकंदी
दूरभाष : ९३९५७२६१५८

साझी संस्कृति की विरासत और जम्मू-कश्मीर का साहित्य

● बबिता सिंह

मानव सभ्यता के विकास और भारतीय इतिहास की लंबी परंपरा को देखें तो पाएँगे कश्मीर ने दिन के उजालों में अपना रूप-रंग सँवारा और निखारा है तो रात के अँधेरों में सुंदर स्वप्न भी सँजोए हैं और कभी-कभी अर्धरात्रि की नींद में भयंकर स्वप्नों के आघातों ने जगाया भी है। कश्मीर इतिहास एवं संस्कृति से भरा हुआ प्रदेश है। जम्मू-कश्मीर की संस्कृति, यानी भारत की संस्कृति। कश्मीर भारत का सबसे प्राचीनतम प्रदेश रहा है। जम्मू-कश्मीर का उल्लेख महाभारत में भी मिलता है। संस्कृति, सभ्यता, इतिहास, राजनीति, कृषि, भाषा, साहित्य, चिकित्सा-प्रणाली, विज्ञान और तकनीकि अर्थात् संपूर्ण भारतीय ज्ञान-परंपरा के विकास में जम्मू-कश्मीर का अवदान अमूल्य है। जम्मू-कश्मीर ने प्राचीन काल से ही सुख-शांति, समृद्धि-वैभव से अपने अद्‌भुत श्रृंगार किए हैं, लेकिन वक्त-बेवक्त आततायियों, आक्रांताओं ने इस पर कठोर प्रहार किए हैं, जिससे जम्मू-कश्मीर की साझी संस्कृति को क्षति पहुँची है। कश्मीर में सभी धर्मों के लोग रहते हैं, जिससे इस प्रदेश में विविधता और सयुंक्त संस्कृति देखने को मिलती है। हालाँकि पिछले कुछ दशकों से कश्मीर में आतंकवाद और सांप्रदायिकता के कारण साझी संस्कृति में का विखंडन हुआ है तथा संस्कृति के विकास में बाधाएँ भी उत्पन्न हुई हैं, फिर भी इन सभी चुनौतियों के बावजूद कश्मीर की साझी संस्कृति ने विश्व के भीतर भी अपनी महत्ता को स्थापित किया है। कश्मीर प्राचीन समय से ही विद्या का केंद्र रहा है। इस प्रदेश में संस्कृत के आचार्य हुए हैं। जम्मू-कश्मीर ही एक ऐसा प्रदेश है, जिसका लिखित इतिहास प्राप्त है। कश्मीर में संस्कृत, फारसी, उर्दू, हिंदी, कश्मीरी, पंजाबी, डोगरी भाषा में साहित्य रचना की जा रही है।

सुपरिचत लेखिका। विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में रचनाएँ प्रकाशित। संप्रति शोधार्थी पी-एच.डी. हिंदी, दिल्ली विश्वविद्यालय।

जिस प्रकार से किसी राष्ट्र के लिए उसकी संप्रभुता और स्वाभिमान का प्रतीक राष्ट्रीय ध्वज और राजचिह्न होता है, ठीक उसी प्रकार से राष्ट्र की संस्कृति एवं भाषा भी उसके गौरव और अस्मिता की प्रतीक होती है। भारत एक बहुभाषा-भाषी राष्ट्र है। विस्तृत भूभाग वाले इस देश में कश्मीर से लेकर कन्याकुमारी तक और कच्छ से लेकर ब्रह्मपुत्र तक अनेक भाषाएँ एवं बोलियाँ बोली जाती हैं, फिर भी भारत सांस्कृतिक और भाषाई दृष्टि से एक इकाई के रूप में देखने को मिलता है। भारतीय संस्कृति विभिन्न प्रदेशों के लोकरंगों, विश्वासों, त्योहारों, जीवनदर्शन आदि सभी से निर्मित एक बहुरंगी और बहुआयामी संस्कृति बनती है, जो विभिन्नता में एकता को दरशाती है। भारत में यह जो विभिन्नता दिखाई पड़ती है, दरअसल वह विभिन्नता भारत की अनेकता में एकता की शक्ति है। भारत ने इस विभिन्नता को अपने में समाहित कर लिया है, यहाँ पर गंगा-जमुनी संस्कृति का संगम देखने को मिलता है। इस मिली-जुली संस्कृति का उदाहरण हम स्वतंत्रता प्राप्ति के पहले के कश्मीर में देख सकते हैं। वर्तमान समय में भले ही कश्मीर की पहचान इसलाम तक सिमटकर रह गई है, परंतु हमेशा से ऐसा नहीं था। कश्मीर हिंदुओं के शैव मत, बौद्ध धर्म और इसलाम की साझी विरासत का गवाह रहा है।

कश्मीर को धरती का स्वर्ग कहा जाता है। कल्हण ने 'राजतरंगिणी' में कश्मीर को सबसे सुंदरतम प्रदेश कहा है, सिर्फ इसलिए नहीं कहा है कि वहाँ पर पर्वतमालाएँ, झील-झरने, चीड़-चिनार के पेड़ आदि से प्रकृति आच्छादित है, बल्कि इसलिए भी कि वह प्राचीन समय से विद्या का भी केंद्र रहा है। कश्मीर में ऋषि वाटिका, शारदा पीठ भी है, जहाँ पर लोग शिक्षा ग्रहण करने जाते थे। प्राचीन समय में जब बच्चे शिक्षा लेना शुरू करते थे तो उन्हें कश्मीर की तरफ मुँह करके बिठाया जाता था और श्लोक बुलवाया जाता था—

"नमस्ते शारदे देवि काश्मीरपुरवासिनी।
त्वामहं प्रार्थये नित्यं विद्यादानं च देहि मे॥"

यानी 'कश्मीर में विराजने वाली माँ शारदा, आप हमें विद्या का दान दें।'

जैसे भारत अपने आप में विविधता में एकता को समाए हुए है, उसी प्रकार से कश्मीर ने भी सूफी, संतों, बौद्धों को अपने में समाए हुए है। कश्मीर को सूफियों और संतों का प्रदेश भी कहा जाता है। कश्मीर शैव

मत, बौद्ध और इसलाम की साझा विरासत की भूमि रही है। यह कहा जा सकता है कि कश्मीरियत महज एक अल्फाज नहीं है, बल्कि एक संस्कृति का नाम है। एक ऐसी संस्कृति, जिसमें हिंदू-मुसलिम और बौद्ध की साझा विरासत शामिल है। शायद यही वजह है कि कल्हण ने अपने ग्रंथ 'राजतरंगिणी' में लिखा है कि "कश्मीर को आध्यात्मिक ताकत से जीता जा सकता है, सैन्य शक्ति से नहीं।" कल्हण की 'राजतरंगिणी' को एक तरह से कश्मीर के इतिहास का लिखित दस्तावेज कहा जा सकता है। (११८४ ई.पू.) के राजा गोनंद से लेकर राजा विजयसिंह (११२९ ई.) तक के कश्मीर के प्राचीन राजवंशों का प्रामाणिक इतिहास 'राजतरंगिणी' में है।

कश्मीर में जो साझी विरासत का संगम देखने को मिलता है, वह इसलिए क्योंकि कश्मीर में सभी धर्मों को फलने-फूलने का मौका मिला। कश्मीर में शुरुआती दौर में बौद्ध धर्म और शैव मत खूब फला-फूला। बौद्ध धर्म की महायान शाखा तो कश्मीर में ही पनपी। २६८ ई.पू. तक राज करने वाले सम्राट् अशोक के दौर में कश्मीर में बौद्ध धर्म का काफी प्रचार-प्रसार हुआ।

कश्मीर की बात हम करें तो कश्मीर महज एक भूमि का टुकड़ा नहीं, राज्य नहीं, एक सभ्यता है, एक संस्कृति है, जो वर्षों पुरानी है। और जो भारतीय सभ्यता और संस्कृति का मूल स्रोत भी है। कश्मीर साहित्य, संस्कृति, भाषा, काव्यशास्त्र, कला-संगीत, तंत्र, व्याकरण, इतिहास तथा साधना की असीम संपदा का स्वामी है। कश्मीर मामलों के विशेषज्ञ सुशील पंडित बताते हैं कि कश्मीर काल-गणना की प्राचीनतम भूमि है। कश्मीर में प्रचलित काल-गणना को 'सप्तर्षि संवत्' कहते हैं और काल गणना की यह पद्धति पाँच हजार चौरानबे वर्ष से अद्यतन अक्षुण्ण चली आ रही है। समय को निर्धारित करने की यह पद्धति संभवत: विश्व की प्राचीनतम पद्धति है और यह पद्धति कश्मीर से जुड़ी है। यह सप्तर्षि संवत् भारतीय सभ्यता और संस्कृति की प्राचीनतम और जीवंत प्रमाण है। कश्मीर 'कल्हण', 'पाणिनी', 'पतंजलि', 'मम्मट', 'रुद्रट', 'उद्भट', 'भट्टतौत', 'शंकुक', 'अभिनवगुप्त', 'आनंदवर्धन' आदि भाषाविदों, काव्यशास्त्रियों, दर्शनाचार्यों, तंत्र के ज्ञाताओं, कवियों, इतिहासकारों तथा संगीताचार्यों की भूमि रही है।

कश्मीर हमें आदिशंकराचार्य और उनके द्वारा स्थापित शारदापीठ तथा वहाँ रचित 'सौंदर्य लहरी' की याद दिलाता है। कश्मीर के इतिहासकार कल्हण से ही हमें ज्ञात होता है कि भारत वर्ष का इतिहास ईस्वी, सन् या विक्रम संवत् से नहीं, बल्कि कलि संवत् से भी जुड़ा है, कश्मीर भारतीय ज्ञान-परंपरा का सर्वोच्च केंद्र रहा है। 'कश्मीर' शब्द भारतीय भाषा परंपरा में उतना ही प्राचीन है, जितना 'काशी' और 'उज्जयनी'। कश्मीर की जो साझी विरासत थी, उसे मध्यकाल और आधुनिक काल में पूरी तरह से विकृत करने का प्रयास किया गया। भारतीय संस्कृति में साझी विरासत का मतलब भारत में रहने वाले सभी वर्गों और समुदायों के लोग, जिनकी भाषा, धर्म, लिंग, नस्ल कोई भी क्यों न हो, परंतु संस्कृति के विकास में उनके विशिष्ट योगदान को पहचानना और स्वीकार करना है। साझा सांस्कृतिक विरासत को कश्मीर के परिप्रेक्ष्य में देखें तो वहाँ की सांस्कृतिक विरासत अनुपम है। कश्मीर के जैसी साझी विरासत भारत में शायद ही कहीं देखने को मिले। शैव, इसलाम, बौद्ध तीनों धर्मों की संस्कृति यहाँ मिलकर एक हो गई है। कश्मीरी लेखिका चंद्रकांता अपने उपन्यास 'ऐलान गली जिंदा है' में इस साझी विरासत के बारे में लिखती हैं—"फागुन में शिवरात्रि के मौके पर ठंड में थोड़ा सा फर्क आ जाता, शिवरात्रि पंद्रह दिन धूम-धड़ाके से मनती। एक तो शिवरात्रि, उस पर इसलाम के दिन ईद! दोनों उत्सवों पर मेल-मिलाप और मुबारकबाद देने की प्रथा को रखना जरूरी था।"

कितने ही दौर आए, चाहे सिकंदर बुतशिकन के द्वारा हिंदू धर्म को नष्ट करना हो या औरंगजेब द्वारा यहाँ किए गए अत्याचार। जैनुल आबदीन (बड़शाह) और गुरु तेग बहादुर जैसे संत भी हुए हैं, जो यहाँ की साझी संस्कृति की विरासत को बचाए रखने के लिए हमेशा प्रयासरत रहे। तभी तो ललद्यय और नंदु ऋषि की धरती पर लोग भिन्न-भिन्न धर्मों के बावजूद आपसी सौहार्द और समन्वय की लोक संस्कृति में रचे-बसे जीते रहे।

कश्मीर गंगा-जमुनी संस्कृति का केंद्र रहा है। हिंदू-मुसलिम मिलजुल कर आपस में मैत्रीपूर्वक रहते हैं। किंतु आतंकवाद के काले साये ने कश्मीर को रक्तरंजित कर दिया। कश्मीर की सांस्कृतिक विरासत को खंड-खंड करके रख दिया है। कश्मीरी नेताओं के कारण हिंदू-मुसलिम के बीच फूट पड़ी और दुश्मनी बढ़ी। पुराने समय में जो प्रयास साझी विरासत को अलग करने के लिए किए गए थे, उनमें शासन का हाथ भी रहा। कोई भी स्थानीय व्यक्ति उनके साथ नहीं जुड़ा था, लोगों ने एक-दूसरे का साथ दिया था। "मास्टरजी कहते हैं कि ये गुलाब नबी 'पंडित' और मुहम्मद सलीम 'हंडू' का मतलब क्या है? क्या श्रीधर पंडित और जियालाल 'हंडू' मुसलमान हैं? हिंदू-मुसलमान के उपनाम भी कहीं-कहीं एक ही हैं! भीतर जो एक ही खून बह रहा है, सो भाईचारे का सूत्र क्यों न बँधेगा?" लेकिन वर्तमान समय में कश्मीर की जो साझी विरासत है, वह खंड-खंड हो चुकी है। वहाँ बस चारों ओर बँदूकें, गोले, बारूद और पत्थर ही दिखाई पड़ते हैं। आजादी के बाद नेताओं के कारण लोगों के दिलों में भी जहर घुल गया, वे एक-दूसरे के दुश्मन बन गए और एक रची-बसी संस्कृति मजहबी ताकतों के नाम पर टूट गई।

कश्मीर पर लिखे सभी उपन्यासों में इस सांस्कृतिक विरासत का उल्लेख मिलता है। 'ऐलान गली जिंदा है' में लेखिका ने धार्मिक-सौहार्द, हिंदू-मुसलिम एकता की साझी संस्कृति को दिखाया है। अनवर मियाँ, संसारचंद, कंठ काका आदि हिंदू-मुसलिम दोनों धर्मों को समान महत्त्व देते हैं।

चंद्रकांता कहती हैं कि "घर के सामने प्राचीन गणेश मंदिर था, जहाँ से पौ फटने से शुरू होकर देर रात तक मंत्रों, श्लोकों, भजनों और आरती के स्वर सुनाई पड़ते। नदी पार से लड़कियों के सामूहिक नृत्य, शेव के गीत गूँजते रहते, मसजिदों से अजान की आवाजें आतीं, कभी-कभी किसी बाँसुरी की उदास धुन भी।" कश्मीर की साझी सांस्कृतिक विरासत का विवेचन लेखिका ने अपने दूसरे उपन्यास 'कथा-सतीसर' में विस्तृत रूप में किया है। एक ही गली-मोहल्ले में मंदिर, मसजिद, नमाज के

साथ-साथ घंटे-घड़ियालों की गूँजती मधुर ध्वनि, श्लोकोच्चारण सबका मन मोह लेते। 'कथा सतीसर' में लेखिका ने हारी पर्वत स्थित मंदिर और उसके नीचे बने प्रांगण में अखुद मुल्लाशाह की मसजिद तथा गुरुद्वारा पातशाही, ये तीनों हिंदू, मुसलिम, सिख धर्मों में समन्वय के प्रतीक हैं।

'रिफ्यूजी कैंप' उपन्यास में आशीष कौल लिखते हैं—"यहाँ हर साल उर्स लगता। यहाँ के उर्स की एक खासियत थी कि जब उर्स होता तो १५ दिन हिंदुओं के साथ-साथ कोई मुसलमान भी न मांसाहार करता, न ही किसी दूकान पर मांस बिकता। अनंतनाग की यह सांस्कृतिक धरोहर, न श्रीनगर की जल लेक, शालीमार बाग या निशात बाग को हासिल थी और न ही पहलगाम और सोनमर्ग के हसीन नजारों को।" कश्मीर के वासी कवयित्री ललद्य और नंदु ऋषि को एक जैसा सम्मान देते हैं। कवयित्री ललद्य और नंदु ऋषि साझी संस्कृति के गवाह हैं। किंतु सन् १९४७ के बाद से इसका ताना-बाना अत्यंत जटिल हो गया। समाज में टकराव की स्थिति लाने में पाकिस्तान ने भरसक प्रयास किए तथा अब भी जारी हैं। शिगाफ उपन्यास में मनीषा कुलश्रेष्ठ अपनी पात्र अमिता के माध्यम से हिंदू समाज की स्थिति पर संशय करती हैं। "हमारे पास क्या कमी थी, समृद्धि और पुराणों को लेकर अब तक चला आ रहा सांस्कृतिक इतिहास, बुद्धिमत्ता, सौंदर्य राजनीतिक दूरदृष्टि भी यहाँ काम नहीं आई। जंगल में रहने के लिए आवश्यक एक पारिस्थितिक समीकरण और चौकन्नापन की बहुत बड़ी कमी थी शायद हमारे पास। वह कमी थी जंगलीपन और वहशीपन की, जिसकी वजह से हमें अपनी जन्मभूमि से भगाया गया।"

'रिफ्यूजी कैंप' उपन्यास में आशीष कौल लिखते हैं—"यहाँ हर साल उर्स लगता। यहाँ के उर्स की एक खासियत थी कि जब उर्स होता तो १५ दिन हिंदुओं के साथ-साथ कोई मुसलमान भी न मांसाहार करता, न ही किसी दूकान पर मांस बिकता। अनंतनाग की यह सांस्कृतिक धरोहर, न श्रीनगर की जल लेक, शालीमार बाग या निशात बाग को हासिल थी और न ही पहलगाम और सोनमर्ग के हसीन नजारों को।" कश्मीर के वासी कवयित्री ललद्य और नंदु ऋषि को एक जैसा सम्मान देते हैं। कवयित्री ललद्य और नंदु ऋषि साझी संस्कृति के गवाह हैं। किंतु सन् १९४७ के बाद से इसका ताना-बाना अत्यंत जटिल हो गया। समाज में टकराव की स्थिति लाने में पाकिस्तान ने भरसक प्रयास किए तथा अब भी जारी हैं।

कश्मीर प्राचीन समय से ही साहित्य, इतिहास का गढ़ रहा है। कश्मीरी भाषा में रचित साहित्य १४वीं शताब्दी के उत्तरार्ध से मिलता है। "प्रारंभिक कश्मीरी साहित्य की रचना शारदा लिपि में ही की गई थी। आगे चलकर फारसी और देवनागरी लिपियों में कश्मीरी साहित्य की रचना हुई।" संत कवयित्री ललद्य और शेख नुरुद्दीन वली ने कश्मीरी साहित्य में भक्ति, ज्ञान और सदाचार की अनुपम धारा बहाई, इन दोनों के 'वाख' और 'श्रुक' आज भी कश्मीरी जनमानस में प्रचलित हैं। इन कवियों ने सांस्कृतिक पुनर्जागरण, मानव कल्याण और सामाजिक पुनरुत्थान की दार्शनिक अभिव्यक्ति अपने काव्य में की है। आगे चलकर कश्मीर के अन्य कवि हुए हब्बाखातून व अरणिमाल, जिन्होंने अपने प्रेमगीतों से कश्मीरी साहित्य को समृद्ध किया। कश्मीरी साहित्य पहली बार धर्म-दर्शन की वैचारिक भूमि से उठकर प्रेम-यौवन के रंगीन डैनों पर परवाज करने लगा। साहित्य का यह क्रम १५५० से लेकर १७५० ई. तक चला। १७५० ई. से लेकर १९०० ई. तक रचे गए साहित्य में प्रमुखत: दो प्रकार की धाराएँ देखने को मिलती हैं। प्रथम धारा में फारसी मसनवियों के आधार पर कश्मीरी में रचित अथवा अनूदित प्रेमकाव्य मिलते हैं और दूसरी के अंतर्गत राम एवं कृष्ण भक्तिकाव्य। इस काल में रचित काव्य-कृतियों में 'गुलरेज', 'यूसुफ-जुलेखा', 'रामावतार चरित', 'राधा स्वयंवर', 'सुदामा चरित' आदि उल्लेखनीय हैं। कश्मीर में वैष्णव-भक्ति का भी प्रचार-प्रसार हुआ। 'रामावतार चरित' कश्मीरी भाषा में रचित रामकथा काव्य परंपरा का बहुमूल्य काव्य-ग्रंथ है, इस रचना में कवि ने रामकथा को भाव-विभोर होकर गाया है। 'कश्मीरियत' की अनूठी रंगत में रँगी यह काव्य कृति भारतीय रामकाव्य-परंपरा में विशिष्ट स्थान रखती है।

स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद के कश्मीरी साहित्य को देखा जाए तो उसकी विवेचना करने से पहले पिछले ५० वर्षों में रचे गए कश्मीरी साहित्य को भी जानना आवश्यक होगा। लगभग एक तरह से देखा जाए तो कश्मीरी साहित्य के आधुनिक काल की शुरुआत हिंदी साहित्य की तरह ही सन् १९०० से प्रारंभ होती है। कश्मीरी साहित्य में भी नाटक, कहानी, उपन्यास, एकांकी, ध्वनि नाटक आदि विधाओं पर लेखनी चलाई रचनाकारों ने। काव्य के क्षेत्र में भी प्रयोग हुए। सन् १९४७ तक कश्मीरी कविता में प्रकृति-प्रेम की मिली-जुली भावानुभूति व्याप्त रही। इसके बाद कश्मीरी कविता की श्रीवृद्धि करने में गुलाम अहमद महजूर, मास्टर जींद कौल, अब्दुल अहम् 'आजाद', अहद जरगर, अलमस्त कश्मीरी, फाजिल कश्मीरी आदि कवि हैं। जिन्होंने अपनी अनवरत साहित्यिक साधना से आने वाले साहित्यकर्मियों के लिए प्रयोग के लिए नूतन द्वार खोल दिए और घाटी में एक ऐसा साहित्यिक माहौल तैयार किया, जिसको आगे आने वाली पीढ़ी के कवियों को आत्मसात् कर अपनी प्रतिभा को मुखरित करने का सुअवसर मिल गया। कश्मीरी साहित्यकारों ने उर्दू, फारसी कविता में भी महत्त्वपूर्ण योगदान दिया है। गनी, वायस, मुहम्मद अमीन मुस्तगनी, भवानी प्रसाद काचरू, दीवान कृपा राम आदि कवि हुए हैं।

कश्मीरी साहित्य के इतिहास में नया मोड़ तब आता है, जब भारत आजाद हो जाता है। १९४७ में भारत ब्रिटिश साम्राज्य से आजाद होता है, भारत और पाकिस्तान दो राज्य बनते हैं। इसी वर्ष कश्मीर की सुरम्य घाटी पर पाकिस्तान-समर्थित कबाइलियों का आक्रमण होता है, जिसके फलस्वरूप घाटी के अनेक देशभक्त साहित्यकारों ने अपनी रचनाओं के माध्यम से देश और प्रदेश की स्वतंत्रता, अखंडता, मान-मर्यादा और धर्म-निरपेक्षता की रक्षा हेतु ओजस्वी वाणी में दुश्मन को ललकारा। जब

कश्मीर में शांति का वातावरण स्थापित होने लगा, जिसके परिणामस्वरूप साहित्यकारों की विचारधारा में भी परिवर्तन होने लगा। जिससे नई भावभूमि की सृष्टि हुई तथा नई परिवर्तित परिस्थितियों के कारण नूतन जीवन मूल्यों की स्थापना होने लगी। साहित्यकार अपने साहित्य में नए प्रयोग करने लगे। कश्मीरी साहित्य में नाटक, कहानी, उपन्यास आदि लिखे जाने लगे। कश्मीरी का प्रथम साहित्यिक नाटक नंदलाल कौल का 'सत्यच काहवट' है, जिसे १९२९ में लिखा था। कश्मीरी नाटककारों की परंपरा में गुलाम नबी सोज, ताराचंद बिसमिल, नीलकंठ शर्मा के नाम उल्लेखनीय हैं। कश्मीरी कहानीकारों में बंसी निर्दोष, डॉ. शंकर रैना, अमीन कामिल, सपफी गुलाम मुहम्मद, हरिकृष्ण कौल आदि हुए हैं, जिन्होंने मानव-चरित्र के गूढ़तम रहस्यों, उनकी समस्याओं व जीवन दृष्टियों, वर्तमान समय आदि को मार्मिक ढंग से प्रस्तुत किया है अपनी कहानियों के माध्यम से। कश्मीरी साहित्यकारों ने अपनी लेखनी आलोचना, उपन्यास आदि सभी विधाओं में चलाई है।

कश्मीरी साहित्य के समकालीन परिदृश्य पर बात की जाए तो साहित्यकार अपनी लेखनी से साहित्य को समृद्ध कर रहे हैं। पाकिस्तान समर्थित सांप्रदायिक उग्रवाद ने वादी के सौहार्दपूर्ण वातावरण को विषाक्त बना दिया। वर्तमान समय में घाटी आतंकवाद के साये में गोला-बारूद की दुर्गंध से सुलग रही है, जिसमें अधिकांश कवि घाटी छोड़कर इधर-उधर भटक रहे हैं और जो घाटी में रह रहे हैं, उनकी पीड़ाएँ और विवशताएँ हैं। फिर भी रचनाकारों ने अपनी लेखनी को रुकने नहीं दिया। आज तेजी से बदलते कश्मीर की त्रासदियों और आतंकवाद से उपजी पीड़ा को अनेक कश्मीरी साहित्यकारों ने हिंदी भाषा में अभिव्यक्त करना शुरू कर दिया है। इनमें शशिशेखर तोषखानी, रतनलाल शांत, शंभूनाथ भट्ट हलीम, मोहन निराश, महाराज कृष्ण संतोषी, उपेंद्र रैना, क्षमा कौल, अग्नि शेखर, महाराज भरत, चंद्रकांता, संजना कौल, पद्मा सचदेव, मीराकांत आदि हैं। इन सभी लेखकों ने अपनी रचनाओं के माध्यम से कश्मीर की लोक संस्कृति को साझी विरासत को और सामयिक द्वंद्वों व तनाव को घर छोड़ने की पीड़ा, आतंकवादी हैवानियत को हिंदी भाषा में अभिवयक्त किया है। उपन्यास के क्षेत्र में चंद्रकांता, क्षमा कौल, संजना कौल आदि लेखिकाओं ने कश्मीर की लोक संस्कृति, वहाँ के लोगों के जीवन की व्यथा-कथा, दर्द आदि सब को भारतीय साहित्य में दर्ज किया है।

संक्षेप में कहा जाए तो आज कश्मीरी रचनाकार गद्य और पद्य में जो साहित्य रच रहा है, उसे विस्थापन और आतंकवाद की परिणित से उत्पन्न साहित्य की श्रेणी में रखा जा सकता है। इसमें वे सभी लेखक हैं, जो आतंकवाद के कारण अपने घर-गाँव को छोड़कर अपने ही देश में शरणार्थी बनकर विस्थापन का दर्द भोग रहे हैं और दूसरे वे हैं, जो वादी में ही रहकर आतंकवाद द्वारा उत्पन्न की हुई समस्याओं को झेल रहे हैं। समस्याएँ भले भिन्न हों, पर उनकी पीड़ा और कथा एक ही है, जिसमें सांप्रदायिक उन्माद से उपजे निष्कासन की पीड़ा, मानव-अधिकारों के हनन की पीड़ा, अनिश्चित भविष्य का भय भी है और आतंक के साये में जीने का कष्ट भी। कश्मीरी लेखक अपने वर्तमान समय की इन्हीं सच्चाइयों को आईना दिखाकर समय के साक्ष्य भी प्रस्तुत कर रहा है और हालातों के कारण साझी संस्कृति में आई दरारों को पाटने की कोशिश भी कर रहा है। अपने ही देश में बेघर हुए लेखक शरणार्थी शिविरों में रहकर विस्थापन की पीड़ा बयान करने के साथ अपने घर वापसी के स्वप्न भी देख रहे हैं। इनमें निम्मी पंडिता, सुनीता रैना, मीराकांत, तरन्नुम रियाज, मोतीलाल साकी, अर्जुन देव मजबूर, त्रिलोकीनाथ गंजू, मोतीलाल कीमू, महाराज कृष्ण काव, अरुण कौल, आशीष कौल, बृजनाथ बेताब आदि रचनाकार हैं, जिन्होंने गद्य, पद्य, नाटक, उपन्यास, फिल्म के माध्यम से कश्मीर की व्यथा-कथा को साहित्य में दर्ज किया है। वहीं पर कश्मीर में बैठकर अपनी आँखों से देखकर कश्मीर के दर्द को बयाँ कर रहे हैं। जिनमें अमीन कामिल, ताज बेगम रंजू, गुलाम रसूल संतोष, गुलाम नबी नाजिर, अवतार कृष्ण रहबर, फारुख नाजकी, अमर मालमोही से लेकर युवा लेखक फय्याज तिलगामी, इकबाल फहीम और निदा नवाज आदि लेखक आज मानवीय पीड़ा और शोषण के खिलाफ अपनी रचनाओं में स्वर दे रहे हैं। कश्मीर की वादी में और वादी के बाहर बहुत सी लेखिकाएँ भी हैं, जो साहित्य को समृद्ध कर रही हैं। जम्मू से पद्मा सचदेव ने डोगरी और हिंदी भाषा में साहित्य रचकर साहित्य में स्थानीय रंग दर्ज किए हैं। इन्होंने कई उपन्यास और कहानियाँ लिखकर जम्मू की सांस्कृतिक विशेषता को जीवंत किया है। इनके आलावा निर्मल विनोद, वेद राही, ओम गोस्वामी छत्रपाल, सुतीक्षण कुमार आनंदम आदि रचनाकार हैं, जो जम्मू की संस्कृति, रहन-सहन, वहाँ के परिवेश, सभी का विवेचन कर साहित्य में अपनी महत्त्वपूर्ण उपस्थिति दर्ज कराई है।

आज के इस भूमंडलीकरण के दौर में कश्मीरी रचनाकारों का लिखा साहित्य लोक-समस्याओं और लोक-संस्कृति से ओत-प्रोत है। यह सिर्फ खुद की पीड़ा का साहित्य नहीं है, बल्कि विश्व की पीड़ा का साहित्य बन जाता है। कश्मीरी साहित्य वृहद् भारतीय संस्कृति में स्थानीय रंग भरकर उसमें वैविध्य को प्रश्रय देता है और प्रकारांतर से उसे समृद्ध करता है, जबकि वर्तमान समय में तेजी से बदलता हुआ समय और समाज एक थोपी हुई पाश्चात्य सभ्यता का शिकार होकर अपनी सभ्यता और संस्कृति की पहचान को खोता जा रहा है। वहीं पर कश्मीरी साहित्यकार लोक-जीवन और सामयिक विद्रूपताओं को साहित्य में दर्ज कर अपने प्रदेश के सुख-दुःख, अवदान और खूबियों-खामियों से पाठकों को परिचित कराता है, तो वहीं पर मानवीय प्रश्न उठाकर संघर्ष, आस्था और उम्मीद के दीये भी जलाता है। आज समाज इस तकनीकी और मशीनी युग में संवेदनहीन न बन जाए, इसी चिंता में रचनाकार चेतना का विस्तार करता है और मानवीय संवेदना का संवर्धन भी। वर्तमान समय का कश्मीरी साहित्य मानवीय संवेदना से ओत-प्रोत साहित्य है। कश्मीरी साहित्य के लेखक निरंतर अपनी लेखनी से भारतीय साहित्य को समृद्ध कर रहे हैं।

साअ

शोधार्थी, पी-एच.डी. हिंदी
दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली-११०००७
दूरभाष : ९२८९७४३११४

भाप बनता पसीना

● राजीव कुमार 'त्रिगर्ती'

किसी एक दिन

अपने तन पर प्रसून लपेटे
साँसों से सुगंध उड़ेलती
वसंत की एक सुहानी सुबह
हरियाली ओढ़ इतराते
किसी पेड़ के नीचे
यों ही मिला दे हमें
और हमारे आंतरिक उद्‌गार
पत्तों की थिरकन के साथ
फैल जाएँ हमारे चारों ओर

किसी बरसाती शाम में
दामिनी के आलोक में
अपना मुँह देख उतरती बूँदों के
धरा पर आगमन के साथ
हो रहा हो स्वाद और गंध का मिलन
हम आ जाएँ एक पारदर्शी छत्र के नीचे
और छिटककर भिगोती बूँदों के साथ
सान लें एक-दूसरे के अंतस् की
नर्मी और गरमी

किसी प्रचंड दोपहर को
जब फैला हो मृगमरीचिका का इंद्रजाल
तब एक गीत गाती पहाड़ी नदी के
आर-पार के किनारों पर बैठे
पानी की तरंगों के साथ डूबते-उतराते
एक-दूसरे के प्रतिबिंब में
होने लगें प्रतिबिंबित

अपनी माँग में अरुणोदयी सिंदूर भरकर
शरद् की एक मुसकराती सुबह
ले जाकर छोड़ दे हमें
मखमली दूब से भरे सुंदर टीले पर
टहलते हुए अनायास ही
बंद कर लें हम आँखें
एक-दूसरे को करें अनुभूत
एक-दूसरे के भीतर उतरते हुए

यों ही किसी दिन
हम तोड़ दें सारे बंध
निकल जाएँ मौसमों की सीमा के पार
सारे लौकिक नियमों से परे
प्रेम के संसार में विचरने के लिए।

कल्पना से यथार्थ तक

जब तक विचरता रहता हूँ
कल्पना लोक में
तैरता रहता हूँ
सपनों के पोखर से समुद्र तक

इस बीच पूरी दुनिया
मेरी मुट्ठी में होती है

जब हकीकत से टकराता हूँ
चाहता हूँ
तुम्हारी मुसकान के साथ
तुम्हारे शहद सने दो शब्द
पहाड़ की ऊपरी ढलान पर पनपते
धूप के पौधे की तरह सुरभित

इस बीच मेरी हथेलियों में होता है
भाप बनता पसीना।

प्रेम में होना

प्रेम में होना
होना है
आँखों में सहस्रवर्णी सपने

प्रेम में होना
स्वयं को अहर्निश भूलकर भी
किसी और के भीतर जीना है
अपनी मर्जी से

सुपरिचित रचनाकार। मूलतः कविता और व्यंग्य लेखन। अनेक पत्र-पत्रिकाओं में कविताएँ और व्यंग्य के साथ-साथ दो काव्य-संग्रह 'गूलर का फूल' और 'जमीन पर होने की खुशी' प्रकाशित। संप्रति छावनी परिषद् विद्यालय, योल कैंट, धर्मशाला में अध्यापन।

प्रेम में होना
यों ही गुनगुनाना है बेसिर-पैर
यों ही मुसकराना है बिना किसी बात

प्रेम में होना
यों ही बहक जाना है
बिना कुछ पिए

प्रेम में होना
बस प्रेम में होना है
बिना कुछ लिये-दिए

प्रेम में होना
यों ही तितलियों का
हवा संग तिरते चले जाना है

प्रेम में होना
घने अंधकार में दीपक का
सिर उठाकर जलते चले जाना है

प्रेम में होना
बर्फीले पहाड़ के पथरीले सीने को
बिना बताए धीरे से फोड़कर
हरियाली बन निखर जाना है

प्रेम में होना
सारसों के जोड़े की उड़ान-सा है
जहाँ अपने पंखों के बल उड़ते हुए भी
लगता है कि उड़ रहे हैं
किसी अपने के सहारे

प्रेम में होना
सृष्टि की संपूर्ण सुगंध में
धीरे से समा जाना है
उसी का होकर रह जाना है

प्रेम में होना
असल में यदि खोना है
तो उस खोने में ही
सबकुछ का होना है।

प्रेम-बोध

जिनकी आँखें सुंदर हैं
जरूरी नहीं
कि वे सुंदर ही देखें
जिनकी आँखें सुंदर हैं
जरूरी नहीं
कि उनके हृदय में भी हो
सुंदरता का साम्राज्य

अपने-अपने सौंदर्यबोध हैं
अलग-अलग साँचों में
युगों से पिस रहा है
प्रेम-बोध।

साअ
गाँव-लंघू, डाकघर-गांधीग्राम
तह.-बैजनाथ,
काँगड़ा-१७६१२५ (हि.प्र.)
दूरभाष : ९४१८१९३०२४

यमराज की व्यथा

• प्रदीप सिंह गुसाईं

मृत्यु के देवता यमराज अपने माता-पिता के घर में आराम कर रहे थे, जब उन्हें भगवान् शिव से एक अति आवश्यक संदेश मिला, "एक अंतरिक्ष यान, जो अभी-अभी पृथ्वी से चला है, में एक आदमी के दिन पूरे हो चुके हैं।"

यमराज मन-ही-मन बड़बड़ाए। हाल ही में उनका काम और भी कठिन होता जा रहा था। अब उन्हें एक अंतरिक्ष यान का पीछा करना था, वह भी भैंसे पर!

उन्होंने आत्मा को पकड़ने के लिए अपने एक हाथ में पाश और दूसरे में अपने रास्ते में आने वाली किसी भी कठिनाई से लड़ने के लिए गदा पकड़ी। उन्होंने आकाश में आग के विशाल गोले को पार किया, जो उनके पिता सूर्य देवता थे। वे चारों ओर रोशनी और गरमी फैला रहे थे।

शीघ्र ही वे स्लेटी रंग के बुध ग्रह को पार कर गए। फिर वे एक भूरे लेकिन छोटे से चमकीले ग्रह के पास पहुँचे। उन्हें ऐसा प्रतीत हुआ कि यह पहले ग्रह की तुलना में धीमी गति से और विपरीत दिशा में घूम रहा है। यह शुक्र ग्रह था। वह जैसे ही नीले ग्रह पृथ्वी के पास पहुँचे अंतरिक्ष यान भी उसी समय आकाश में प्रकट हुआ।

यमराज एक अंतरिक्ष यान का पीछा करते हुए दयनीय और हास्यास्पद लग रहे थे। उनके भैंसे का रंग अंतरिक्ष के अँधेरे जैसा था। उस पर काले और डरावने विशाल यमराज को देखकर यह निर्णय करना मुश्किल था कि कौन अधिक काला या कुरूप है।

ऐसा नहीं कि यमराज हमेशा से ऐसे ही थे।

एक समय वह सबसे सुंदर देवता थे। वे अभिमानी और घमंडी हो गए। वे अपने कर्तव्य की उपेक्षा करने लगे। कुछ समय तक पृथ्वी पर लोग सुख से रहे। फिर पृथ्वी पर जनसंख्या अधिक होने लगी। वृद्ध, अशक्त और बीमार लोगों की जनसंख्या में वृद्धि हो गई। भोजन और पानी दुर्लभ हो गया। भगवान् शिव क्रोधित हो गए और उन्होंने यमराज को दंडित करने के लिए सिर पर सींग और राक्षस रूप दे दिया। यमराज ने बहुत प्रार्थना की कि उनका पुराना रूप वापिस मिल जाए। लेकिन शिवजी नहीं माने। यमराज ब्रह्माजी के पास गए, लेकिन वे व्यस्त थे। वह भगवान् विष्णु के पास गए। वह भी व्यस्त थे। फिर उन्होंने घोर तपस्या की। भगवान् विष्णु ने उससे पूछा कि वह क्या चाहते हैं?

"कृपया मुझे मेरा पिछला रूप वापस दे दें।" उन्होंने विनती की।

"केवल भगवान् शिव ही ऐसा कर सकते हैं, क्योंकि उन्होंने ही तुम्हें ऐसा बनाया है। फिर भी मैं तुम्हें सींगों से छुटकारा दे देता हूँ और उन्हें एक जानवर पर लगा देता हूँ, जो तुम्हारी सवारी बन जाएगा।"

भारतीय विदेश सेवा से सेवानिवृत्ति के बाद लेखन में रत। अब तक 'वी द पीपुल ऑफ भारत' (कथेतर) तथा 'इंटेंगल्ड सोल्स' (लंबी कविता) तथा कविता और कहानियाँ पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित। राष्ट्रीय निबंध प्रतियोगिता में प्रथम पुरस्कार प्राप्त।

यमराज ने यह सोचकर अपने मन को मना लिया कि मरते हुए व्यक्ति को इससे कोई फर्क नहीं पड़ता कि यमराज सुंदर हैं या भयानक। उन्होंने पाया कि जब वह उनके पास आते थे तो बहुत से लोग डर के मारे ही मर जाते थे। इससे एक तरह से उनका काम ही आसान हो जाता था।

फिर भी वे भगवानों की त्रिमूर्ति से असंतुष्ट ही रहे। वे अब भी दुनिया को पुराने तरीके से चला रहे थे।

उन्होंने सोचा, मेरी सवारी ही ले लो। मैं इस पर कारों, पानी और हवाई जहाजों तथा लड़ाकू विमानों का पीछा कैसे कर सकता हूँ। लेकिन भगवान् शिव अभी भी अपनी सवारी के रूप में एक बैल का उपयोग करते हैं। देवी पार्वती एक शेर, उनके पुत्र गणेश एक चूहा और कार्तिकेय एक मोर का उपयोग करते हैं। भगवान् ब्रह्मा एक हंस का उपयोग करते हैं और भगवान् विष्णु एक बाज का उपयोग करते हैं। यह आधुनिक ब्रह्मांड को चलाने का कोई तरीका नहीं है।

वे लाल ग्रह मंगल के पास से गुजरे। फिर वे तीव्र गति से अपनी ओर आने वाले विशालकाय चट्टानों के जंगल में फँस गए। इधर-उधर मुड़-तुड़कर उन्होंने किसी तरह अपने को बचाया। फिर भूरे रंग का एक विशाल ग्रह आया, जिसके कई चंद्रमा थे। यह बृहस्पति था, जो कि अब तक के ग्रहों की तरह ठोस नहीं था। अगले सभी ग्रह भी गैसीय थे—शनि, अरुण और वरुण। शनि अपने चारों ओर वलयों और अनेक चंद्रमाओं के साथ सबसे सुंदर था। यह यमराज का भाई था और अपनी बुरी नजर के लिए प्रसिद्ध था। अरुण का रंग नीला-हरा था, लेकिन शुक्र की तरह वह भी विपरीत दिशा में सूर्य की परिक्रमा करता था। आखिरी ग्रह पृथ्वी की तरह नीला था।

कुछ समय के लिए, रास्ते में कुछ भी नहीं था सिर्फ घुप अँधेरे के। फिर वे एक बार और छोटे-बड़े पहाड़ों जैसी चट्टानों के बीच फँस गए। ये बर्फ की तरह ठंडी थीं। कुछ तो बड़ी तेजी से ग्रहों की तरफ दौड़ रही थीं। इनमें से एक तो इतनी बड़ी थी कि यमराज को लगा कि यह नवाँ ग्रह है।

यमराज के पास सौरमंडल की सुंदरता का आनंद लेने का समय

नहीं था। अंतरिक्ष यान प्रकाश से भी अधिक गति से आगे बढ़ रहा था। यमराज भगवान् द्वारा निर्धारित गति के सार्वभौमिक नियम को नहीं तोड़ सकते थे। उन्होंने भगवान् को संदेश भेजा, "वे प्रकाश से भी तेज चल रहे हैं। मैं आपके द्वारा निर्धारित गति सीमा को नहीं तोड़ सकता।"

"मैंने कोई गति सीमा निर्धारित नहीं की है। वह सीमा भौतिक संसार के लिए है। मानसिक जगत् के लिए नहीं। विचार की गति से चलो। इसकी कोई सीमा नहीं है।"

यमराज अंतरिक्ष यान के पास पहुँचे और उसमें प्रवेश कर गए। वह बिल्कुल ठीक समय पर पहुँचे थे।

एक दिन पहले उनके साथ कुछ ऐसा हुआ था—यमराज राजमार्ग के किनारे खड़े थे। वे राजमार्ग के किनारे, धूप में, वायु से भी तेज आते-जाते वाहनों की कर्ण-कटु आवाजों में इंतजार कर रहे थे। उनका भैंसा भी बार-बार बिदक रहा था। वह अपनी बाईं ओर नजर दौड़ाते हैं। दूर उन्हें फूलों से सजाई एक बड़ी कार नजर आती है। वह उसके अंदर नजर डालते हैं। उसमें दूल्हा-दुलहन बैठे हैं, जो अपने भविष्य के सपनों को सजाने में लगे हैं। दूल्हा के माँ-बाप सारी रात जगे होने की थकान से बार-बार झपकी ले रहे हैं। दूल्हे का बारह साल का भाई और नौ साल की बहन शादी में उनको मिले उपहारों और नोटों को बार-बार टटोल रहे हैं और मिठाई के डब्बे से मिठाई खा रहे हैं। दूल्हे का अभिन्न मित्र कार चला रहा है।

यमराज अपनी दाईं ओर देखते हैं। उधर से एक लंबा और बड़ा ट्रक, जिसे मनुष्य लोग कंटेनर कहते हैं और वाहनों से होड़ सी लगाते हुए तेज गति से आ रहा था। एक सरदारजी उसको चला रहे थे और बगल में उनका सहायक बैठा हुआ चालक से अपने मालिक की पत्नी के विषय में कुछ अनर्गल और अश्लील बातें कर रहा था। अभी कुछ भी देर नहीं हुई होगी कि सरदारजी का मोबाइल बज उठता है। वे उसको उठाते हैं और किसी से जोर-जोर से पूरे हाव-भावों के प्रदर्शन से बातें करने लगते हैं। गाड़ी के चक्के को सँभाले उनका अकेला हाथ फिसलता है और कंटेनर राजमार्ग के बाईं ओर मुड़कर फूलों की पंक्ति को रौंदता हुआ शादी की कार को पिचकाता हुआ उसके ऊपर पलट जाता है। तीव्र गति से आती हुई अन्य कारें भी टकरा कर पलट जाती हैं।

यमराज जानते हैं कि उनका काम बचाना नहीं है। वे बचा भी नहीं सकते हैं। वह जानते हैं कि उनको किस-किसके प्राणों को अपने साथ ले जाना है। शादी की कार में कोई नहीं बचा था। कंटेनर का सहायक बच गया था। बाकी वाहनों में कम-से-कम दस लोगों के प्राण उन्हें अपने साथ लेने थे। कुछ के प्राण वह फिर अस्पताल जाकर लेंगे।

यमराज एक क्षण के लिए सिर पकड़कर बैठ गए। उन्होंने महाभारत जैसे महायुद्ध देखे थे। वहाँ वह प्रतिदिन लाखों लोगों के प्राण हरते थे। लेकिन वह कुछ अलग था। वीर अपने प्राणों को हाथों में लेकर ही युद्धक्षेत्र में उतरते थे और भी लोग मरते थे। कुछ बुढ़ापे से, कुछ बीमारी से। पर वह सब कर्मों का खेल था। कुछ पूर्व जन्म के, कुछ इस जन्म के। उनमें कार्य-कारण-परिणाम का कुछ तो संबंध था। पर एक साथ ही तीन पीढ़ियों का समूल नाश, वह भी अजीब से कारण से!

आजकल यमराज का कार्य कुछ इसी तरह की मौतों से भारी और बोझिल हो गया था।

दुर्घटना में घायल लोगों के पीछे-पीछे यमराज अस्पताल पहुँचे। उनका एक मुख्य काम अस्पतालों के चक्कर लगाना भी था। मरने वालों की एक बड़ी तादात वहाँ भी होती थी। राजमार्ग से लाए गए तीन लोगों की तो रास्ते में ही मौत हो गई थी। चार लोग तो ऐसे थे, जिनकी यमराज की नजरों में मौत हो गई थी और उनके प्राण पहले ही यमराज के पास थे। पर न जाने क्यों, डॉक्टर उनके परिवार वालों से कह रहे थे कि उन्हें अभी बचाया जा सकता है। अस्पताल में स्वयं यमराज को भी कभी-कभी यह शंका हो जाती थी कि मरीज के प्राण हरने का समय आ गया है या नहीं। कभी-कभी तो जब यमराज किसी के प्राण हर भी लेते थे, व्यक्ति के दिल की धड़कनें भी बंद हो जाती थीं और साँसों का सिलसिला भी टूट चुका होता था, डॉक्टर उसे कृत्रिम साँस और धड़कनों के सहारे जिंदा रखे रहते थे और फिर कुछ ऐसे लोग भी थे, जो घर से तो लगभग भले चंगे ही आते थे, पर एक सुई के बाद ही दम तोड़ देते थे। ऐसे मौकों पर यमराज को जल्दी-जल्दी प्राण लेने दौड़ना पड़ता था। सबसे ज्यादा जल्दी तो तब करनी पड़ती थी, जब कोई जवान और स्वस्थ लड़का या लड़की बैठे हुए ही या खड़े-खड़े ही दम तोड़ देता था। लोग कहते थे कि उसको दिल का दौरा पड़ गया था।

यमराज भगवान् से कहते, "क्या आपको भी मालूम नहीं होता कि वह व्यक्ति जिंदा रहेगा या मरेगा, जो मुझे बेकार में दौड़ा देते हो, कभी देरी करवा देते हो? ऐसा तो पहले कभी नहीं होता था।"

भगवान् सिर्फ मुसकरा देते!

अस्पतालों के चक्कर यमराज को दु:खी कर देते। ज्यादातर मरीज वह होते थे, जो बुढ़ापे से, कमजोरी से या गरीबी से मर रहे होते थे। अस्पताल की दवाइयाँ, माहौल और निराशा उन्हें और भी मार देते थे। जब कोरोना की बीमारी फैली तो रोगी नितांत अकेले, सारे परिवार रिश्ते-नातेदारों से दूर अकाल मृत्यु मर जाते थे। उनका पार्थिव शरीर भी दाह-संस्कार के लिए उनके परिवार को नहीं दिया जाता था।

यमराज रोते-रोते भगवान् के पास जाते—"कम-से-कम मुझे इनके प्राण हरण के लिए मत भेजिए।"

"जिनको सबने छोड़ दिया, बीमारी ने जिन्हें सबसे छुड़वा दिया, उन्हें तुम भी छोड़ना चाहते हो?"

"भगवन्, आपने भी क्या नए-नए मौत के तरीके निकाले हुए हैं। कल ही एक लड़की का उसके ही बाप ने गला काट दिया, क्योंकि वह किसी लड़के से प्यार करती थी। एक बाप ने अपनी पत्नी और बच्चों तथा फिर स्वयं को भी गरीबी की वजह से मार डाला। भाई-भाई सिर्फ वाहन खड़ा करने की जगह के लिए एक-दूसरे पर गोली चला दे रहे हैं। प्रेमिका अगर अपने प्रेमी को छोड़ दे रही है तो वह उसको गोली मार दे रहा है। संतानें धन-संपदा के लिए अपने माता-पिता को मार रही हैं। धर्माचार्य, राजनेता और हर समर्थ व्यक्ति लोगों का शोषण कर रहा है और उन्हें आपस में लड़ाकर मरवा रहा है। अब तो ऐसी हालत हो गई

है कि बच्चे-बच्चियाँ स्कूल में शांति से पढ़-लिख रहे हैं, हँस-खेल रहे हैं कि उन्हीं में से एक अपने बैग से पिस्तौल निकालता है और वास्तविक-काल्पनिक कारणों से उन्हें गोलियों से भून देता है। लोग भीड़-भाड़ में खुशी-खुशी कोई त्योहार मना रहे हैं और उन्हीं में से एक नारा लगाते हुए विस्फोटकों से खुद को और अपने साथ-साथ सैकड़ों लोगों को भी मौत के घाट उतार देगा। ऐसी अकस्मात् मौतों पर मुझे बिना किसी पूर्व सूचना के जल्दबाजी में भागना पड़ता है।

"पहले लोग समझते थे कि मैं किसी की मृत्यु का कारण नहीं होता। असली कारण तो उनके कर्म होते हैं। मैं तो बस मरने के बाद उनके प्राणों को हरता हूँ, ताकि वे अपने कर्मों का फल भोग सकें और फिर पृथ्वी पर जन्म ले सकें। लेकिन आजकल तो लोगों ने मुझे ही मृत्यु का देवता बना दिया है!

संतानें धन-संपदा के लिए अपने माता-पिता को मार रही हैं। धर्माचार्य, राजनेता और हर समर्थ व्यक्ति लोगों का शोषण कर रहा है और उन्हें आपस में लड़ाकर मरवा रहा है। अब तो ऐसी हालत हो गई है कि बच्चे-बच्चियाँ स्कूल में शांति से पढ़-लिख रहे हैं, हँस-खेल रहे हैं कि उन्हीं में से एक अपने बैग से पिस्तौल निकालता है और वास्तविक-काल्पनिक कारणों से उन्हें गोलियों से भून देता है। लोग भीड़-भाड़ में खुशी-खुशी कोई त्योहार मना रहे हैं और उन्हीं में से एक नारा लगाते हुए विस्फोटकों से खुद को और अपने साथ-साथ सैकड़ों लोगों को भी मौत के घाट उतार देगा।

"भगवन्! आप नहीं जानते किसी की मौत का इंतजार करना कितना दारुण होता है। वह भी तब, जब एक क्षण तो वह हँसता-खेलता जीवन का आनंद ले रहा होता है और अगले ही क्षण उसके शरीर के छितरे उड़े हुए होते हैं। अस्पताल में मृतप्राय लोगों की अंतिम साँस और धड़कन का इंतजार करना कितना दु:ख भरा है। पहले लोग इस तरह सड़कों, अस्पतालों, बाजारों और स्कूलों में नहीं मरते थे।"

यमराज को अन्य समय और स्थानों पर भी समस्याओं का सामना करना पड़ रहा था।

युद्धों ने उन्हें जमीन और हवा में व्यस्त कर दिया। हवाई लड़ाइयों में आत्माओं को इकट्ठा करना कठिन था। मृत्यु के ठीक समय पर यमराज को आकाश में उड़कर आत्माओं को वापस लाना पड़ा। जब परमाणु बम गिराए गए, तो वह यमराज और उनकी टीम के लिए सबसे कठिन समय बन गया। एक ही पल में एक लाख से ज्यादा लोगों की मौत हो गई।

बेशक, यमराज के पास एक समर्पित टीम थी। लेकिन अब वे सीमा तक खिंच गए थे। ऐसी दुनिया में, जहाँ मृत्यु के कारण दूरस्थ और दूर से ही नियंत्रित थे, आत्माओं को ठीक समय पर पकड़ना लगभग असंभव सा हो गया था। भगवान् कोई ऐसी विधि क्यों नहीं बनाते, जिससे आत्माएँ अपने कर्मों के अनुसार स्वर्ग या नर्क और अगला जीवन पाने के लिए स्वत: ही चित्रगुप्त के पास चली जाएँ।

आजकल उनका काम बहुत बढ़ गया है। वह इस बारे में भगवान् से ज्यादा शिकायत नहीं कर सके। लेकिन उनकी शिकायत कुछ और थी। अब काम में कोई मजा नहीं था। ऐसा नहीं था कि उनका काम कोई मजेदार था। उन्हें किसी की जान लेने में कोई आनंद नहीं आता था। परंतु परमेश्वर कहते थे कि ऐसा करना उनका कर्तव्य है। उनका कार्य जन्म देने जितना ही महत्त्वपूर्ण है। यदि लोग नहीं मरते तो पृथ्वी पर जीवन असहनीय हो जाता।

यमराज काफी समय से मौत के काम को आधुनिक रूप देना चाह रहे थे। उन्होंने देवताओं की त्रिमूर्ति के साथ इस मामले पर चर्चा भी की, लेकिन वे दुनिया के नियमों को बदलना नहीं चाहते थे। जिन लोगों की उन्होंने जान ली, वे उनकी समझ से बहुत आगे बढ़ चुके हैं। वे डिजिटल हो गए थे। हर चीज के लिए उनके पास एक डेटाबेस था। फिर भी परमेश्वर ने उन्हें मनुष्यों की मृत्यु की तारीखों और समय का डेटाबेस उपलब्ध नहीं कराया। कभी-कभी उन्हें संदेह होता था कि भगवान् को भी पहले से विवरण पता होता भी है या वे सिर्फ अपनी सनक के अनुसार निर्णय लेते थे। यही वजह थी कि उन्हें आखिरी वक्त पर मौत की जानकारी मिलती थी।

आखिर में हिम्मत करके यमराज अपना त्याग-पत्र लेकर विष्णु भगवान् के पास पहुँच गए।

"यमराज, क्या तुम जानते हो, तुम्हारा दूसरा नाम क्या है?"

"धर्मराज, भगवान्।"

"और धर्म क्या है?"

"अपने कर्तव्य का पालन करना।"

"तो फिर?"

"महाराज! फिर मुझे ही इस दारुण काम में क्यों लगा रखा है। प्राणों को आपके पास लाने की क्या जरूरत है?"

"यमराज! अगर मैंने प्राणों को यों ही पृथ्वी पर भटकने दिया तो फिर वे अपने लिए शरीर ढूँढ़ेंगे। वे कम प्राणशक्ति वाले जिंदा शरीरों, सद्य:मृत शरीरों, यहाँ तक कि जानवरों के शरीरों में भी प्रवेश कर जाएँगे। वे एक-दूसरे को ऐसे ही मारते रहेंगे। यहाँ तक कि जानवर भी, जो सिर्फ भोजन के लिए और अपनी प्राणरक्षा के लिए आक्रमण करते हैं, तब बेमतलब ही हिंसक हो जाएँगे।

"क्या तुम समझते हो कि बाकियों का काम सरल है? ब्रह्मा बार-बार सृष्टि का सर्जन करते हैं, मैं उसका पालन-पोषण करता हूँ, लेकिन शिव फिर उसका विनाश कर देते हैं। लेकिन फिर भी हम अपना कर्तव्य निभाते रहते हैं। बाकी देवी-देवता भी ऐसा ही करते आए हैं। तुम अपने ही पिताश्री को देख लो। दिन-रात आकाश में घूमते रहना सरल है क्या?"

"फिर क्या उपाय है?"

"देखो, कलयुग के बाद महाप्रलय तो होनी ही है। फिर सत्ययुग आएगा और सब चीजें अपने-आप ठीक हो जाएँगी। तब तक धैर्य रखो।"

"जो आज्ञा, भगवन्!" यमराज ने व्यथा भरी आवाज में कहा।

साअ

१९०-ए १ (तीसरी मंजिल)
गौतम नगर-११००४९, नई दिल्ली
दूरभाष : ९८१००४६४४१

नया सवेरा आएगा

● **कमलेंद्र कुमार श्रीवास्तव**

सुपरिचित लेखक। एम-एस.सी., बी.एड., पी-एच.डी.। विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में रचनाएँ प्रकाशित। कॅरियर आलेख, बाल साहित्य विधा में लेखन। संप्रति शासकीय शिक्षक।

प्रेरणा गीत

आओ साथी साथ चलें,
ले हाथों में हाथ चलें।

माना मंजिल दूर सही है,
पथ में काँटे पड़े हुए।
राह नहीं आसान हमारी,
पर्वत पथ में अड़े हुए।
नहीं डरे हैं, नहीं डरेंगे,
आओ पर्वत पार चलें।
आओ साथी साथ चलें॥

पथरीली इन राहों में हम,
मिलकर फूल बिछाएँगे।
राह बने आसान हमारी,
पथ को हम महकाएँगे।
नहीं थके हैं नहीं थकेंगे,
फूलों जैसे खूब खिले।
आओ साथी साथ चलें॥

माना काली रात सही है,
नया सवेरा आएगा।
फैलेगा हर जगह उजाला,
हार अँधेरा जाएगा।
नहीं रुके हैं, नहीं रुकेंगे,
आओ साथी हिले-मिलें।
आओ साथी साथ चलें॥

माँ

माँ की याद बहुत आती है।
बचपन में ही मुझे छोड़कर
पापा जाने कहाँ गए हैं।
चमक रहे जो तारे अनगिन
माँ कहती वे वहाँ गए हैं।
देख रहे हैं तुमको पापा
हौले-हौले सहलाती है
माँ की याद बहुत आती है॥

माँ भी अब तारा बनकर के
मुँह मुझसे क्यों मोड़ गई।
साथ मिला पापा का जब,
वह मुझे अकेला छोड़ गई है।
तारों में हँसकर वह जैसे
पारियों जैसी मुसकाती है।
माँ की याद बहुत आती है॥

साथ गरीबी में रहकर के
साथ अमीरी में अब छोड़ा।
दुःख में साथ रही हो मेरे
सुख में तुमने क्यों मुँह मोड़ा।
जब मैं सोता हूँ तो लगता
माँ जैसे लोरी गाती है।
माँ की याद बहुत आती है॥

मेले में

पायल गीता और सुनीता
के संग जाते मेले में।
लड्डू बर्फी रबड़ी मीठी,
हम सब खाते मेले में।

चाट पकौड़ी, दही जलेबी,
हम सब पाते मेले में।
गोल-गोल हम झूला झूलें,
हँसते गाते मेले में।
बुलबुल, बॉबी, गुल्लो, गुड़िया
धूम मचाते मेले में।
मैकू भैया, छोटू चाचा,
गीत सुनाते मेले में।

जीतू दादा, छेनू काका,
खेल खिलाते मेले में।
प्यार लुटाते, नेह जताते,
खूब हँसाते मेले में।

मेरे पापाजी

कितने अच्छे कितने सच्चे,
मेरे पापाजी।
कितने न्यारे कितने प्यारे,
मेरे पापाजी।

हाथी, बंदर, काला कौआ
वह लाते गुड़िया प्यारी।
खेल खिलौने प्यारे प्यारे,
माने हर बात हमारी।
रहे सदा वह पास हमारे,
मेरे पापाजी।
कितने सच्चे कितने अच्छे,
मेरे पापाजी।
काजू कतली और इमरती
गोल गोल रसगुल्ला।
दही जलेबी खूब खिलाते,
किए बगैर कोई हल्ला।
लाएँगे वह चाँद सितारे,
मेरे पापाजी।
कितने सच्चे कितने अच्छे,
मेरे पापाजी।

नानी के घर खूब घुमाते,
मेला वह ले जाते हैं।
चिड़ियाघर और सर्कस में हम
जमकर धूम मचाते हैं।
हमसब उनके रहे सहारे,
मेरे पापाजी।
कितने सच्चे कितने अच्छे,
मेरे पापाजी।

पथ के काँटे दूर हटाकर
फूल बिछा वह देते हैं।
हर मुश्किल आसान बनाकर,
चिंता सब हर लेते हैं।
नहीं किसी से वह हैं हारे,
मेरे पापाजी।
कितने सच्चे कितने अच्छे,
मेरे पापाजी।

बाबा का हर कहना माने,
और दादी को सम्मान।
चाचा को हरदम प्यार करें,
छिड़कें ताऊ पर जान।
अपने पापा के राजदुलारे,
मेरे पापाजी।
कितने सच्चे कितने अच्छे,
मेरे पापाजी।

रावगंज, कालपी,
जिला जालौन-२८५२०४ (उ.प्र.)
दूरभाष : ९७५१३१८१३८

वर्ग पहेली (२१५)

अगस्त २००५ अंक से हमने '**वर्ग पहेली**' प्रारंभ की, जिसे ज्ञान-विज्ञान की अनेक पुस्तकों के लेखक **श्री विजय खंडूरी** तैयार कर रहे थे; उनके देहावसान के उपरांत अब **श्री ब्रह्मानंद खिच्ची** इसे तैयार कर रहे हैं। हमें विश्वास है, यह पाठकों को रुचिकर लगेगी; इससे उनका हिंदी ज्ञान बढ़ेगा और पूर्व की भाँति वे इसमें भाग लेकर अपना ज्ञान परखेंगे तथा पुरस्कार में रोचक पुस्तकें प्राप्त कर सकेंगे। भाग लेनेवालों को निम्नलिखित नियमों का पालन करना होगा—

१. प्रविष्टियाँ छपे कूपन पर ही स्वीकार्य होंगी।
२. कितनी भी प्रविष्टियाँ भेजी जा सकती हैं।
३. प्रविष्टियाँ ३१ मार्च, २०२४ तक हमें मिल जानी चाहिए।
४. पूर्णतया शुद्ध उत्तरवाले पत्रों में से ड्रॉ द्वारा दो विजेताओं का चयन करके उन्हें तीन सौ रुपए मूल्य की पुस्तकें पुरस्कारस्वरूप भेजी जाएँगी।
५. पुरस्कार विजेताओं के नाम-पते मई २०२४ के अंक में छापे जाएँगे।
६. निर्णायक मंडल का निर्णय अंतिम तथा सर्वमान्य होगा।
७. अपने उत्तर '**वर्ग पहेली**', **साहित्य अमृत, ४/१९, आसफ अली रोड, नई दिल्ली-२** के पते पर भेजें।

वर्ग पहेली (२१३) का शुद्ध हल

१ न	२ व	३ व	४ र्ष	■	६ दे	७ वा	८ ल	९ य
१० ज	ह	न	■	■	११ हा	र	■	व
१२ रि	म	■	१३ प्र	१४ पा	त	■	१५ बि	क्री
या	■	१६ स्व	भा	व	■	१७ द	वा	त
■	१८ नि	जा	त	■	१९ भ	ला	ई	■
२० प	रा	त	■	२१ के	र	ल	■	२२ म
२३ र	ई	■	२४ स	त	त	■	२५ मि	स
वा	■	२६ क	ला	■	■	२७ व	त	न
२८ ह	म	द	म	■	ध	२९ न्य	वा	द

★ पुरस्कार विजेता ★

१. **डॉ. पी.के. राधामनी**
धन्या, किलियानद रोड,
कोझीकोड-६७३००१ (केरल)
दूरभाष : ८५४७०६६८७८

२. **श्री हरिदेव सिंह धीमान्**
धीमान् गृहम् बरोली
डाकघर-दानावली, तह.-ननखरी
जिला-शिमला-१७२०२१ (हि.प्र.)
दूरभाष : ९८१७२१६३५५

पुरस्कार विजेताओं को हार्दिक बधाई।

वर्ग-पहेली २१३ के अन्य शुद्ध उत्तरदाता हैं— सर्वश्री बाल कुमार, शशि कुमार, विजयपाल सेहलंगिया, संतलाल रोहिल्ला, पवन कुमार अहरोदिया, अंकिता (महेंद्रगढ़), रुक्मणी संगल (पटियाला), प्रह्लाद गोस्वामी (कोटा), वाई.के. श्रीवास्तव (जबलपुर), विनीता सहल (मुंबई), जेंसी.ए. (चैन्नई), संदीप लोढ़ा (उदयपुर), फकीरचंद ढुल (कैथल), अमरदेव आंगिरस (दड़लाघाट), आनंद कृष्ण (बेंगलुरु), रामफल पटेल (सिंगरौली), रामकिशन पंवार (हनुमानगढ़), राजेंद्र कुमार, प्रदीप कुमार, सुभाष शर्मा, दिनकर सहल (दिल्ली)।

बाएँ से दाएँ—

१. आपको···मुबारक (२)
३. प्रेमचंद का एक उपन्यास (४)
६. बहुत बड़ी दावत (४)
७. दुष्ट, अधम, लुच्चा, नीच (२)
८. खून, रक्त (२)
१०. एक प्रसिद्ध संत गुरु (४)
१५. चालीस वस्तुओं का समाहार (३)
१६. बहस, तर्क (२,३)
१८. साक्षी, साखी (३)
१९. सोना, कमल, ताँबा, धतूरा (४)
२२. यहाँ की होली प्रसिद्ध है (२)
२४. पतला लसदार थूक (२)
२६. ऊँचा-नीचा, क्रम भंग, गोलमाल (४)
२८. फिदा होना (मुहा.) (२,२)
२९. दीमकों का भीटा, साँप का बिल (२)

ऊपर से नीचे—

१. छात्रावास (३)
२. घी, तेल में तर रुई या कपड़ा (२)
३. चचेरा, ममेरा, फुफेरा भाई (३)
४. भोजन की इच्छा, क्षुधा (२)
५. सुशील, प्यार-मोहब्बत वाला (५)
९. स्वर्ग की अप्सरा, परी (२)
११. शादी, दांपत्य सूत्र में बँधना (३)
१२. एक चर्म रोग (२)
१३. सूर्य, दिनकर (३)
१४. हलका ओढ़ना, पिछौरी (३)
१५. होली पर प्रयुक्त रंगीन सूखा चूर्ण (२,३)
१७. बायाँ, विरुद्ध, सुंदर, प्रिय (२)
२०. धैर्य, संतोष (२)
२१. नाटा, छोटे कद का, बौना (३)
२३. एक कुंडलाकार मिठाई (३)
२५. रटने वाला (२)
२७. अच्छा हो कि, किंतु (२)

वर्ग पहेली (२१४) का हल अगले अंक में।

वर्ग पहेली (२१५)

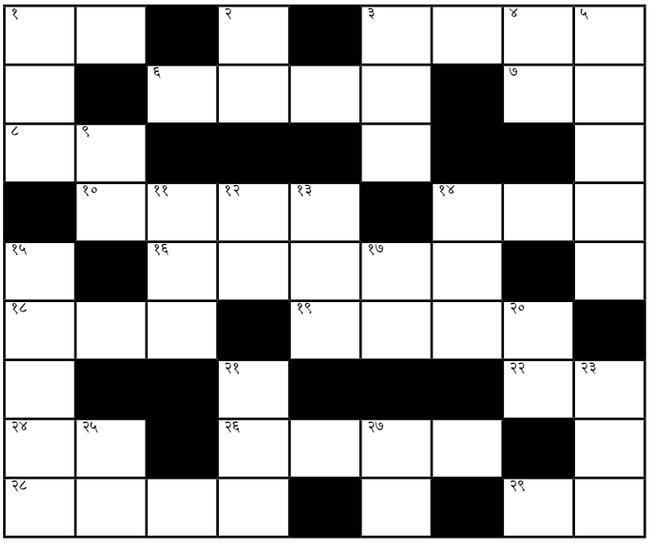

प्रेषक का नाम : .....

पता : .....

.....

.....

दूरभाष : .....

पाठकों की प्रतिक्रियाएँ

'साहित्य अमृत' का फरवरी अंक वीणावादिनी की आराधना और मधु मास का स्वागत करता मोहक अंक है। जहाँ एक ओर लब्ध-प्रतिष्ठ कवियों की रचनाएँ रससिक्त करती हैं, वहीं अन्य रचनाएँ भी प्रभावित करती हैं। संपादकीय में कृत्रिम मेधा एआई के बढ़ते प्रयोग के प्रति सजग रहने की आवश्यकता पर बल दिया है। अमरीकी कहानी 'स्वीटनेस' में सभ्य, सुविकसित कहे जानेवाले समाज में रंगभेद की पीड़ा, त्रासदी का मार्मिक चित्रण है। तारो सिंदीक की कहानी 'हैप्पी न्यू ईयर' बहुत अच्छी, बिल्कुल अपने मन की बात सी लगी। 'तीसरे पहर की धूप' के अवसाद, अकेलेपन, रोगग्रस्त दुर्बल काया से जूझते रहने की विवशता को 'दो बूढ़े', 'घोंघे', 'दूरभाष' कहानियों में मार्मिकता से चित्रित किया गया है। लघुकथा में 'वंदे मातरम्' अच्छी लगी। पत्रिका में स्थान पाना मुझे आह्लादित करता है। मेरे 'बाल गीत' को स्थान देने के लिए आभार। वर्ग पहेली जब सुलझ जाती है तो बड़ा मजा आता है।

—माला श्रीवास्तव, ग्रेटर नोएडा (उ.प्र.)

'साहित्य अमृत' फरवरी अंक मिला। उपकृत हूँ इस निस्स्वार्थ उपहार के लिए। 'साहित्य अमृत' के सभी अंक कुछ-कुछ विशेषताएँ लिये रहते हैं। 'नकली बनाम असली' और 'मानवता के आँसू' संपादकीय चिंतनपरक है। मिथकीय प्रयोगों के प्रयोक्ता अवध नारायण मुद्गल की प्रतिस्मृति-स्वरूप अभिव्यक्ति स्मरणीय है। 'बँटवारा' (सुनीता राजीव) बड़ी मार्मिक कथा है, आज की भाषा जादूगरी में उलझी नहीं। 'विनम्र संवेदन' कहानी भी दिलकश है। वरिष्ठ कवि बी.एल. आच्छा की कविता के कथ्य-कथन का अभिव्यंजन-प्रतिबिंबन कालानुकूल है। 'धरती के गर्भ में' सहज भावनाएँ अपना-अपना महत्त्वपूर्ण अर्थ-अभिप्राय लिये हैं। 'मन का विच्छेदन' ललित-निबंध आत्मीयता और वैयक्तिकता का वैशिष्ट्य लिये है। 'जन-जन की आस्था के केंद्र : श्रीराम' (धीरेंद्र प्रसाद सिंह) लेख वैचारिक कोटि का है। 'गंगासागर एक बार' (प्रेमपाल शर्मा) यात्रा-संस्मरण मानसिक यात्रा कराता हुआ, नई दिल्ली से गंगासागर तक की रमणीयता की झाँकी भी प्रस्तुत करता है। इसमें इतिहास, समाज, परिवेश, पौराणिक प्रसंग और उनकी कथात्मक घटनाओं होना इसकी समग्रता की खास खूबी है। अछूती रचना 'स्वीटनेस' के प्रकाशन के लिए साधुवाद।

—डॉ. राहुल, नई दिल्ली

'साहित्य अमृत' का श्रीराम विशेषांक भारतीय सनातन संस्कृति का अभिनव शंखनाद है। मर्यादा पुरुषोत्तम राम का अप्रतिम शील-सौष्ठव, अपरिमित आत्मबल, विश्वमंगलकारी करुणामय दिव्य व्यक्तित्व! अवधेशानंद गिरि, कुबेरनाथ राय, नरेंद्र कोहली, अरुण गोविल, कुमार विश्वास, साध्वी ऋतंभरा, हेमंत शर्मा, आशुतोष राणा, बी.वै. ललितांबा, कुमुद शर्मा, नीरजा माधव, सूर्यप्रसाद दीक्षित, नंदकिशोर पांडेय, विद्याविंदु सिंह, मनोज प्रसाद श्रीवास्तव तथा लेखनी से समृद्ध सभी रचनाकारों ने राम को समझाने का व्यापक दृष्टिकोण दिया है। संपादकीय के शीर्षक 'मन मंदिर में राम···' की व्यंजना विलक्षण है। भीतर के रावणत्व को समाप्त करना हो तो मन-मंदिर में राम को बिठाना होगा। वे लोग, जो राम को नहीं जानते या नहीं जानता चाहते, उनके लिए यह विशेषांक ज्ञानचक्षु की तरह है। 'राम को नकारने वालों का रामराज्य' लिखनेवाले गोपाल चतुर्वेदीजी ने 'वर्तमान राजनीति रावण केंद्रित है,' कहकर बहुत कुछ कह दिया है। श्रीराम विशेषांक सांस्कृतिक राष्ट्रधर्म के उन्नायक, मनुष्य योनि में देवत्व के संवाहक ऐसे राम की भावसत्ता को अभिव्यंजित करनेवाला है, जिनकी परम चेतना चिर कल्याणमयी है। मेरी विनम्र सम्मति है कि इस अंक को ग्रंथ रूप में प्रकाशित करने की योजना बने, ताकि रामकाव्य के अध्येताओं, शोधार्थियों को श्रेयस्कर पाथेय मिल सके। सबको साधुवाद!

—ऋता शुक्ल, राँची (झारखंड)

'साहित्य अमृत' का 'श्रीराम विशेषांक' अंक मिला तो मन गद्गद हो गया। २२ जनवरी को श्रीराम की प्राण-प्रतिष्ठा हो गई, ऐसे अवसर (लगभग ५०० वर्ष बाद) पर 'साहित्य अमृत' का यह प्रयास साहित्यिक ही नहीं, धार्मिक और आध्यात्मिक दृष्टि से भी महत्त्वपूर्ण है।

—विजयपाल सेहलंगिया, महेंद्रगढ़ (हरियाणा)

बसंत बिखेरने में अग्रदूत बना 'साहित्य अमृत' का फरवरी अंक का आवरण पृष्ठ। बसंत अंक के मकरंद को शब्दों में ढालूँ तो स+हित+अमृत है यह। संपादकीय पढ़ा; मन को संवेदित कर गया। सच है कि गौ घृत, गुग्गुल, नारियल से आहूत हवन की दिव्य पावन गंध के नाम पर प्रदूषित चलताऊ रूम फ्रेशनर खिड़की वायु को परोसने का प्रयास है। यह सब कला, साधना विद्याओं के गुरुतर व्यक्तित्वों महापुरुषों का मखौल सी अशिष्टता है। ललित-निबंध 'मन का विच्छेदन' से होकर गुजरी। सबसे अहम और महत्त्वपूर्ण तत्त्व की नब्ज पर हाथ रखा है लेखक ने। उनका जैविक, यांत्रिक 'टूल' द्वारा समझाने का प्रयास बड़ा रोचक है।

—विनीता 'देवहूति', वाराणसी (उ.प्र.)

बसंत की छटा बिखेरते हुए आकर्षक मुखपृष्ठ वाला 'साहित्य अमृत' का फरवरी अंक मिला। संपादकीय 'नकली बनाम असली' व 'मानवता के आँसू' प्रेरणादायक है, विचारशील है। सुनीता राजीव की कहानी 'बँटवारा' अंतर्मन को छू जाने वाली है। उपमा शर्मा की कहानी 'घोंघे' कथारस से भरपूर तो है ही, साथ ही आज की पीढ़ी को झकझोरने वाली भी है, जो बुजुर्गों को बेकार समझकर अपने से दूर कर देना चाहते हैं, परंतु उनके चले जाने के बाद उनकी कमी खलती है। साजिद खान की कहानी 'वह महान् बालक' शिक्षाप्रद है। प्रेमपाल शर्मा का यात्रा-संस्मरण '···गंगासागर एक बार' पढ़कर घर बैठे यात्रा का आनंद उठाया। प्रेमलता देवी का आलेख मानव जीवन के लिए बहुत ही महत्त्वपूर्ण बन पड़ा है। कुल मिलाकर यह 'अंक' भी पठनीय व संग्रहणीय है।

—आकृति, मोतिहारी (बिहार)

लोकार्पण संपन्न

५ फरवरी को इंदौर में वरिष्ठ लेखिका डॉ. ममता चंद्रशेखर द्वारा लिखित पुस्तक '७५ महिला स्वतंत्रता संग्राम सेनानी' का लोकार्पण संपन्न हुआ। मध्यभारत हिंदी साहित्य समिति के शिवाजी सभागार में आयोजित लोकार्पण समारोह के मुख्य अतिथि प्रदेश के जल संसाधन मंत्री श्री तुलसीराम सिलावट थे। अध्यक्षता वरिष्ठ पत्रकार श्री कृष्ण कुमार अष्ठाना ने की। विशेष अतिथि देवी अहिल्या विश्वविद्यालय की कुलपति प्रो. रेणु जैन, पूर्व मंत्री सुश्री उषा ठाकुर व मध्य प्रदेश लोकसेवा आयोग के सदस्य श्री कृष्णकांत शर्मा थे।

□

'हमारे हिस्से की छत' कृति लोकार्पित

मध्य प्रदेश राजभाषा प्रचार समिति के तत्त्वावधान में श्री अश्विनी कुमार दुबे के उपन्यास 'हमारे हिस्से की छत' का लोकार्पण संपन्न हुआ। कार्यक्रम की अध्यक्षता मानस भवन के कार्यकारी अध्यक्ष श्री रघुनंदन शर्मा, मुख्य अतिथि 'अक्षरा' के संपादक श्री मनोज कुमार श्रीवास्तव एवं विशिष्ट अतिथि के रूप में श्री सुरेंद्र गोविंद गोस्वामी उपस्थित रहे। संचालन श्री चंद्रभान राही ने किया। श्री गोकुल सोनीजी ने आभार व्यक्त किया।

□

शिल्पी दिवस कार्यक्रम का भव्य आयोजन

१८ नवंबर को तेजपुर, असम में पूर्वोत्तर हिंदी साहित्य अकादमी द्वारा चित्रलेखा उद्यान के खुले आकाश के नीचे असम के महान् मनीषी ज्योतिप्रसाद आगरवाला की ७३वीं पुण्यतिथि के अवसर पर शिल्पी दिवस तथा बहुभाषी कवि सम्मेलन अकादमी की संस्थापक अध्यक्षा श्रीमती रीता सिंह सर्जना की अध्यक्षता में, मुख्य अतिथि श्री नारायण आचार्य, विशिष्ट अतिथि श्री गोपीनाथ बरदलै, नारायण उपाध्याय, श्रीमती मृदुल सहरिया, मुख्य वक्ता श्री भूपेंद्रनाथ हाजरिका व डॉ. सरिता शर्मा में संपन्न हुआ। कवयित्री श्रीमती कुसुम टिबड़ेवाल की 'सरस्वती वंदना' हुई। दूसरे सत्र में बहुभाषी कवि सम्मेलन में बालकवि श्री दिव्यज्योति बरुआ ने बाँसुरी वादन से सभी को मंत्रमुग्ध किया। सर्वश्री बीना देवी, मनीषा पाल, कुसुम टिबड़ेवाल, ऊषाकिरण टिबड़ेवाल, अंजता आचार्य, सैयदा आनोवारा खातून, नीता गुरुंग, नागेश कुमार गुप्ता, सच्चिदानंद सिंह, चित्रप्रसाद पौड़ेल, मंटू बराल, जयंत आचार्य, फिराक गोर्खाली आदि ने कविता पाठ किया। असम के साहित्य, कला, सामाजिक आदि क्षेत्रों में उल्लेखनीय योगदान देनेवाले महानुभावों को विशेष अभिनंदन-पत्र से सम्मानित किया गया—असम के श्री हरिप्रसाद लुइटैल, तेजपुर विश्वविद्यालय की श्रीमती चंद्रप्रभा सैकियानी, केंद्रीय महिला अध्ययन केंद्र की निदेशक डॉ. मधुरिमा गोस्वामी को फुलाम गामोछा, अभिनंदन-पत्र, अकादमी की पत्रिका 'पूर्वोत्तर सृजन' तथा पुस्तक से सम्मानित किया गया। संचालन व धन्यवाद श्री संतोष कुमार महतो ने किया।

□

राष्ट्रीय संगोष्ठी संपन्न

१ फरवरी को कोयंबटूर में आर.वी.एस. कला तथा विज्ञान महाविद्यालय के भाषाई विभाग एवं केंद्रीय हिंदी संस्थान (हैदराबाद केंद्र) के तत्त्वावधान में आयोजित 'दक्षिण भारत का लोक साहित्य' विषय पर राष्ट्रीय संगोष्ठी के मुख्य अतिथि क्षेत्रीय निदेशक डॉ. गंगाधर वानोड़े थे। विशिष्ट अतिथि प्रो. बी.एल. आच्छा ने कहा कि लोक साहित्य जनजीवन की धड़कन है। लोकगीतों, मुहावरों-कहावतों और कहानियों का प्रचुर भंडार हमारी बोलियों में भरा पड़ा है। संगोष्ठी के दो सत्रों में अनेक शोध-पत्र पढ़े गए। दूसरे सत्र की अध्यक्षता करते हुए डॉ. पद्मावती ने कहा कि ग्राम जीवन प्रकृति के सर्वाधिक निकट होता है। आरंभ में हिंदी विभागाध्यक्ष डॉ. ललिता एन. ने स्वागत भाषण दिया। डॉ. राजलक्ष्मी कृष्णन् ने सरस्वती वंदना प्रस्तुत की। डॉ. अमर ज्योति, प्रो. सारम्मा ने गोष्ठी को संबोधित किया। संचालन विभाग की छात्र-छात्राओं ने किया। विद्यार्थियों ने रंजक लोकनृत्य की आकर्षक झाँकी प्रस्तुत की। आभार प्रो. ललिता एन. ने व्यक्त किया।

□

राष्ट्रीय संगोष्ठी एवं लेखक शिविर संपन्न

१४ से १६ जनवरी तक विद्याश्री न्यास एवं हिंदुस्तानी एकेडेमी, प्रयागराज; साहित्य अकादेमी, नई दिल्ली तथा लाल बहादुर शास्त्री स्नातकोत्तर महाविद्यालय, चंदौली के संयुक्त तत्त्वावधान में श्री धर्मसंघ शिक्षा मंडल सभागार, वाराणसी में 'हिंदी साहित्य का उदयकाल : विन्यास और संवेदनाएँ' विषय पर केंद्रित राष्ट्रीय संगोष्ठी एवं भारतीय लेखक-शिविर का उद्घाटन अध्यक्ष श्री सुरेंद्र दुबे, मुख्य अतिथि डॉ. दयाशंकर मिश्र 'दयालु' एवं विशिष्ट अतिथि प्रो. आनंद कुमार त्यागी, प्रो. रजनीश शुक्ल, श्री अशोक तिवारी एवं प्रो. गिरीश्वर मिश्र के द्वारा हुआ। डॉ. दयानिधि मिश्र ने अतिथियों का भावपूर्ण स्वागत करते हुए संगोष्ठी के लिए चयनित विषय के औचित्य पर भी प्रकाश डाला। इस अवसर पर सम्मानित अतिथियों ने प्रभात प्रकाशन और महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय, वर्धा द्वारा संयुक्त रूप से प्रकाशित 'पं. विद्यानिवास मिश्र रचनावली' (२१ खंड) का लोकार्पण किया। न्यास द्वारा प्रतिवर्ष प्रदान किए जाने वाले सम्मानों के क्रम में 'आचार्य विद्यानिवास मिश्र स्मृति सम्मान' से प्रोफेसर अनंत मिश्र को, 'आचार्य विद्यानिवास मिश्र लोककवि सम्मान' से श्री कमलेश राय को, 'राधिका देवी लोककला सम्मान' से श्री मंगल यादव 'कवि' को, 'श्री कृष्ण तिवारी गीतकार सम्मान' से श्री चंद्रभाल सुकुमार को एवं 'आचार्य विद्यानिवास मिश्र पत्रकारिता सम्मान' से श्री रजनीश त्रिपाठी को उत्तरीय, नारियल, माला, पुस्तक-संच, प्रशस्ति-पत्र, प्रतीक-चिह्न और सम्मान

राशि से सम्मानित किया गया। श्री दयाशंकर मिश्र (दयालु) तथा अन्य वक्ताओं ने विद्याश्री न्यास के विभिन्न उपक्रमों को काशी के साहित्यिक-सांस्कृतिक जीवन की सकारात्मकता के रूप में रेखांकित किया। दूसरा अकादमिक सत्र बीज वक्तव्य के साथ ही सिद्ध, नाथ एवं जैन साहित्य पर केंद्रित था। बीज वक्तव्य के रूप में प्रो. चितरंजन मिश्र तथा सर्वश्री देवेंद्र प्रताप सिंह, सतीश पांडेय, अवधेश शुक्ल, दिनेश पाठक, अनंत मिश्र ने अपने विचार रखे। सत्र का संयोजन प्रो. श्रद्धानंद ने किया। तीसरे सत्र में श्री विश्वास पाटिल की अध्यक्षता में सर्वश्री मनीषा खटाटे, भारती गोरे, विनीता कुमारी, अवधेश प्रधान ने अपने विचार रखे। संचालन डॉ. बिजेंद्र पांडेय ने किया।

चौथा सत्र भोजपुरी-हिंदी के सुप्रसिद्ध, सर्वप्रिय कवि पं. हरिराम द्विवेदी की स्मृति काव्य-संध्या के रूप में प्रो. वशिष्ठ अनूप की अध्यक्षता, मुख्य अतिथि डॉ. जितेंद्रनाथ मिश्र और विशिष्ट अतिथि प्रो. बलिराज पांडेय की उपस्थिति तथा डॉ. अशोक सिंह के संयोजन में संपन्न हुआ। दूसरे दिन की शुरुआत पाँचवें सत्र के रूप में रासो काव्य पर चर्चा हुई। सर्वश्री सत्येंद्र शर्मा, नरेंद्र नारायण राय, वीरेंद्र निर्झर, राम सुधार सिंह, प्रकाश उदय, अंजलि अस्थाना ने अपने भाव प्रकट किए। छठा सत्र प्रो. दिलीप सिंह की अध्यक्षता में पं. विद्यानिवास मिश्र स्मृति व्याख्यान के रूप में आयोजित किया गया। सर्वश्री ब्रजेंद्र कुमार सिंघल, इंदीवर, दिलीप सिंह ने अपने विचार रखे। संयोजन डॉ. रचना शर्मा ने किया। सातवाँ सत्र उदयकाल के विविध आयामों और प्रवृत्तियों पर केंद्रित था। सर्वश्री अशोकनाथ त्रिपाठी, राजेंद्र खटाटे, उमापति दीक्षित, अखिलेश कुमार दुबे, माधवेंद्र पांडेय, उदय प्रताप ने अपने विचार रखे। तीसरे दिन युवा संवाद, पुरस्कार-वितरण एवं समापन-समारोह प्रो. श्रीनिवास पांडेय की अध्यक्षता, मुख्य अतिथि के रूप में प्रो. राजाराम शुक्ल के मुख्य आतिथ्य व डॉ. शशिकला पांडेय के विशिष्ट आतिथ्य में संपन्न हुए। विभिन्न प्रतियोगिताओं के विजयी प्रतिभागियों को मंचस्थ अतिथियों ने पुरस्कृत किया। निबंध-प्रतियोगिता का प्रथम पुरस्कार मदालसा मणि त्रिपाठी (अरुणाचल प्रदेश) को, कविता-प्रतियोगिता का प्रथम पुरस्कार अरुणाचल प्रदेश की ही कागो मादो को तथा द्वितीय और तृतीय पुरस्कार क्रमश: लाल बहादुर शास्त्री महाविद्यालय के क्षितोश्वर और नीतू पटेल को; आलेख-प्रतियोगिता का प्रथम, द्वितीय, तृतीय पुरस्कार क्रमश: इसी महाविद्यालय की नेहा कुमारी, संजना कुमारी और सुषमा चौहान को प्रदान किया गया। पूर्वोत्तर से आए डॉ. आलोक सिंह ने पुष्पदंत के महापुराण पर केंद्रित अपने शोध-आलेख का पाठ किया। सत्र का संयोजन प्रो. इशरत जहाँ ने किया।

□

व्यंग्यकार श्री बी.एल. आच्छा सम्मानित

१८ फरवरी को हैदराबाद में साहित्य गरिमा पुरस्कार समिति, कादंबिनी क्लब हैदराबाद एवं ऑथर्स गिल्ड ऑफ इंडिया के संयुक्त तत्त्वावधान में आयोजित समारोह में प्रसिद्ध व्यंग्यकार श्री बी.एल. आच्छा को 'आचार्य कृष्णदत्त व्यंग्य लेखन पुरस्कार' से सम्मानित किया गया। 'मेघदूत का टी.ए. बिल' व्यंग्य-संग्रह के लिए उन्हें सम्मान निधि, शॉल और स्मृति-चिह्न भेंट किए गए। काव्य, अनुवाद एवं अन्य विधाओं में नौ साहित्यकारों को सम्मानित किया गया। पद्मश्री डॉ. नरसिंहा राव एवं सर्वश्री शुभदा वांजपे, ऋषभदेव शर्मा, अमिता दुबे, अनंत कदम, गंगाधर वानोड़े एवं अहिल्या मिश्रा ने इन सभी साहित्यकारों को सम्मानित किया। इस अवसर पर अनेक साहित्यकारों ने रचना पाठ भी किया।

□

साहित्यिक क्षति

प्रसिद्ध लेखिका डॉ. उषाकिरण खान नहीं रहीं

११ फरवरी को चर्चित लेखिका व पद्मश्री से सम्मानित डॉ. उषाकिरण खान का ७८ वर्ष की आयु में निधन हो गया। उनका जन्म २४ अक्तूबर, १९४५ को दरभंगा जिले के लहेरियासराय गाँव में हुआ था। उनके एक पुत्र व तीन पुत्रियाँ हैं। डॉ. खान बीडी कॉलेज में प्राचीन भारतीय इतिहास और पुरातत्त्व विज्ञान की विभागाध्यक्ष रहीं। उनकी प्रमुख कृतियों में अगन हिंडोला, अड़हुल की वापसी, यायावर रहेगा याद, पानी पर लकीर, फागुन के बाद, सीमांत कथा, गीली पाक, कासवन, दूब धान, जन्म अवधि, कहाँ गए मेरे उगना, हीरा डोम, भामती, सृजनहार, घर से घर तक हैं। २०१५ में उन्हें पद्मश्री पुरस्कार से सम्मानित किया गया था। उन्हें बिहार राष्ट्रभाषा परिषद्, राजभाषा विभाग से महादेवी वर्मा सम्मान, दिनकर राष्ट्रीय सम्मान, साहित्य अकादेमी पुरस्कार समेत कई पुरस्कार प्राप्त हुए। बाल साहित्य व लेखन में भी यश अर्जित किया। उनकी कहानी 'दूब धान' चर्चित पुस्तकों में से एक है। 'हसीना मंजिल' उपन्यास ने उन्हें ख्याति दी। इसका अनुवाद उर्दू सहित अंग्रेजी भाषा में भी हुआ है।

डॉ. बद्रीनारायण तिवारी नहीं रहे

८ फरवरी को हिंदी साहित्य व रामकथा के लिए जीवन भर समर्पित रहे डॉ. बद्रीनारायण तिवारी (संयोजक, मानस संगम) का अवसान हो गया। उन्होंने विश्व भर के रामकथा लेखकों को एक झंडे के नीचे खड़ा कर दिया था। अपने मृदु, कुशल व्यवहार से छोटे-बड़े साहित्यप्रेमी जनों को सम्मान देते हुए जीवन भर साथ बाँधे रखा। उन्होंने राष्ट्रीय एकता और सामाजिक साहित्यिक विषयों पर ८० से अधिक पुस्तकें लिखीं। साहित्य और सामाजिक सेवाओं के लिए उन्हें सम्मानपूर्वक मॉरीशस सरकार ने महर्षि अगस्त्य २००३ सम्मान दिया; उत्तर प्रदेश हिंदी संस्थान का हिंदी सेवा सम्मान, अंतरराष्ट्रीय भारतीय भाषा व संस्कृति फाउंडेशन सागर ने उन्हें सारस्वत सम्मान दिया।

साहित्य अमृत परिवार की ओर से
दिवंगत आत्माओं को भावभीनी श्रद्धांजलि!